मैन्युअल संख्या - 01, 2022

# ग्रामीण कुक्कुट पालन के लिए प्रशिक्षण दिग्दर्शिका

TRAINING MANUAL

सुधांशु शेखर, शिव मंगल प्रसाद, चंचिला कुमारी,
भूपेन्द्र सिंह, मनीष कुमार एवं रूपेश रंजन

**कृषि विज्ञान केन्द्र**

केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग
(भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक, उड़ीसा)
**जयनगर – 825109, कोडरमा (झारखण्ड)**

# ग्रामीण कुक्कुट पालन के लिए प्रशिक्षण दिग्दर्शिका

सुधांशु शेखर, शिव मंगल प्रसाद, चंचिला कुमारी,
भूपेन्द्र सिंह, मनीष कुमार एवं रूपेश रंजन

भा.कृ.अनु.प.
ICAR

## कृषि विज्ञान केन्द्र

केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग
(भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक, उड़ीसा)
**जयनगर – 825109, कोडरमा (झारखण्ड)**

NRRI

**मार्गदर्शन** : निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान कटक,
पिन कोड – 753 006, उड़ीसा

**संकलन एवं आलेख** : डा० सुधांशु शेखर, विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान)
डा० शिव मंगल प्रसाद, प्रधान वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
डा० चंचिला कुमारी, विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
डा० भूपेन्द्र सिंह, विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी)
श्री मनीष कुमार, तकनीकी पदाधिकारी
श्री रूपेश रंजन, तकनीकी पदाधिकारी

**संपादक** : डा० प्रकाश चन्द्र रथ, प्रधान वैज्ञानिक (फसल सुरक्षा विभाग)
डा० राहुल त्रिपाठी, वरिष्ठ वैज्ञानिक (फसल उत्पादन विभाग)

**प्रकाशक** : अध्यक्ष
केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र
पो0 बॉक्स संख्या 48
हजारीबाग, पिन कोड – 825 301, झारखण्ड

**मुद्रित** : 2022

**मुद्रक** : हरिओम प्रेस, अड्डी बंगला,
झुमरी तिलैया, कोडरमा, पिन कोड 825409

**प्रशिक्षण समन्वयक** : डा० सुधांशु शेखर (पशु चिकित्सा विज्ञान)

**प्रशिक्षण सह समन्वयक** : डा० चंचिला कुमारी, विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
डा० भूपेन्द्र सिंह, विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी)
श्री मनीष कुमार, तकनीकी पदाधिकारी
श्री रूपेश रंजन, तकनीकी पदाधिकारी

**तकनीकी सहयोग** : निकिता कुमारी
पंकज कुमार सिंह
संजय कुमार
विजय कुमार खुंटिया
मुकेश राम

# अनुक्रमणिका


| क्रम. सं. | विषय–सूची | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 1. | **कुक्कुट पालन परिचय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट पालन** – डा० शिवमंगल प्रसाद, प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग (झारखण्ड) | 1–2 |
| 2. | **ग्रामीण कुक्कुट पालन (आर.पी.एफ.) के लिए उपलब्ध किस्में** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 3–5 |
| 3. | **हैचरी प्रबंध व्यवस्था** – डा० एस. पी. साहु विभागाध्यक्ष, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 6–9 |
| 4. | **आदर्श कुक्कुट आवास** – डा० रवि रंजन कुमार सिन्हा सहायक प्राध्यापक, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 10–13 |
| 5. | **पठोर एवं अंडा देने वाली मुर्गियों की प्रबंध व्यवस्था** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 14–15 |
| 6. | **कुक्कुटों में प्रकाशीय व्यवस्था तथा उनके अवगुण** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 16–17 |
| 7. | **कुक्कुटों के लिए संतुलित आहार** – डा० संजय कुमार सहायक प्राध्यापक, पशु पोषण विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 18–21 |
| 8. | **कुक्कुटों पर प्रत्याबल (स्ट्रैस) का दुष्प्रभाव एवं निवारण** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 22–27 |
| 9. | **मौसम के अनुसार कुक्कुट की देखभाल** – डा० भूपेन्द्र सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 28–31 |
| 10. | **कुक्कुट पालन का आर्थिक विश्लेषण** – डा० सरोज कुमार रजक सहायक प्राध्यापक, पशु पालन प्रसार शिक्षा विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 32–39 |
| 11. | **कुक्कुटशाला में अभिलेखों का महत्व एवं रखरखाव की जानकारियाँ** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 40–43 |
| 12. | **कुक्कुट शव परीक्षण का व्यवहारिक ज्ञान** – डा० सुधांशु शेखर विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 44–47 |
| 13. | **कुक्कुटों में रानीखेत रोग** – डा० शशि भूषण सुधाकर वरिष्ठ वैज्ञानिक, भा.कृ.अ.प.– राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशुरोग संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश) | 48–53 |
| 14. | **कुक्कुटों में संक्रामक बर्सा रोग या गमबोरो रोग** – डा० दीपक कुमार सहायक प्राध्यापक, पशु व्याधि विज्ञान विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 54–55 |

# अनुक्रमणिका


| क्रम. सं. | विषय–सूची | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 15. | **कुक्कुटों में मैरेक रोग** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 56–57 |
| 16. | **कुक्कुटों में चेचक रोग** – डा० शशि भूषण सुधाकर<br>वरिष्ठ वैज्ञानिक, भा.कृ.अ.प.– राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशुरोग संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश) | 58–59 |
| 17. | **कुक्कुटों में श्वासनाल रोग** – डा० सविता कुमारी<br>सहायक प्राध्यापक, पशु सुक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार) | 60–61 |
| 18. | **कुक्कुटों में हैजा रोग** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 62–63 |
| 19. | **कुक्कुटों में एवियन इन्फ्लूएंजा (बर्ड फ्लू) रोग** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 64–68 |
| 20. | **कुक्कुटों में कॉक्सीडियोसिस रोग** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 69–72 |
| 21. | **कुक्कुटों में गोल कृमि का प्रकोप** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 73–76 |
| 22. | **कुक्कुटों में गठिया रोग** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 77–79 |
| 23. | **कुक्कुटों में रोग फैलने के कारण, नियंत्रण एवं टीकाकरण कार्यक्रम** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 80–82 |
| 24. | **कुक्कुटों में संक्रामक रोगों से बचाव के उपाय** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 83–88 |
| 24. | **आधुनिक बत्तख पालन** – डा० चंचिला कुमारी<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 89–90 |
| 25. | **आधुनिक टर्की पालन** – रुपेश रंजन<br>तकनीकी पदाधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 91–96 |
| 26. | **आधुनिक बटेर पालन** – मनीष कुमार<br>तकनीकी पदाधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 97–107 |
| 27. | **ग्रामीण परिवेश में अंडो का परिरक्षण, भंडारण एवं विपणन** – डा० सुधांशु शेखर<br>विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड) | 108–111 |

# कुक्कुट पालन परिचय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट पालन

**डा० शिव मंगल प्रसाद**
प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग (झारखण्ड)

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ गाँवों की प्रधानता है। जीविकोपार्जन का मुख्य साधन कृषि के साथ–साथ कृषि आधारित व्यवसाय जैसे पशुपालन, कुक्कुट पालन, डेयरी उद्योग, फल उत्पादन, मशरूम उत्पादन इत्यादि हैं। गाँवों की अधिसंख्यक आबादी सीमांत व लघु कृषक अथवा भूमिहीन श्रमिकों की है जिनको गाँव में पर्याप्त रोजगार न होने के कारण शहरों की तरफ पलायन करना पड़ता है। वर्त्तमान आर्थिक परिवेश में खेती के साथ–साथ अन्य व्यवसायों को अपनाना गाँवों के विकास के लिए नितांत आवश्यक है। कुकुकट पालन व्यवसाय ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के बेरोजगार नवयुवकों को रोजगार उपलब्ध कराने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि इस व्यवसाय में बहुत ही कम समय में अधिक आय प्राप्त की जा सकती है। ब्रायलर उत्पादन में दो माह तथा अण्डा उत्पादन में छः माह में आय आनी शुरू हो जाती है। देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए पौष्टिक आहार एवं कुक्कुट उत्पादों की बढ़ती खपत को देखते हुए भविष्य में इसके विकास की अपार संभावनाएं हैं। कुक्कुट उत्पादन के क्षेत्र में तीव्र गति से हो रही वृद्धि से सहज ही कृषि के क्षेत्र में इस व्यवसाय के महत्वपूर्ण योगदान का अंदाजा लगाया जा सकता है। भारतवर्ष आज अण्डा उत्पादन की दृष्टि से विश्व में तीसरे स्थान पर तथा ब्रायलर उत्पादन में पाँचवे स्थान पर है।

वैसे तो कुक्कुट पालन एवं कृषकों का संबंध अत्यन्त पुराना है किंतु इनके द्वारा पाली जाने वाली मुर्गियाँ घर के पिछवाड़े में ही रखी जाती थी। उनके विकास एवं उनके व्यवसायिक रूप के बारे में अधिक ध्यान नहीं गया। कुछ भ्रांतियां एवं संक्रामक रोगों के कारण इसका पर्याप्त विकास नहीं हो सका। इसी कारण कुछ लोग इस व्यवसाय की चर्चा करना भी पसंद नहीं करते हैं। लेकिन आज परिस्थितियां बदल चुकी हैं भ्रांतियाँ दूर हो चुकी हैं तथा बेहतर स्वास्थ्य प्रबंध तथा टीकाकरण से संक्रामक रोगों पर काबू पा लिया गया है। आज यह व्यवसाय अत्यंत तीव्र गति से प्रगति करने वाला एक सफल व्यवसाय है जिससे कि शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही परिवेशों में अत्यंत उपयोगी है।

यद्यपि पिछले चार दशक में इस व्यवसाय ने पूरे भारत में प्रगति की है। किंतु झारखण्ड में कुक्कुट पालन के विकास की गति अत्यंत धीमी रही है। इसका मुख्य कारण लोगों के इस व्यवसाय के प्रति कम आय का होना तथा इस व्यवसाय से संबंधित सुविधाओं का अभाव तथा इस व्यवसाय में पारंगत तकनीकी विशेषज्ञों की कमी है।

अभी तक कुक्कुट पालन शहर एवं इसके आस पास के क्षेत्र में ही प्रगति करा रहा है लेकिन धीरे–धीरे ग्रामीण क्षेत्रों में भी यह व्यवसाय अब तेजी से फैल रहा है। कुक्कुट पालन व्यवसाय एक तरफ तो स्वरोजगार दिलाता ही है दूसरी तरफ इससे प्राप्त अंडे एवं मांस की उच्च गुणवत्ता के कारण मानव आहार में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मुर्गियों से प्राप्त खाद, जिसमें लगभग 2.3–2.6 प्रतिशत नाइट्रोजन 2 प्रतिशत फास्फोरस एवं 1.5 प्रतिशत पोटाश रासायनिक खाद के विकल्प के साथ–साथ जैविक खाद की पूर्ति भी करती है। इसके प्रयोग से फसलों का उत्पादन तो बढ़ाया ही जा सकता है साथ ही लंबे समय तक उत्पादकता के स्तर को बनाये रखा जा सकता है। इस व्यवसाय से परोक्ष एवं अपरोक्ष रूप से कई व्यक्तियों को आंशिक अथवा पूर्ण कालीन रोजगार भी प्राप्त होता है। मुर्गियाँ मनुष्य के लिए अनुपयोगी फसलों के प्रति उत्पाद जैसे पालिश, खल आदि को खाकर पौष्टिक अंडों व मांस का उत्पादन करती है।

**ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गीपालन व्यवसाय के लाभ :**

इसका प्रथम लाभ यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुटशाला बनाने के लिए पर्याप्त सामान व मजदूर आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। और शहरों की अपेक्षा गाँवों में मजदूरी में खर्च भी कम आता है।

इसका दूसरा लाभ यह है कि कुक्कुटशाला बनाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में जमीन आसानी से कम दामों में प्राप्त की जा सकती है जो शहरी क्षेत्रों में प्राप्त करना लगभग असंभव है।

इसका तीसरा लाभ यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि–सह उत्पाद आसानी से व कम कीमत पर उपलब्ध हो जाते हैं। जिससे इनका प्रयोग मुर्गियों के आहार बनाने में आसानी से किया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में किसान हरी घास, सब्जियाँ उगा सकते हैं तथा इस कारण आहार में विटामिन तथा खनिज अलग से देने की कम जरूरत पड़ती है और आहार पर खर्च भी कम ही आता है।

अब यदि सरकार अथवा सहकारी समितियाँ द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गीपालन व्यवसाय को उचित बढ़ावा दे तो, ग्रामीण मुर्गीपालन आसानी से शहरी क्षेत्र के मुर्गीपालकों की बराबरी ही नहीं बल्कि उनसे आगे निकल सकते हैं।

हमारे देश में और मुख्य रूप से झारखण्ड में मुर्गीपालन व्यवसाय अभी व्यवस्थित नहीं है, क्योंकि इससे अनेक साधन जैसे हैचरी, आहार निर्माता इत्यादि। यह व्यवसाय पूर्ण रूप से बिचौलियों के हाथों तक सीमित हैं इसके लिए यह आवश्यक है कि सरकारी संगठनों अथवा सहकारी समितियों का उपयोग एक माध्यम के रूप में किया जाए जिससे बिचौलियों का एकाधिकार समाप्त हो सके तथा मुर्गीपालकों को अधिकतम लाभ मिल सके।

मुर्गीपालन व्यवसाय को यदि ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ावा मिले तो इससे कृषकों को अन्य लाभ भी होंगे। छोटे एवं सीमित आय वाले किसानों को इसके द्वारा सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि उनको रासायनिक खाद पर कम धन खर्च करना पड़ेगा क्योंकि कुक्कुटशालाओं से काफी मात्रा में कार्बनिक पदार्थ प्राप्त हो जाता है, जिसका प्रयोग खाद के रूप में कर सकते हैं। यदि एक कृषक 40 मुर्गियाँ पालता है तो उसको इन मुर्गियों से एक वर्ष में लगभग 1 टन कार्बनिक खाद प्राप्त होता है जो एक एकड़ जमीन के लिए पर्याप्त रहती है। अधिकतर छोटे किसानों के पास एक एकड़ ही जमीन उपलब्ध होती है। अतः 40 मुर्गियाँ पालने पर उसकी खाद की जरूरत पूरी हो जाती है। अन्य रासायनिक खादों की तरह इस कार्बनिक खाद से जमीन की अम्लता अथवा क्षारीयता में वृद्धि नहीं होती है और मिट्टी की संरचना में भी सुधार हो जाता है।

इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि यह ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गीपालन व्यवसाय को बढ़ावा दिया जाए तो इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार बढ़ाया जा सकता है तथा ग्रामीण मजदूरों को पूरे वर्ष व्यस्त रखा जा सकता है। इसके साथ–साथ इस व्यवसाय से संबंधित सभी उद्योग धन्धों का ग्रामीण क्षेत्रों में विकास संभव है तथा उनके द्वारा भी वहाँ रोजगार की अधिक संभावनाएं उपलब्ध होंगी।

अण्डा एक शीघ्र खराब होने वाली वस्तु है अतः बहुत अधिक समय तक इसका भंडारण संभव नहीं है। इसके कारण मुर्गीपालक को अण्डे की उचित कीमत नहीं मिल पाती है। इसके लिए यह अत्यावश्यक है कि शीत भंडारों की क्षमता में वृद्धि की जाय और उनकी संख्या भी बढ़ती जाए जिससे अण्डों का भंडारण उचित अवधि तक किया जा सके। इसका एक दूसरा उपाय यह है कि अण्डा–चूर्ण (अण्डे का पाउडर) बनाने वाले संयंत्रों का तेजी से विकास किया जाए तथा उनसे ग्रामीण क्षेत्रों के मजदूरों को रोजगार मिलने में सहायता मिलेगी तथा किसानों को उनके उत्पादों का उचित लाभ भी प्राप्त हो सकेगा।

यदि मुर्गीपालन वैज्ञानिक तरीके से किया जाये तो इससे मुर्गीपालक को अन्य व्यवसाय की तुलना में अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है। इस व्यवसाय को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण महिलाओं को मुर्गीपालन का उचित प्रशिक्षण दिया जाए तथा इस व्यवसाय से संबंधित सभी विषयों की आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराई जाय। ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों को प्रारंभ में 250 मुर्गियाँ पालन के लिए प्रेरित किया जाये तथा इसी तरह की कई इकाई खुलवाकर सहकारी समिति बनाकर इस व्यवसाय को छोटे स्तर पर आसानी से किया जा सकता है।

○○○○

# ग्रामीण कुक्कुट पालन (आर.पी.एफ) के लिए उपलब्ध किस्में

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

देशी मुर्गी पालन से किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को सुधारने में मदद मिल सकती है क्योंकि यह एक कम निवेश में उच्च मुनाफा देने वाला रोजगार है। यह ग्रामीण आबादी में पोषक तत्वों और प्रोटीन की कमी के समस्या को दूर करने में भी मदद करता है। जब मुर्गी पालन वैज्ञानिक तरीकों के तहत किया जाता है, तो यह उच्च लाभदायक आय देता है। मुर्गी पालन के अच्छे तरीकों के साथ–साथ मुनाफे में लाने के लिए अच्छी मार्केटिंग रणनीतियों की भी आवश्यकता होती है। जो लोग पोल्ट्री फार्म स्थापित करते हैं, वे नियमित रूप से टाई–अप के आधार पर दुकानों या होटलों में चिकेन की आपूर्ति कर सकते हैं और देशी चिकेन की बाजार में मांग में सुधार कर सकते हैं। देशी मुर्गी पालन एक एकीकृत कृषि प्रणाली के एक भाग के रूप में किया जाता है जो किसानों और उनके परिवारों के लिए अतिरिक्त आय का एक स्रोत है। ग्रामीण क्षेत्र में कुक्कुट उत्पादन प्रणाली को उन्नत करने के लिए कुक्कुट शोध संस्थानों के वैज्ञानिक द्वारा ग्रामीण कुक्कुट पालन के लिए विभिन्न अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए मुर्गियों के कई नस्लों को विकसित किया गया है ताकि घर के पिछवाड़े में कुक्कुट पालन के माध्यम से उनकी आमदनी में सुधार हो सके।

**बैकयार्ड पोल्ट्री की कुछ महत्वपूर्ण उन्नत नस्लें :**

**झारसिम** – यह एक दोहरे उद्देश्य अर्थात अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए झारखंड राज्य के लिए उपयुक्त बैकयार्ड पोल्ट्री की किस्म है। इस किस्म का विकास बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड के द्वारा किया गया है। झारसिम नाम झारखंड के झार से लिया गया है और आदिवासी बोली में सिम का अर्थ मुर्गी है। इन पक्षियों में आकर्षक बहुरंगी पंख होते हैं, पोषण के निम्न स्तर पर बेहतर प्रदर्शन करते हैं, तेजी से विकास करते हैं, इष्टतम अंडा उत्पादन और झारखंड की कृषि जलवायु परिस्थितियों के लिए बेहतर अनुकूलन क्षमता रखते हैं। पक्षियों का वजन 6 सप्ताह में 400–500 ग्राम और बैकयार्ड सिस्टम के तहत परिपक्वता पर वजन 1.6–1.8 किलोग्राम होता है। पहले अंडे देने की उम्र 175–180 दिन होती है और 40 सप्ताह की उम्र में अंडे का वजन 52–55 ग्राम होता है। पिछवाड़े प्रणाली के तहत 165–170 अंडे देने की क्षमता होती है। यह किस्म राज्य की ग्रामीण/जनजातीय आबादी को अंडा और मांस दोनों के माध्यम से उच्च पूरक आय और पोषण प्रदान कर सकती है।

**वनराजा** – यह एक दोहरे उद्देश्य अर्थात अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए पोल्ट्री परियोजना निदेशालय, हैदराबाद के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में फ्री रेज पालन के लिए प्रजाति विकसित की गई है। यह बहुवषीय एवं आकर्षक पक्षी है। इसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होने के कारण रोग ग्रस्त होने की संभावना कम होती है। निम्न आहार उपलब्धता पर अच्छी वृद्धि दर प्राप्त होती है। देशी मुर्गी की तुलना में अधिक वृद्धि दर एवं अंडा उत्पादन होता है। वनराजा का मांस स्वादिष्ट एवं कम चर्बी वाला होता है। पंजा एवं पिण्डली लम्बा होने के कारण यह परभक्षी से स्वयं की रक्षा करने में अधिक सक्षम है। वनराजा मुर्गी फ्री रेंज (खुला विचरण) में उत्तम प्रदर्शन करता है। एक दिन के चूजे का वजन 35 से 40 ग्राम होता है एवं 6 सप्ताह में शरीर भार 700 से 850 ग्राम तक हो जाता है। मुर्गियों में अंडा उत्पादन का आरम्भ 175–180 दिन में होने लगता है। अंडे का वजन 55–63 ग्राम होता है। पिछवाड़े प्रणाली के तहत 110–120 अंडे देने की क्षमता होती है।

**ग्रामप्रिया**

ग्रामप्रिया एक बहुरंगी एवं अंडे के उद्देश्य वाली मुर्गी के किस्म है, जिसे मुक्त रेंज (खुला विचरण) और घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन के लिए पोल्ट्री परियोजना निदेशालय, हैदराबाद द्वारा विकसित किया गया है। यह पक्षी देशी मुर्गियों की तुलना में अधिक अंडे

देता है और इसके अंडे भूरे रंग के होते हैं और देशी मुर्गी के अंडे से भारी होते हैं। ग्रामप्रिया मुर्गीयों में प्रतिकूल परिस्थितियों के लिए बेहतर अनुकूलन क्षमता और प्रतिरक्षा क्षमता होती है। 12 सप्ताह में शरीर का वजन 1.2 से 1.5 किलोग्राम के बीच होता है। किसानों के घर के पिछवाड़े पालन करने पर वार्षिक अंडा उत्पादन लगभग 150–160 अंडे तक होता है। नर पक्षी का माँस कोमल होता है और विशेष रूप से तंदूरी एवं ग्रिल चिकेन व्यंजन बनाने के लिए उपयुक्त होता है। न्यूनतम पूरक आहार के साथ फ्री–रेंज परिस्थितियों में पक्षियों के प्रदर्शन को और बढ़ाया जा सकता है।

**कैरी निर्भिक :** यह एक दोहरे उद्देश्य अर्थात अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए भ. कृ. अनु. प. – केंद्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान बरेली द्वारा विकसित नस्ल है। यह कैरी रेड के साथ देशी नस्ल असील का एक क्रॉस है। कैरी निर्भिक बड़े आकार के, उच्च सहनशक्ति और राजसी चाल के साथ प्रकृति में उग्र होते हैं। वे अपने लड़ाकू चरित्रों और सक्रियता के कारण अपने शिकारियों से खुद को बचाने में सक्षम हैं और देश के सभी जलवायु क्षेत्रों के अनुकूल हैं। बैकयार्ड सिस्टम के तहत पालन करने 175–180 दिनों में अंडा उत्पादन आरम्भ करता है एवं वार्षिक अंडा उत्पादन 170–180 अंडे तक होता है। 20 सप्ताह की उम्र में नर पक्षी का वजन 1.7 किलो ग्राम एवं मादा पक्षी का शरीर का वजन 1.5 किलो ग्राम तक हो जाता है।

**कैरी उपकारी :** यह कैरी रेड के साथ भारतीय देशी फ्रिजल की एक क्रॉसब्रीड नस्ल है। यह मध्यम शरीर के आकार के साथ बहुरंगी पक्षी हैं। फ्रोजल पंख (प्लुमेज) होने के कारण इनमे गर्मी को सहन की क्षमता अधिक होती है जिसके कारण उष्णकटिबंधीय एवं शुष्क जलवायु में समायोजित करने में मदद मिलती है। वार्षिक अंडा उत्पादन 180 अंडे है। अंडे का वजन 40 सप्ताह में लगभग 55 ग्राम होता है।

**कैरी देवेंद्र :** यह एक दोहरे उद्देश्य वाला मुर्गी की नस्ल है। यह नर के रूप में सिंथेटिक ब्रॉयलर और मादा के रूप में रोड आइलैंड रेड की क्रॉसब्रीड है। इसमें मध्यम अंडा उत्पादन क्षमता भी है 12 सप्ताह में शरीर का वजन 1800 ग्राम होता है। अंड़ा उत्पादन आरम्भ 160 दिन में होने लगता है। वार्षिक अंडा उत्पादन 200 अंडे है। 40 सप्ताह में अंडे का वजन 54 ग्राम होता है।

**कैरी श्यामा :** यह कड़कनाथ और कैरी रेड की संकर नस्ल है। इस किस्म के आंतरिक अंगों का रंग भी काला होता है और जनजातीय आबादी द्वारा मानव रोगों के इलाज के लिए इसे पसंद किया जाता है। ज्यादातर मध्य प्रदेश, राजस्थान और गुजरात में पाए जाते हैं। 20 सप्ताह में नर का शारीरिक वजन 1460 ग्राम और मादा का शारीरिक वजन 1120 ग्राम होता है। अंडा उत्पादन आरम्भ 170 दिन में होने लगता है। वार्षिक अंडा उत्पादन 200 अंडे है। 40 सप्ताह में अंडे का वजन 53 ग्राम होता है।

**ग्रामीण कुक्कुट पालन (आर.पी.एफ) के लिए उपलब्ध किस्में :**

भारत में ग्रामीण कुक्कुट पालन (आर.पी.एफ) के महत्व को समझने के बाद, कई शोध संस्थानों ने मुर्गियों की विभिन्न किस्मों को विकसित किया है। ग्रामीण कुक्कुट पालन के लिए उपयुक्त मुख्य प्रजातियों को तालिका में दर्शाया गया है।

| क्रम संख्या | नाम | विकसित करने वाला संस्थान | प्रकार |
|---|---|---|---|
| 1. | वनराजा | कुक्कुट शोध निदेशालय, हैदराबाद | अंडा एवं मांस |
| 2. | ग्रामप्रिया | कुक्कुट शोध निदेशालय, हैदराबाद | अंडा |
| 3. | कृष–ब्रो | कुक्कुट शोध निदेशालय, हैदराबाद | मांस |
| 4. | ग्रिराजा | यूएएस, बंगलुरू | अंडा एवं मांस |
| 5. | ग्रिरानी | यू.ए.एस., बंगलुरू | अंडा |
| 6. | कृष्णा–जे. | जे.एन.के.वी.वी., जबलपुर | अंडा |
| 7. | ग्राम लक्ष्मी | के.ऐ.यू., केरला | अंडा |
| 8. | कलिंगा ब्राउन | कुक्कुट शोध निदेशालय, भुवनेश्वर | अंडा |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 9. | कैरी निर्भीक | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा एवं मांस |
| 10. | कैरी देवेन्द्रा | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा एवं मांस |
| 11. | कैरी गोल्ड | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा एवं मांस |
| 12. | कैरी श्यामा | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा |
| 13. | उपकारी | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा एवं मांस |
| 14. | हितकारी | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा |
| 15. | कैरी सोनाली | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | अंडा |
| 16. | कैरी रैन्ब्रो | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | मांस |
| 17. | कैरीब्रो धनराज | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | मांस |
| 18. | कैरीब्रो विशाल | सी.ए.आर.आई., इज्जतनगर | मांस |
| 19. | निशबारी | सी.ए.आर.आई., पोर्टब्लेयेर | अंडा |
| 20. | नंदनम 99 | टी.ए.न.भी.ए.एस.यू. चेन्नई | अंडा |

○○○○

# हैचरी प्रबंध व्यवस्था

**डा० एस. पी. साहु**
विभागाध्यक्ष, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

निषेचित अण्डों से चूजे निकालने की क्रिया को हैचिंग कहते हैं। वह स्थान/भवन जहाँ पर कृत्रिम मशीन (इंकूबेटर व हैचर) द्वारा निषेचित अण्डों से बड़ी संख्या में एक साथ चूजे निकाले जाते हैं, हैचरी कहलाता है। प्रारम्भिक काल में अण्डों से बच्चे निकालने के लिये कुड़क मुर्गियों का प्रयोग होता था। कुड़क मुर्गी लगातार 21 दिनों तक अण्डों में बैठकर उन्हें अपने शरीर की गर्मी प्रदान कर तथा पैरों से अण्डों को उलट पलट कर एक साथ एक बार में करीब 10–15 अण्डे सेती है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में कुड़क मुर्गियों द्वारा थोड़ी संख्या में चूजे निकाले जाते हैं। आज कुक्कुट पालन एक पूर्णतः विकसित उद्योग का रूप से चुका है, जिससे बढ़ती हुई चूजों की मांग को पूरा करने के लिये कृत्रिम रूप से अण्डों से बच्चे निकालना नितांत आवश्यक हो गया है। अतः विभिन्न उपकरणों एवं यंत्रों (ऊष्मायक एवं स्फुटक) की व्यवस्था से वही कृत्रिम वातावरण अण्डों को प्रदान किया जाता है जो कि कुड़क मुर्गियों के द्वारा अण्डों से बच्चे निकालते समय दिया जाता है तथा एक साथ बड़ी संख्या में चूजे निकाले जाते हैं। उत्तम गुणवत्ता वाले बड़ी संख्या में चूजे निकालने के लिए हैचर को साफ सुथरा तथा कीटाणुनाशित कर विभिन्न स्तरों पर पूर्ण सावधानी रखना आवश्यक है।

**अण्डे का चुनाव एवं रख–रखाव :**

अण्डों का वजन 50–60 ग्राम, आकार सही (अण्डाकर) तथा छिलका मजबूत होना चाहिए। साफ अण्डे ही बच्चे निकालने हेतु प्रयोग में लायें। यदि अण्डे थोड़े गंदे हों तो सैड पेपर/स्प्रिट से साफ कर लें। असामान्य तथा हल्का सा टूटा हुआ अण्डा भी छांट देना चाहिए। अण्डे दिन में 3–4 बार एकत्रित करें। एकत्रित करने के बाद'' फार्मेल्डीहाइड गैस द्वारा 20 मिनट तक धूम्रीकरण करें। अण्डों को सदैव स्वच्छ व मजबूत फिलर फ्लैट में थोड़ा भाग ऊपर की ओर रखकर भण्डारण करें। भण्डारण 6 से 10 दिन से अधिक समय तक नहीं करें। अण्डों को 50–55 डिग्री तापमान तथा 80–85 प्रतिशत आपेक्षित आर्दता पर भण्डारण करें अन्यथा चूजा उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

कृत्रिम रूप से चूजा उत्पादन हेतु ऊष्मायन व स्फुटन प्रक्रियायें होती हैं। जब ऊष्मायन व स्फुटन एक ही यंत्र में किया जाता है, तब इस यंत्र को **इंकूबेटर कम हैचर** कहते हैं। ऊष्मायन तथा स्फुटन की क्रिया अलग–अलग यंत्रों में करने से अपेक्षाकृत ज्यादा संख्या में चूजे निकाले जा सकते हैं। अतः वह उपकरण जिसमें ऊष्मायन किया जाता है इंकूबेटर कहलाता है तथा जिसमें स्फुटन होता है, उस उपकरण को हैचर कहते हैं। चिकेन मुर्गी के अण्डों का इंकूबेशन अवधि 21 दिन का होता है अर्थात निषेचित अण्डे से चूजे निकलने में कुल 21 दिन लगते हैं, जिसमें 18 दिन तक चूजे इंकूबेटर में रखे जाते हैं तथा 19वें दिन सुबह उन्हें हैचर में स्थानांतरित कर दिया जाता है। हैचर में सीमानांतरित करने के 3 दिन बाद चूजे बाहर निकाल लिये जाते हैं। अच्छे व बड़ी संख्या में चूजा उत्पादन के लिये अण्डों को इंकूबेटर व हैचर में निम्नांकित वातावरण प्रदान करना अति आवश्यक है।

1. **तापमान :** निषेचित अण्डे के अंदर चूजों के समुचित विकास के लिये 18 दिन तक इंकूबेटर में अण्डों को उपयुक्त तापमान 66.5 डिग्री फै० से 100 डिग्री फै० प्रदान करना चाहिये। आखिर के तीन दिनों तक हैचर में तापमान थोड़ा घटाकर उपयुक्त तापमान 68.5 डिग्री फै० रखें, क्योंकि विकास के अंतिम क्षणों में भ्रूण की चयअपचय क्रियायें बढ़ने से भ्रूण द्वारा भी ऊष्मा का उत्पादन होता है। इंकूबेटर कम हैचर में सदैव (21 दिन तक) एक ही तापमान (66.5 से 100 डिग्री फै०) पर रखा जाता है। तापमान सामान्य से अधिक होने पर भ्रूण मृत्यु दर ज्यादा, छोटे, सुस्त व टेढ़े पैर व टेढ़ी गर्दनयुक्त चूजे पैदा होते हैं, जिनकी भावी शारीरिक वृद्धि व उत्पादन कम होता है। इसके अलावा ज्यादा तापमान होने से चूजे 21 दिन पूरा होने के कुछ दिन पहले ही निकल आते हैं। तापमान सामान्य से कम होने पर चूजे देर से तथा कम संख्या में निकलते है। अतः सदैव आवश्यक

उपयुक्त तापमान बनाये रखें।

2. **आपेक्षित आद्रता :** भ्रूण के विकास व चूजे निकलने के लिए उपयुक्त आपेक्षित आद्रता भी आवश्यक है। इंकूबेटर में 60 प्रतिशत तथा हैचर में 80 प्रतिशत आपेक्षित आद्रता प्रदान करें। आपेक्षित आद्रता आवश्यकता से ज्यादा होने पर गीले, बड़े, सूजे हुए किन्तु कम संख्या में देर से चूजे निकलते हैं, जिनकी गुणवत्ता अच्छी नहीं होती। यदाकदा अण्डे का छिलका चूजों के पंखों पर चिपका हुआ रहता है। आद्रता कम होने से छोटे, सूखे, कड़े तथा कम संख्या में चूजे निकलते हैं। पानी का बहाव नियंत्रित कर उचित आद्रता प्रदान करें।

3. **हवा का आगमन :** इंकूबेटर व हैचर में स्वच्छ हवा का आवागमन पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए। मशीन के अंदर 21 प्रतिशत ऑक्सीजन तथा 0.3 से 0.5 प्रतिशत कार्बनडाई आक्साइड गैस होनी चाहिए। उपयुक्त ऑक्सीजन व कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा में कमी व अधिकता दोनों हानिकारक हैं, किन्तु आक्सीजन की कमी व कार्बनडाई आक्साइड की अधिकता अत्यधिक नुकसानदायक है। अतः हवा का आवागमन पर्याप्त न होने से भ्रूण मृत्यु होने से चूजे कम संख्या में निकलते हैं। अतः मशीन के छेद पर्याप्त खुले रखें।

4. **घुमाना :** अण्डे एक ही जगह स्थिर रखे रहने से भ्रूण के विकासशील शारीरिक भाग अण्डे की झिल्लियों से एक ओर चिपक जाने से भ्रूण का विकास एक तरफा होकर ठीक से विकसीत नहीं होता। भ्रूण की स्थिति असामान्य होने से चूजों की गुणवत्ता ठीक नहीं होती। अतः अण्डों को तीन घण्टे में एक बार या हर घण्टे रोज 18 दिन तक 45 डिग्री एक तरफ तथा 45 डिग्री दूसरी तरफ (कुल 60 डिग्री) घुमाना चाहिए। 18 दिन के बाद अण्डों को घुमाने की आवश्यकता नहीं है।

आजकल उपलब्ध बिजली चालित इंकूबेटर व हैचर में उपर्युक्त सभी आवश्यकतायें स्वचालित रूप से बरकरार रखी जाती हैं। बिजली न रहने की स्थिति में जेनरेटर का प्रयोग करें। सभी आवश्यकतायें उपयुक्त स्तर पर सावधानीपूर्वक बरकरार रखें। उत्तम गुणवत्ता के चूजे उत्पादन के लिये हैचरी को सदैव साफ–सुथरा रखें तथा इंकूबेटर, हैचर तथा सम्पूर्ण हैचरी भवन को कीटाणुनाशित करें। फर्श व अन्य उपकरणों को गर्म पानी में 4 प्रतिशत सोडे के घोल से धोना चाहिए। हैचरी में निकले कचरे जैसे – अंडे के छिलके, अनिषेचित अण्डे, मरे भ्रूण युक्त अण्डे आदि सभी को निकालकर बाहर हैचरी से दूर किसी गड्ढे में डालकर नष्ट करें या फिर इनका **हैचरी बाइप्रोडक्ट मील** बनाकर इनका सदुपयोग करें। हैचरी में बाह्य व्यक्ति का प्रवेश निषेध होना चाहिये। हैचरी में काम करने वालों के कपड़ों को समय–समय पर कीटाणु रहित कराते रहें। समय–समय पर इंकूबेटर व इंकूबेटर कमरे को तथा प्रत्येक दो हैचों के बीच हैचर को कीटाणु रहित करने हेतु 60 ग्राम पोटैशियम परमैगनेट तथा 120 मि०ली० फार्मलीन प्रति 100 घनफीट आयतन के हिसाब से कम से कम 30 मिनट तक फर्मेल्डीहाइड गैस द्वारा धूम्रीकरण करें। हैचरी एकांत में अन्य कुक्कुट गृहों से दूर होनी चाहिए।

**चूजों का रख–रखाव :**

आज कुक्कुट पालन एक पूर्ण विकसित उद्योग का रूप ले चुका है। चूजों को पालने से लेकर अण्डा उत्पादन तक पूर्ण सावधानी आवश्यक है। अधिक अण्डे देने वाली मुर्गियों को तैयार करने के लिए चार तथ्यों को ध्यान में रखना अति आवश्यक है।

1. उत्तम गुणवत्ता वाले नस्ल के चूजे खरीदें।
2. उचित प्रबन्ध व्यवस्था।
3. उत्तम एवं संतुलित आहार।
4. प्रभावशाली रोग नियंत्रण कार्यक्रम।

हैचरी से चूजे 48 घंटे के अन्दर फर्श पर पहुंच जाने चाहिए। हमेशा स्वस्थ चूजे ही स्वीकार करें। ठण्ड या गर्मी से प्रभावित चूजे स्वीकार करना हानिकारक होता है। एक दिन का चूजा प्रारम्भ में बाह्य वातावरण को सहजता से सहन नहीं कर सकता है। अतः उपकरणों की सहायता से वही कृत्रिम वातावरण प्रदान किया जाता है, जो कि एक मुर्गी अपने चूजों को पालते समय देती है।

**तापमान की आवश्यकता :**

प्रारम्भ में चूजों को 35 डिग्री से० तापमान की आवश्यकता होती है। जो कि फर्श से 5 से०मी० ऊपर से दिया जाता है। जैसे–जैसे चूजे बढ़ते हैं उनके पंख विकसित होते हैं, तापमान की आवश्यकता कम होती जाती है। चूजों का ब्रूडर हाउस में वितरण देखकर तापमान का सही निर्णय किया जा सकता है। यदि चूजे ऊष्मा के श्रोत के पास एकत्र हैं, तो तापमान कम है। यदि दूर रहते हैं तो तापमान अधिक है। सही तापमान पर पूरे ब्रूडर हाउस में चूजों का वितरण समान होता है। सामान्यतः ब्रूडर हाउस में निम्न तापमान की आवश्यकता होती है।

| आयु हफ्तों में | तापमान (सें०ग्रे०) |
|---|---|
| 0–1 | 32–35 |
| 1–2 | 30–32 |
| 2–3 | 27–30 |
| 3–4 | 24–27 |
| 4–5 | 21–24 |
| 5–6 | 18–21 |
| 6–7 | 13–18 |

**ऊष्मा का श्रोत :**

ब्रूडर हाउस में उचित तापमान बनाए रखने के लिए बिजली, कैरोसिन ऑयल, गैस, लकड़ी का बुरादा, प्रयोग में लाया जाता है। विद्युत का प्रयोग करना अत्यधिक आसान है। जहाँ पर विद्युत व्यवस्था न हो वहाँ पर अन्य साधन प्रयोग में लाये जाते हैं। लकड़ी का बुरादा जलाने के लिए बुखारी का प्रयोग करते हैं।

**चूजे पालने की विधि :**

1. बैटरी ब्रूडिंग
2. होवर टाइप ब्रूडिंग

1. बैटरी ब्रूडिंग :– इस ढंग से 5–6 हफ्ते तक चूजों को बैटरी में पाला जाता है। उसके बाद चूजों को शेडों में फर्श पर वितरित कर दिया जाता है। प्रति चूजे के लिए बैटरी में 0.063 वर्ग मीटर स्थानों की आवश्यकता होती है। एक बैटरी इकाई सामान्यतः 5 टायरों के समूहों में होती है इसे विद्युत गैस या कैरोसिन ऑयल जलाकर गर्म किया जाता है। दाने व पानी के बर्त्तन प्रत्येक टायर के अन्त में या किनारे पर लगाये जाते हैं जिन कमरों में बैटरी ब्रूडरों को रखा जाता है उसमें 18–20 डिग्री से० तापमान रखते हैं। इस प्रकार चूजों को पालने में कम स्थान की आवश्यकता होती है।
2. होवर टाइप ब्रूडिंग :– होवर पिरामिड के आकार का होता है जिसमें उसे गर्म करने की इकाई लगी होती है इसे ब्रूडर हाउस में रखते हैं। 2 मीटर व्यास वाले होवर में 500 चूजे रखे जा सकते हैं। यह छोटे एवं बड़े दोनों मुर्गी पालकों के लिए उपयोगी है।

**चूजे पालते समय क्या करें?**

1. जिस जगह पर चूजे का पालन करना हो उसे चूजे आने से कई दिन पहले ही साफ–सुथरा एवं जीवाणु रहित कर लेना चाहिए।
2. दाना एवं पानी के बर्त्तन साफ कर लेने चाहिए।
3. चूजे आने से पहले सभी उपकरणों की जाँच कर लें।

4. ब्रूडर हाउस के 'अन्दर 2' मोटा बिछावन डालना चाहिए।
5. चूजे आने से पहले बूडर को 35 डिग्री से० ताप तक गर्म करना चाहिए। ब्रूडर के नीचे उसके आकार के अनुसार ही चूजों को रखें।
6. तापमान का क्षय रोकने एवं चूजों को ऊष्मा श्रोत तक सीमित रखने के लिए होवर गार्ड का इस्तेमाल करना चाहिए। होवर गार्ड के रूप में टिन या गत्ते का प्रयोग किया जा सकता है। चूजों को इकट्ठा होने से बचाने के लिए कोनों को गोल कर दिया जाता है।
7. चूजों को श्वसन रोग एवं शरीर में पानी की कमी से बचाने के लिए आपेक्षित आर्द्रता 40 प्रतिशत से ऊपर रखें।
8. चार हफ्ते तक प्रति 100 चूजों का 4 वर्ग मीटर जगह 5 से०मी० दाने का स्थान 2.5 से०मी० पानी की जगह की आवश्यकता होती है।
9. दाने एवं पानी के बर्त्तन पर्याप्त होने चाहिए एवं एक क्रम में रखने चाहिए।
10. चूजों को पहले 15 घंटे 8 प्रतिशत शक्कर का घोल देना चाहिए। यह प्रथम हफ्ते में होने वाली मृत्यु को 50 प्रतिशत तक कम कर देता है। इसके साथ इलेक्ट्रॉल पाउडर 8–10 ग्राम प्रति लीटर एवं बी–काम्प्लैक्स (15 मिली० प्रति चूजे) तथा विटामिन ए, डी और ई (7 मिली० 100 चूजे की दर से) एटीबायोटिस (टेरामाईसिन) एक हफ्ते तक चूजों को ब्रूडर हाउस में पानी मिलाकर देना चाहिए तथा पहले 3–6 घंटे तक केवल पानी ही दें।
11. ब्रूडर हाउस में उचित हवा का प्रबन्ध होना चाहिए।
12. उसके बाद अखबार बिछाकर चिक फीडिंग ट्रे या अंडे रखने वाली ट्रे पर पहले चिक मैश डालें उसके बाद उसके ऊपर मक्का का महीन दलिया 0.5–0.75 किग्रा प्रति 100 चूजे की दर से छिड़कें एवं बाद में मैश दें।
13. पहले हफ्ते 24 घंटे प्रकाश दें, उसके बाद समुचित प्रकाश कार्यक्रम के अनुसार ही प्रकाश दें। पहले हफ्ते प्रकाश की तीव्रता एक फूट कैडेल रखें।
14. पहले कुछ दिनों चूजों की वृद्धि एवं तापमान का अवश्य ध्यान रखें।
15. यदि 10 दिन तक चूजों की वृद्धि संतोषजनक रहती है तो होवर गार्ड हटा दें।
16. फर्श पर ब्रूडिंग करते समय काक्सीडियोस्टेट दवा का प्रयोग अवश्य करें। समय समय पर कीड़ों की दवाई अवश्य प्रयोग करें।
17. यदि रानीखेत का टीका हैचरी में न लगा हो तो पहले हफ्ते में अवश्य लगा लें। छः हफ्ते की आयु पर रानीखेत रोग का टीका दुबारा दें तथा 8 हफ्ते से 10 हफ्ते तक फाऊल पाक्स (मुर्गी चेचक) का टीका लगवायें।

○○○○

# आदर्श कुक्कुट आवास

**डा० रवि रंजन कुमार सिन्हा**
सहायक प्राध्यापक, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

कुक्कुट आवास से आशय है अण्डा तथा मांस उत्पादन वाले कुक्कुटों को उचित वातावरण की परिस्थितियों में रखने हेतु स्थान का प्रबंधन। पक्षियों को सुरक्षा देने, आराम देने, उत्पादकता के लिए आहार पोषकों के सर्वोत्तम उपयोग के लिए तथा कुक्कुट पालकों को पक्षी समूह को नियंत्रित करने में सुविधा के लिए आवास अत्यंत आवश्यक है।

कुक्कुट आवास के लिए मूल–भूत आवश्यकताओं में तापमान, सापेक्षिक आर्द्रता, आवश्यक न्यूनतम ऑक्सीजन ताकि अधिकतम स्वीकृत कार्बन डाई–आक्साइड (बात–संचार) को बनाए रखने के लिए वायु बदलावों का ध्यान रखना उचित रहता है। हमारे देश में किनारों से खुले कुक्कुट आवास कम खर्च में बहुत लाभदायक सिद्ध हो रहे हैं।

**कुक्कुट आवास निर्माण**

कुक्कुट आवास का निर्माण प्रति पक्षी न्यूनतम लागत के आधार पर किया जाना चाहिए। यह दो तरीके से संभव हो सकता है।

1. अनौचित्यपूर्ण ढंग से अतिरिक्त खर्च करके महंगे कुक्कुट आवास का निर्माण करना।
2. धन तथा प्रारंभिक लागत को बचाने के लिए स्थानीय उपलब्ध भवन निर्माण सामाग्रियों तथा अकुशल मजदूरों का प्रयोग करके कुक्कुट आवास का निर्माण करना।

**कुक्कुट आवास निर्माण करते समय निम्नलिखित तथ्यों को भी ध्यान में रखना अति आवश्यक है।**

1. आवास सड़क के समीप हो।
2. भावी विस्तार की संभावनाएँ हों।
3. जल निकासी का उचित प्रबंध हो।
4. कुक्कुट आवास खुला हो।
5. आवास उचित दिशा में हो।
6. आवासों के बीच निश्चित समान दूरी हो।
7. विपणन हेतु पर्याप्त सुविधा हो।
8. मानव आबादी क्षेत्रों से दूर हो।
9. उस क्षेत्र में बिजली की उपलब्ध हो।

**दिशा :** देश के गर्म भागों में कुक्कुट आवास लम्बाई में पूरब से पश्चिम की दिशा में बनाना चाहिए तथा उसकी साईड की दीवारें उत्तर तथा दक्षिण की ओर होनी चाहिए, जिससे सूर्य की किरणों को घर में प्रवेश से रोका जा सके। देश के ऐसे भागों में जहाँ गर्मी के मौसम में गर्मी तो बहुत नहीं पड़ती परंतु सर्दी अधिक होती है वहाँ पर कुक्कुट आवास दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व दिशाभिमुख बनाया जा सकता है, इससे कुक्कुट आवास में अधिक मात्रा में सूर्य की रोशनी आएगी।

वायु दिशा तथा नाली निर्माण युवा स्टॉक के घरों के आधार पर होनी चाहिए, इससे रोग–नियंत्रण में भी मदद मिलती है। युवा स्टॉक तथा वयस्क स्टॉक के आवासों के बीच दूरी लगभग 150–300 फुट होनी चाहिए। इससे रोगों से बचाव में सहायता होती है।

**चौड़ाई :** किनारों से खुले कुक्कुट आवासों की चौड़ाई 30–32 फुट से अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रायः यह देखा गया है कि अधिक चौड़ाई वाले आवासों में गर्मी के मौसम में अधिक हवा अन्दर जाती है।

**ऊँचाई :** आवास की ऊँचाई नींव से छत तक 8 से 10 फुट तक होनी चाहिए। अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में आवासों की ऊँचाई इससे अधिक रखने पर अन्दर के तापमान को कम किया जा सकता है।

**लम्बाई :** कुक्कुट आवास की लम्बाई भू–भाग के आकार पर निर्भर करती है। आवास की लम्बाई निर्धारित करने के लिए स्वचालित उपकरण का प्रयोग करना चाहिए।

**नींव :** कुक्कुट आवास की नींव का निर्माण निम्न प्रकार से कराना चाहिए।

1. भवन के अनुरूप पर्याप्त ठोस होनी चाहिए।
2. देश के अत्यधिक सर्दी वाले क्षेत्रों में नींव को फूलने से बचाने के लिए गहरा रखना चाहिए।
3. धरातल के पानी को अन्दर जाने से बचाने के लिए नींव का धरातल स्तर पर्याप्त ऊँचा होना चाहिए। नींव की उपरी सतह फर्श की सतह से 6–12 ऊँची होनी चाहिए। इससे गहन बिछावन (डीप लिटर) प्रयोग करने की दिशा में दरवाजे आसानी से खोले और बंद किए जा सकेंगे।

**फर्श :** कुक्कुट आवास हेतु अनेक प्रकार के फर्शो का निर्माण किया जाता है। प्रायः लेयर आवास में निर्मित किये जाने वाले फर्श के आधार पर ही ग्रोवर आवास के फर्श का निर्माण किया जाता है। कुक्कुट आवास में जिस किसी भी प्रकार से फर्श का निर्माण किया जा रहा हो वह नमी–रोधी, दरार मुक्त, आसानी से साफ होने वाला, चूहा–रोधी तथा टिकाउ होना चाहिए।

कुक्कुट पालकों की जानकारी हेतु अनेकों प्रकार से फर्श का निर्माण किया जा सकता है जिनका विवरण नीचे दिया गया है।

(क) **बिछावन युक्त फर्श :** आवास का फर्श, मिट्टी, कंक्रीट, लकड़ी, ईंट, पत्थर स्लैब का बना हो सकता है और सम्पूर्ण फर्श को बिछावन से ढंक दिया जाता है। आवास में पानी के रिसाव को रोकने के लिए फर्श को धरातल से ऊँचा रखना चाहिए। चूहों के आवास के अन्दर प्रवेश को रोकने के लिए पर्याप्त उपाय किये जाने चाहिए। ग्रीष्मकाल में मिट्टी अथवा कंक्रीट से बने फर्श का तापमान उस समय की हवा के तापमान से 15–17° फा० कम हो जाता है तथा मोटा बिछावन बिछाने से फर्श के तापमान में वृद्धि हो जाती है। ऐसे में बिछावन की मोटाई 2'' कम कर देना चाहिए।

(ख) **कंक्रीट से बना फर्श :** यदि सही ढंग से कंक्रीट का फर्श बाया गया है तो वह सूखा, सफाई करने में आसान, टिकाऊ तथा चूहा–रोधी होता है। उपयुक्त ढंग से बिछावन प्रयुक्त फर्श अधिक ठण्डा नहीं होता है। न्यूनतम तापमान वाले क्षेत्रों में कंक्रीट से बना फर्श वायु की अपेक्षा 5 से 7° फा० गर्म हो सकता है।

(ग) **लकड़ी से बना फर्श :** लकड़ी का फर्श सही ढंग से बना हो, इसमें दरारें न हों तथा आसानी से सफाई तथा संक्रमण रहित करने वाला होना चाहिए। कंक्रीट फर्श की तुलना में ऐसा फर्श कम टिकाऊ होता है। साथ ही, यदि इसे धरातल से पर्याप्त उँचाई पर न बनाया गया हो तो वह चूहा–रोधी भी नहीं होता है।

(घ) **ऑल–स्लैट फर्श :** ऑल–लिटर फर्श की अपेक्षा ऑल स्लैट फर्श पर प्रति पक्षी फर्श स्थान की आवश्यकता कम होती है। परन्तु ब्रायलर प्रजनकों को ऑल–स्लैट फर्श पर पालने से खराब संगम के कारण उनकी जनन क्षमता कम हो सकती हैं।

स्लैट 0.5'' से 2.0'' चौड़े हो सकते हैं। यह भवन में स्थान की लम्बाई के अनुसार 1'' का होता है यदि भवन में स्लैट को लंबाई तथा चौड़ाई दोनों ओर से क्रॉस करके रखा जाता है तो पक्षियों को दाना और पानी ग्रहण करने में कठिनाई होती है। स्लैट फर्श को कई भागों में बनाकर लाभदायक बनाया जा सकता है। इससे कुक्कुट आवास की सफाई तथा बीट को उठाने में आसानी होती है। स्लैट्स को आवास के फर्श से 3 फुट की ऊँचाई पर रखा जा सकता है ताकि उसके नीचे कई वर्ष तक बीट एकत्रित होती रहे। स्लैट के चारों ओर तार की जाली लगा देनी चाहिए, जिससे सूखने के लिए उसे अधिक हवा मिल सके यदि खुले हुए घर में स्लैट्स को दीवार के सामने लगाना हो तो स्लैट के नीचे सर्दी के मौसम में चलने वाली हवाओं को रोकने के लिए एक सरकाने वाला परदा अथवा कवर

लगाना आवश्यक है। आजकल ऑल–स्लैट फर्शों का निर्माण गड्ढों के उपर किया जा रहा है, जिसमें बीट गिर कर एकत्र होती रहती है। यह गड्ढा 7 फुट गहरा होता है ताकि आसानी से इसकी सफाई की जा सके।

(ङ) **स्लैट तथा बिछावन फर्श** : इसमें प्रायः फर्श का 60 प्रतिशत स्लैट्स से तथा 40 प्रतिशत भाग बिछावन से ढंका होता है। स्लैट तथा बिछावन वाले फर्श के आवास में पक्षियों को स्लैट्स के प्रयोग के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए। स्लैट्स को आवास के दोनों किनारों के नीचे अथवा बीच से नीचे स्थित करना चाहिए। खुले हुए कुक्कुट आवासों में यदि स्लैट्स आवास के दोनों किनारों पर लगा है तो वर्षा का पानी बिछावन की अपेक्षा स्लैट्स पर गिरेगा। इसके बाद सभी कार्यो को केन्द्रीय बिछावन युक्त क्षेत्र से संभाला जा सकता है।

(च) **स्लोपिंग वायर फर्श** : तार के बीच में दोनों ओर किनारे की ओर ढलान होनी चाहिए। नेस्ट दीवार के सामने रखे होते हैं। फर्श में किनारे की ओर से बीच की तरफ ढाल होनी चाहिए, जहाँ पर नेस्ट रखे जाते हैं। इसमें 14 गेज वेल्डिंग किए गए तार का प्रयोग किया जाता है। कभी–कभी नीचे के भाग में लगे तार की मोटाई 12.5 गेज तक होती है। तार की जाली का आकार 1 और 2 अथवा 1 और 1 इंच का होता है।

उपर्युक्त प्रकार के फर्शो के अतिरिक्त अन्य प्रकार के ठोस फर्शो में ईट तथा स्टोन स्लैब के पत्थर वाले फर्श भी कुक्कुट आवास हेतु बनाये जा सकते हैं।

**किनारे (साइड्स)** : आवास में रखे गये पक्षियों तथा जलवायु की स्थितियों के आधर पर किनारों का खुला होना निर्भर करता है। किनारों के प्रायः आधे से दो तिहाई भाग को खुला रखा जाता है तथा उसे तार की जाली से ढंक दिया जाता है। जिन क्षेत्रों में तापमान लगातार अधिक रहता है वहाँ वायु संचार के लिए दो तिहाई से अधिक भाग को खुला रखा जाता हैं। चूजा गृहों के आधे भाग तथा ग्रोवर एवं लेयर गृहों में लगभग दो तिहाई भाग को खुला छोड़ दिया जाता है। पिंजरा आवासों में पर्याप्त वायु संचार के लिए प्रायः किनारों को खुला छोड़ दिया जाता है। सर्दी के मौसम में सर्दी से बचाव हेतु नीचे तक परदा लटका दिया जाता हैं।

**दीवारें तथा पार्टीसन्स** : छत तथा तेज हवा के झोंकों से बचाव के लिए दीवारें तथा पार्टीसन्स पर्याप्त रूप से ठोस होने चाहिए। आवास निर्माण–सामग्रियों की उपलब्धता, लागत तथा देश के अत्यधिक सर्दी वाले भागों में इंश्युलेशन की आवश्यकता के आधार पर निर्माण सामग्रियों के प्रयोग में व्यापक विभिन्नता होती है।

**छत** : छत को अच्छी प्रकार से तथा नमी रहित बनाना चाहिए। छत की इंश्यूलेशन गर्मी तथा सर्दी दोनों मौसमों में लाभदायक होती है। अधिक से अधिक उष्मा के परावर्तन के लिए छत को परावर्तन पेटों जैसे–एल्युनिनियम पेंट अथवा अवरक्त परावर्तन पेंटों से रंग रोगन कर देना चाहिए।

छप्पर की छत सस्ती तो होती है किन्तु टिकाऊ नहीं होती। यह कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होती है। परन्तु छप्पर की छत कीड़ा–मकोड़ा–रोधी नहीं होती और शीघ्र ही आग पकड़ने वाली होती है। इसे अग्नि–रोधी बनाने के लिए छप्पर के उपर मिट्टी तथा गोबर को गीला कर लेप कर देना चाहिए।

कुक्कुट आवास में पक्षियों के लिए एस्बेस्टस अथवा सीमेंट के बोर्ड की छतें धातु की छतों की तुलना मे अधिक गर्मी का विकिरण नहीं करती हैं। इसलिए कुक्कुट आवास की छतों के लिए अधिक उपयुक्त होती हैं। यद्यपि इंश्यूलेशन का प्रयोग करके, रंग रोगन करके अथवा छप्पर से ढंक कर इनमें और भी सुधार किया जा सकता हैं।

धातु से बनी छतों को जब तक स्वीकृत छत बनाने वाली सामाग्रियों से इंश्युलेशन न किया जाये तब तक वे उष्मा का विकिरण अधिक करती है। इंश्यूलेशन करने के बाद छत को ठण्डा रखने के लिए उसके बाहरी भाग को सफेद पेंट से रंग रोगन कर देना चाहिए।

आवास के अंदर वर्षा के पानी की बौछार को रोकने के लिए परदा गिराने के बाद पर्याप्त वायु–संचार के लिए 3 फुट की परदी

लटकानी चाहिए।

**दरवाजे :** दरवाजे कम से कम 3 फुट चौड़ाई के होने चाहिए जिन्हें प्रतिदिन खोलना चाहिए। छोटे अथवा कम चौड़ाई के दरवाजों से पक्षियों के क्रैटस अथवा आहार द्रोणिकाओं को बाहर ले जाने में कठिनाई होती है।

**इंश्यूलेशन :** छत का इंश्यूलेशन करना ग्रीष्म ऋतु के साथ ही शीत ऋतु में भी लाभदायक होता है। पक्षियों की उत्पादकता पर विभिन्न ऋतुओं के प्रभाव को बचाने हेतु इंश्यूलेशन किया जाता है। इस कार्य के लिए कृषक भाई एल्यूमिनियम फॉयल, खपड़ैल, छप्पर या फूस की छाजन को कुक्कुट आवास की छत पर बिछा सकते हैं।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि यदि किसी फार्म में हैचरी हो तो कुक्कुट आवास की दूरी कम से कम 500–1000 फीट होनी चाहिए। उचित वायु संचार के लिऐ कुक्कुट आवासों के मध्य 20 मीटर की दूरी होनी चाहिए। एक ग्रोवर तथा एक लेयर आवास के बीच 50–100 मीटर की दूरी उचित रहती हैं

○○○○

# पठोर एवं अंडा देने वाली मुर्गियों की प्रबंध व्यवस्था

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

मुर्गियों को लेयर गृह में स्थानान्तरित करने से पूर्व लेयर गृह अच्छी तरह साफ–सफाई पुताई तथा कीटाणुनाशित कर लें। मुर्गियों स्थानांतरित करने से पूर्व उनकी डिवर्मिंग (कृमि नाशक) दवाई पिलायें तथा स्थानान्तरण के बाद करीब 5–7 दिन तक पानी में बी–काम्पलैक्स दवाई दें। डीप लिटर पद्धति में लेयर गृह में मुर्गियों को उनके रहने, दाना खाने तथा पानी पीने हेतु क्रमशः 1.65–2.0 वर्ग फीट, प्रति पक्षी के हिसाब से स्थान उपलब्ध करायें, जबकि पिजड़ा पद्धति में क्रमशः 60–62 वर्ग ईंच (पिजड़े के अन्दर) 3 इंच तथा ऊर्जा 1.5 इंच स्थान प्रदान करें। अंडादेय मुर्गियों को लेयर मैश (18 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन तथा 2600 कि० कैलोरी/प्रति किलोग्राम) दें। मुर्गीयों को ग्रोवर मैश से लेयर मैश में परिवर्तन क्रमशः इस प्रकार मुर्गीयों को करें। 16वें सप्ताह में एक भाग लेयर मैश दें तथा एक भाग ग्रोवर मैश तथा 20वें सप्ताह से सम्पूर्ण लेयर मैश दें। पठोरों की अपेक्षा लेयर के लिये बड़े दाने व पानी के बर्त्तन प्रयोग करें। 3 फीट लम्बे 4–5 लेयर फीडर 100 मुर्गीयों के लिए पर्याप्त होते हैं। मुर्गीयों को दिन में 2–3 बार दाना देना चाहिए। दाना हाथ से कई बार समय–समय पर बिखेरते रहें, जिससे दाने की खपत बढ़ जाती है तथा दाना भी अच्छी तरह से मिल जाता है। दाने–पानी के बर्त्तन कभी खाली नहीं छोड़ें। दाने के बर्त्तन आधे से अधिक नहीं भरें अन्यथा दाने की बर्बादी ज्यादा होती है। मुर्गियों के दाने में शेल ग्रिट का प्रयोग करें। 24 घंटे उन्हें साफ व ताजा पानी उपलब्ध करायें। पानी के बर्त्तनों को अच्छी तरह से साफ करें। दाने व पानी के बर्त्तनों की ऊँचाई साधारणतया मुर्गियों की पूंछ की ऊँचाई के बराबर रखें। डीप लिटर में अंडे देने हेतु पर्याप्त नेस्ट बॉक्स रखें। 10 इंच चौड़ा, 12 इंच गहरा तथा 10 ईंच ऊँचा एक नेस्ट बॉक्स 4–5 मुर्गियों के लिए पर्याप्त होता है। डीप लिटर पद्धति में दिन में कम से कम तीन बार तथा पिजड़ा प्रणाली में दो बार अंडे एकत्रित करें। मुर्गियों की आवश्यकतानुसार 1.5–2.0 माह में नियमित डिवर्मिंग (कृमि नाशक) दवा दें तथा पशु चिकित्सक की सलाह से उचित टीकाकरण करायें। मुर्गियों को रोज 16 घंटे प्रकाश देना चाहिए। प्रारम्भ में बढ़ते क्रम में फिर स्थिर प्रकाश दें। कभी भी घटते क्रम में प्रकाश नहीं दें। मुर्गियों को आवश्यक प्रकाश तीव्रता प्रदान करने हेतु 40 वाट का बल्ब रेफलेक्टर के साथ फर्श से करीब 6–7 फीट की ऊँचाई पर प्रति 100 वर्गफीट के क्षेत्रफल के हिसाब से लगाना चाहिये। 40 वाट की ट्यूब लाइट प्रति 200 वर्गफीट के हिसाब से प्रयोग की जा सकती है। बल्बों की एक पंक्ति में दो बल्बों के बीच की दूरी 10 फीट रखें। बल्बों की पंक्तियों के बीच की दूरी बीचों बीच 10 फीट तथा किनारों पर 5–6 फीट होनी चाहिए। रेफलेक्टर समय–समय पर साफ करें तथा फ्यूज बल्बों को तुरंत बदलें। पिजड़ों में समान प्रकाश उपलब्ध कराने हेतु बल्ब/ट्यूब लाइट पैसेज में लगायें। लिटर को पहले बताई विधि अनुसार सदैव सूखा रखें। पिजड़ा प्रणाली में दुर्गन्ध व मक्खियों की समस्या से बचाव हेतु बीट स्तर पर हवा का आवागमन बढ़ायें, बीट सूखी रखें तथा बीट में समय–समय पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करें।

अंडादेय मुर्गियो के लिए 12.8 डिग्री से 24 डिग्री सेंटीग्रेट का तापमान उपयुक्त होता है। ग्रीष्म ऋतु में वातावरण का तापमान बढ़ने से मुर्गियाँ हाँफने लगती है, दाने की खपत कम हो जाती है तथा पानी की खपत बढ़ जाती है। अंडा उत्पादन कम हो जाता है तथा अंडे के छिलके की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। अतः मुर्गियों को ठण्डा रखने हेतु बोरे के पर्दे लगाकर सिंचाई करें या आवश्यकतानुसार कुक्कुट विशेषज्ञ की परामर्श से फोगर/कूलर/स्प्रिंकलर तथा अन्य प्रबंध करें। इसी तरह वर्षा ऋतु में वातावरण में नमी की मात्रा ज्यादा होती है तथा तापमान भी अक्सर आवश्यकता से ज्यादा होता है। गर्म व नम वातावरण मुर्गियों के लिये सबसे खतरनाक होता है। वर्षा ऋतु में वातावरण में नमी की मात्रा ज्यादा होती है तथा तापमान भी अक्सर आवश्यकता से ज्यादा होता है। गर्म व नम वातावरण मुर्गियों के लिये सबसे खतरनाक होता है। वर्षा ऋतु में लिटर गीला होने, ई०कोलाई, काक्सीडियोसिस तथा फफूँद की बीमारियाँ होने तथा बिजली की कमी होने आदि की समस्याऐं ज्यादा होती है। शीत ऋतु में वातवरण का तापमान आवश्यकता से कम रहता है तथा मुर्गियों की बीट में पेशाब की मात्रा बढ़ जाने से लिटर गीला होने की समस्या बनी रहती है। नये

मक्के में नमी ज्यादा होने से अफलाटाक्सिकोसिस आदि की समस्यायें होती हैं। कोहरा होने से दिन में भी उचित प्रकाश नहीं मिलता। अतः समस्या को ध्यान में रखते हुये विभिन्न ऋतुओं में किसी कुक्कुट पालन विशेषज्ञ से परामर्श कर मुर्गियों का उचित प्रबंध करें। मुर्गियों को ग्रीष्म ऋतु में गर्मी से तथा शीत ऋतु में ठंड से बचायें।

○○○○

# कुक्कुटों में प्रकाशीय व्यवस्था तथा उनके अवगुण

डा० सुधांशु शेखर
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

**प्रकाश व्यवस्था** : पशुधन का कुक्कुट ही एक ऐसा वर्ग है जिसके ऊपर प्रकाश का प्रभाव पड़ता है। प्रकाश उन हारमोन्स के उत्पादन में सहयोग करता है जो कि अंडे के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। यदि प्रकाश की व्यवस्था उचित नहीं है तो विकास तथा अण्डा उत्पादन दोनों पर कुप्रभाव पड़ता है, इसलिए मुर्गियों को उचित अवधि तक प्रकाश अवश्य देना चाहिए। प्रायः यह देखा गया है कि नियंत्रित प्रकाश व्यवस्था से प्रति मुर्गी अंडा उत्पादन लगभग 20–25 अंडे प्रतिवर्ष बढ़ाया जा सकता है। अंडे देने वाली एक मुर्गी के प्रत्येक 4 वर्ग फीट स्थान के लिए 1 वाट का प्रकाश पर्याप्त होता है।

**चूजों के लिए प्रकाश की आवश्यकता** : एक दिन की आयु से 7 दिन तक की आयु के चूजों को 24 घंटे बराबर प्रकाश देते रहना चाहिए। दूसरे सप्ताह में दिन के समय 4 घंटे प्रकाश बन्द कर देना चाहिए इस समय सूर्य की रोशनी का प्रकाश पर्याप्त होता है। तीसरे सप्ताह में दिन के समय 8 घंटे प्रकाश बंद कर देना चाहिए। तीन सप्ताह की आयु से 2 माह की आयु तक रात के समय प्रकाश देना चाहिए। गर्मी के दिनों में एक सप्ताह की आयु के बाद दिन के समय प्रकाश की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

**पठोर मुर्गियों के लिए प्रकाश की आवश्यकता** : दो माह से पाँच माह की आयु की मुर्गियाँ उस समय पाली जा रही है जब दिन की अवधि अधिक होती है तथा रात्रि की अवधि कम होती है। प्रायः गर्मी के दिनों में ऐसा होता है उस समय प्रकाश देने की आवश्यकता नहीं होती है। यदि ऐसे मौसम में रात्रि के समय प्रकाश दे देते हैं तो मुर्गियां कम उम्र में परिपक्व हो जाती हैं। ऐसी मुर्गियों के अंडे का आकार छोटा होता है और अंडे देने की अवधि कम हो जाती है। जननांगों के पूर्ण विकास एवं उचित आयु पर सामान्य आकार के अंडे प्राप्त करने के लिए उचित प्रकाश व्यवस्था अति आवश्यक है। यदि दिन के समय में प्रकाश 12 घंटे से कम हो रहा है तो उस कमी को पूरा कर देना चाहिए जिससे मुर्गियों का विकास ठीक ढंग से हो सके। 8 सप्ताह की आयु के बाद प्रकाश एक दम से कम न करके 3–4 सप्ताह में धीरे–धीरे कम करना चाहिए ताकि मुर्गियों पर इसका बुरा असर न पड़े।

**अंडा देने वाली मुर्गियों के लिए प्रकाश की आवश्यकता** : अंडा देने वाली मुर्गियों को कुल 14 से 16 घंटे तक प्रकाश देना चाहिए। अंडोत्पादन के बाद वाले समय में जब उत्पादन में कमी का अनुभव हो तो प्रकाश 16 से बढ़ाकर 17 या उससे अधिक 18 घंटे किया जा सकता है। इससे ज्यादा प्रकाश देने पर अंडे देने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बल्ब समान दूरी पर तथा 7 फीट की ऊँचाई पर लगाना चाहिए। बल्बों को सप्ताह में एक बाद अवश्य साफ कर देना चाहिए।

**मुर्गियों के अवगुण** : सामान्य मुर्गियों में निम्नलिखित अवगुण पाये जाते हैं।

1. स्वजाति भक्षण
2. अंडे खाना
3. अंडे छुपाना

**स्वजाति भक्षण** : यह बुराई होने पर मुर्गियां दूसरी मुर्गी के पाँव नोचने या खाने लगती है तथा गुदा भाग पर चोंच मारने लगती है। यही नहीं गुदा के समीप स्थित पंख तथा मांस को नोच लेती है जिससे जख्म बन जाता है और दूसरी मुर्गी भी आकर्षित होती है। यह अवगुण प्रायः अधिक अंडा देने वाली मुर्गियों में होता है। यदि मुर्गियों या चूजों के मुँह में खून लग जाय तो उनकी आदत बदलना और मुश्किल हो जाता है। इस बुराई के कारण अधिक अंडा देने वाली मुर्गी मरी हुई पाई जाती है क्योंकि बड़े अंडे के कारण जब कभी–कभी जननांग बाहर निकल जाते हैं तो दूसरी मुर्गियां उन्हें खा जाती हैं और खून ज्यादा निकल जाने के कारण ऐसी मुर्गी मर जाती है। स्वजाति भक्षण रोकथाम के लिए मुर्गीपालक को चाहिए कि वह कुक्कुटशाला में निम्नलिखित दशाओं (बातों) का पता लगायें।

1. दाना एवं पानी वाले बर्त्तनों की संख्या पर्याप्त है या नहीं ?
2. क्या किसी निश्चित समय में मुर्गियों को दाना मिल जाता है या नहीं ?
3. मुर्गी बैठने के लिए अड्डे काफी हैं या नहीं ?
4. क्या मुर्गी पालक को पता है कि रात भर रोशनी देने की आवश्यकता है या नहीं ?
5. क्या अंडों पर अंधेरा रहता है ?
6. क्या दाने में सभी आवश्यक तत्व मौजूद हैं ?
7. क्या कभी दाने का विश्लेषण करा लिया गया है ?
8. कहीं मुर्गियों पर बाह्य परजीवी तो नहीं है ?

**रोकथाम :** उपरोक्त अवगुण की रोकथाम निम्न बातों पर ध्यान रखकर करें –

1. दाने एवं पानी के पर्याप्त बर्त्तन रखियें।
2. कुक्कुटशाला में बहुत भीड़–भाड़ मत होने दीजिए।
3. मुर्गियों के चोंच समय–समय पर काटिए।
4. एक सप्ताह तक दाने में नमक मिलाइये।
5. जख्मी मुर्गी को हटा दीजिए जिससे अन्य मुर्गियां खून का स्वाद न चख सकें।
6. मुर्गियों के बैठने के अंडे पर्याप्त मात्रा में होने दीजिए।
7. दाने का कभी–कभी विश्लेषण अवश्य करायें।

**अंडे खाना :** यह मुर्गियों की एक बहुत बुरी आदत है। इस आदत के होने पर मुर्गियां इस तरह अंडे खा जाती है मानो अंडे दिये ही नहीं गये थे। इसकी रोकथाम के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं –

1. मुर्गियों की चोंच समय–समय पर कटवाएं।
2. दड़बों में अंधेरा नहीं होने दें।
3. अंडे नियमित रूप से और दिन में 5–6 बार इकट्ठे करें

**अंडे छुपाना :** यह खराब आदत संकर नस्ल की मुर्गियों में कम पायी जाती है। अधिक अंडा देने वाली मुर्गियां अंडा नहीं छुपाती है। यदि आप किसी मुर्गी को अंडे छुपाते देखें तो उसे कुक्कुटशाला से हटा देना चाहिए तथा कुछ दिन तक दाना कुछ कम दीजिए। दड़बे में काफी मात्रा में ताजा भूसी डालने से भी यह बुराई रोकी जा सकती है। कभी–कभी मुर्गियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने से भी यह अवगुण पैदा हो जाता है।

○○○○

# कुक्कुटों के लिए संतुलित आहार

**डा० संजय कुमार**
सहायक प्राध्यापक, पशु पोषण विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

कुक्कुट पालन में सबसे अधिक लागत उनके आहार व्यवस्था में आती है जो कि कुल लागत की 70–80 फीसदी तक होती है। अतः कुक्कुट पालकों को समुचित पोषण प्रबंधन की जानकारी आवश्यक है जिससे वे इस कार्य को बेहतर ढंग से कर सकते हैं। और ज्यादा लाभ कमा सकते हैं। अनुमान के आधार पर यह महसूस किया जाता है कि छोटे किसान कुक्कुटों की आहार व्यवस्था, पोषणमान एवं उनकी आवश्यकता के अनुसार संतुलित आहार नहीं दे पाते हैं जबकि बड़े किसान वैज्ञानिकों के द्वारा अनुशंशित पोषणमानों के अनुसार संतुलित आहार की व्यवस्था करते हैं। वस्तुतः संतुलित आहार कुक्कुटों के खाद्य सामग्री के उस मिश्रण को कहते हैं जिसमें सभी आवश्यक पोषण तत्व जैसे ऊर्जा, प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल, वसा, विटामिन एवं खनिज तत्व पर्याप्त मात्रा एवं उचित अनुपात में विद्यमान रहते हैं। साथ में पर्याप्त मात्रा में स्वच्छ पानी की भी आवश्यकता होती है। कुक्कुट पोषण का मुख्य सिद्धान्त यह है कि उन्हें शरीर के जीवन यापन, स्वस्थ रहने तथा मांस एवं अंडा उत्पादन के लिये सभी पोषक तत्व आहार से प्राप्त हो सकें। कुक्कुटों के विभिन्न अवस्थाओं में पोषक तत्वों की आवश्यकता भिन्न–भिन्न होती है।

**कुक्कुट पोषण का सिद्धान्त :**

कुक्कुट पोषण मुख्यतया दो उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया जाता है।

(1) मांस उत्पादन तथा

(2) अंडा उत्पादन हेतु।

मांस उत्पान हेतु जो कुक्कुट पाले जाते हैं उन्हें ब्रॉयलर कहते हैं। तथा अंडा प्राप्त करने हेतु अंडे देने वाली लेयर नस्लें पाली जाती हैं। कुक्कुटों से प्राप्त दोनों ही उत्पाद (मांस एवं अंडे) उच्च गुण वाले मानव भोज्य पदार्थ है। क्योंकि इनमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है और प्रोटीन की गुणवत्ता भी बहुत अच्छी होती है। इन प्रोटीन में मानव पोषण हेतु सभी आवश्यक अमीनों अम्लों की मात्रा एवं अनुपात आदर्श रूप से विद्यमान रहते हैं तथा मानव शरीर की प्रोटीन से काफी समानता होती है। अतः प्रोटीन का उपयोग मानव शरीर में बेहतर ढंग से होता है। मांस एवं अंडे में ऊर्जा, खनिज तत्वों एवं विटामिन्स की मात्रा भी प्रचूर होती है।

कुक्कुट साधारण आहार प्रणाली वाली जीव है तथा इनमें रेशों को पचाने की क्षमता कम होती है। आम तौर पर कुक्कुट का आहार मोटे दानों (मक्का, ज्वार, गेहूं, कोटो कुटकी) दाना सह उत्पादों (चाकर, धान को कोढ़ा एवं अन्य उत्पाद), प्रोटीन श्रोतों (मूंगफली की खली, सोयाबीन–एक्सट्रैक्सन, तिल की खली आदि एवं मछली चूर्ण, खनिज मिश्रण एवं विटामिन्स मिश्रण आदि को मिलाकर बनाया जाता है।

आहार में इन खाद्य पदार्थों की मात्रा एवं अनुपात, कुक्कुटों के प्रकार, (मांस वाली या अंडा वाली) एवं आयु वर्ग के आधार पर मिलाकर संतुलित आहार बनाया जाता है तथा यह संतुलित आहार भरपेट खिलाया जाता है ध्यान रखना आवश्यक है कि कुक्कुट पोषण हेतु उपलब्ध पोषकमानकों के अनुसार ऊर्जा, प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल, वसा, खनिज तत्व एवं विटामिन्स की मात्रा भरपूर एवं उचित अनुपात में रहे। प्रोटीन की गुणवत्ता का विशेष ध्यान देना चाहिए। सामान्यतया आहार में उपस्थित कुल प्रोटीन का 25–30 फीसदी मछली चूर्ण से दिया जाना चाहिये। कुक्कुटों के आहार को स्वादिष्ट पोषक तत्वों से भरपूर तत्व हानिकारक पदार्थ से रहित होना चाहिए। आहार में रेशे की मात्रा 6–10 फीसदी से ज्यादा न हो और अम्ल अघुलनशील राख का प्रतिशत भी 4–6 फीसदी से अधिक न हो। आहार पाचन शील एवं गुणवत्ता वाला होना चाहिए जैसा कि ऊपर बताया गया है कि कुक्कुटों का आहार उनके पालन के मुख्य उद्धेश्य को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

मांस वाली मुर्गियों के लिए दो पकार का आहार मिश्रण तैयार किया जाता है।

अ. बायलर स्टार्टर (0–3 सप्ताह की आयु तक)

ब. ब्रायलर फिनिशर (4 से 6 या 8 सप्ताह तक)

खनिज तत्वों की मात्रा कुक्कुटों के आहार में भरपूर होनी चाहिए जैसे कैल्सियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटेशियम, क्लोरिन, गंधक, तांबा, लोह तत्व, कोबाल्ट, जस्ता, मैगनिज, आयोडीन सोलेनियम, फ्लोरीन एवं मालिब्डेनम आदि। कुछ खनिज तत्व आहार के घटकों ऊर्जा एवं पोटीन श्रोतों में उपलब्ध रहते है। जिनकी मात्रा कम रहती है उनकी पूर्ति के लिये खनिज श्रोतों को मिलाकर खनिज मिश्रण तैयार किया जाता है और आहार में मिलाया जाता है। खनिज मिश्रण में हड्डी का चूर्ण, चूना पत्थर चूर्ण, नमक, डाईकैल्सियम फास्फेट, सीप–घोंघा के टुकड़े, राक फास्फेट एवं अन्य योगिकों के टुकड़ों को मिलाया जाता है। कुक्कुटों के आहार में बसा घुलनशील एवं बी काम्पलैक्स विटामीन का समावेश आवश्यक है। कुछ विटामिन्स आहार घटकों में विद्यमान रहते हैं तथा जिनकी मात्रा कम होती है अथवा अनुपस्थित रहते हैं। उनकी पूर्ति बाजार में उपलब्ध विटामिन्स पूरकों को मिलाकर करना चाहिए। गर्मियों में अधिक तापक्रम होने के कारण विटामिन सी का आहार में मिलाना आवश्यक है। क्योंकि यह गर्मी के स्ट्रेस को कम करती है।

कुक्कुटों के आहार में कुछ अपोषक तत्व भी मिलाये जाते हैं। जिससे कि आहार में उपलब्ध पोषक तत्वों की शरीर में उपयोगिता बढ़ जाती है तथा स्वास्थ एवं उत्पादन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। जीवाणु जनित रोगों की रोकथाम भी हो जाती है। इन पदार्थों में एन्टीबायोटिक, एन्टीआक्सीडेन्ट, एन्टीफंगल दवाइयाँ, काक्सीडियोस्टेट, हारमोन्स, एन्जाइम्स तथा प्रोवायोटिक आदि सम्मिलित हैं।

इसी प्रकार अंडे देने वाले कुक्कुटों के लिए तीन प्रकार का आहार बनाया जाता है जिसमें आवश्यकतानुसार प्रोटीन की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है साथ ही अमीनो अम्ल की मात्रा भी आहार में कम हो जाती है।

अ. चिक स्टार्टर (0–8 सप्ताह तक)

ब. ग्रोवर मैश (8 से 18 सप्ताह तक)

स. लेयर मैश (18 सप्ताह के बाद जब तक अंडा उत्पादन चालू रहता है तब तक)

विभिन्न अवस्थाओं में कुक्कुटों में पोषक तत्वों की आवश्यकता तालिका 1 में दर्शायी गयी है।

**तालिका 1. विभिन्न अवस्थाओं में कुक्कुटों में पोषक तत्वों की आवश्यकता :–**

| पोषक तत्व | अंडे देने वाली प्रजाति के कुक्कुटों के लिए आहार के प्रकार | | | मांस वाली प्रजातियों के कुक्कुटों के लिए आहार के प्रकार | |
|---|---|---|---|---|---|
| | चिक स्टार्टर (0–8 सप्ताह) | ग्रोवर मैश (8–18 सप्ताह) | लेयर मैश (18 सप्ताह के ऊपर) | ब्रायलर स्टार्टर (0–3 सप्ताह) | ब्रायलर फिनिशर (4–6 या 8 सप्ताह) |
| प्रोटीन प्रतिशत | 20 | 16 | 15 | 23–24 | 20–21 |
| उपापचयी ऊर्जा (किलो कैलोरी प्रति किग्रा आहार) | 2700 | 2600 | 2740 | 2600–3000 | 2600–3000 |
| रेशा प्रतिशत | 7 | 8 | 8 | 6 | 6 |
| कैल्सियम प्रतिशत | 1.00 | 0.80 | 3.30 | 1.1–1.2 | 1.0 |
| फास्फोरस प्रतिशत | 0.65 | 0.45 | 0.50 | 0.75 | 0.65 |
| प्रोटीन ऊर्जा अनुपात | 135–140 | 160–165 | 180–160 | 120–130 | 140–150 |

**कुक्कुटों का आहार बनाते समय कुक्कुट पालकों को कुछ बातों का अवश्य ध्यान रखना चाहिए जो कि निम्नानुसार है :**

1. कुक्कुट आहार के घटकों का चुनाव कुक्कुटों की रूचि एवं आवश्यकता को ध्यान में रखकर करना चाहिए।
2. आहार घटकों को पीस / दल कर सही अनुपात में मिलना चाहिए जिससे सभी पोषक तत्वों की मात्रा आहार मिश्रण में भरपूर रहे।
3. फफूँद युक्त खाद्य पदाथों (दाल, खली इत्यादि) का उपयोग कुक्कुट आहार में नहीं करना चाहिए अन्यथा अफ्लाटोक्सिसिस नामक बीमारी हो जाती है जिसका कुप्रभाव स्वास्थ्य एवं उत्पादन पर पड़ता है।
4. कुक्कुट आहार की कीमत ज्यादा न हो इसका ध्यान रखना चाहिए। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध खाद्य पदार्थों का उपयोग कना चाहिए और सस्ते खाद्य पदार्थों (सह उत्पादों) का उपयोग करना चाहिए।
5. सूक्ष्म तत्वों (विटामिन एवं सूक्ष्म खनिज तत्वों को मिलाते समय सावधानी रखनी चाहिए जिससे वे सम्पूर्ण आहार (दाना मिश्रण) में बराबर मिल जाये। इनकी कम या ज्यादा मात्रा नुकसानदायक होती है।
6. ऊर्जा तथा प्रोटीन का अनुपात कुक्कुटों की आयु एवं प्रकार के अनूसार नियंत्रित करना चाहिये। साधारणतया मांस उत्पादन वाली कुक्कुटों में यह अनुपात संकीर्ण होता है जबकि अंडे वाली कुक्कुटों में प्रोटीन की मात्रा ऊर्जा के अनुपात में कम होती है।
7. समय–समय पर कुक्कुट आहार की गुणवत्ता की जांच करानी चाहिए।
8. घटिया आहार से चूजों की बढ़वार एवं अंडा उत्पादन पर बुरा असर पड़ता है अतः संतुलित आहार की व्यवस्था करनी चाहिए।
9. अंडे देने वाली कुक्कुटों के आहार में कैल्सियम की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए जिससे आहार में कैल्सियम की मात्रा 3 प्रतिशत से कम न हो और अच्छे छिक्कलनुमा अंडा पैदा हों।
10. कुक्कुटों के आहार में मछली चूर्ण का उपयोग आवश्यक है।

कुक्कुटों का आहार बनाते समय ध्यान रखा जाता है कि उसमें प्रोटिन ऊर्जा खनिज तत्वों एवं विटामिन्स पूरकों का समावेश हो। सामान्यतया आहार घटकों को निम्नलिखित अनुपात में मिलाना चाहिए :–

| | | |
|---|---|---|
| 1. | ऊर्जा श्रोत | 45–60 भाग |
| 2. | वानस्पतिक प्रोटीन श्रोत | 18–22 भाग |
| 3. | जन्तु प्रोटीन श्रोत | 6–12 भाग |
| 4. | खनिज मिश्रण | 2.5–3.5 भाग |

अपोषक तत्व एवं विटामिन्स 50–100 ग्राम प्रति क्विंटल या आवश्यकतानुसार / अंडे देने के समय कुक्कुटों के आहार में 5 प्रतिशत चूना पत्थर चूर्ण अथवा जीव के टुकड़ें मिलाना आवश्यक है। तालिका 2 में विभिन्न आयु वर्ग के कुक्कुटों के आहार में 5 प्रतिशत चूना पत्थर चूर्ण अथवा जीव के टुकड़े मिलाना आवश्यक है। तालिका 2 में विभिन्न आयु वर्ग के कुक्कुटों के आहार का संघटन का उदाहरण दिया गया है।

तालिका 2 : कुक्कुटों के आहार का संघटन

| आहार घटक | अंडा देने वाली कुक्कुटों के लिए | | | मांस देने वाली कुक्कुटों के लिए | |
|---|---|---|---|---|---|
| | चिक स्टार्टर (0–8 सप्ताह) | ग्रोवर मैश (8–18 सप्ताह) | लेयर मैश (अंडे देने के समय या 18 सप्ताह के बाद) | ब्रायलर स्टार्टर (3–6 या 8 सप्ताह तक) | ब्रायलर फिनिशर (3–6 या 8 सप्ताह) |
| पीली मक्का | 34 | 40 | 40 | 35 | 47 |
| चावल की कनी | 08 | 17 | 10 | 14 | 13 |
| चावल का चोकर | 12 | 20 | 15 | – | – |
| लूसर्न अथवा वर्सीम | 02 | 02 | 03 | – | – |
| घास की पत्ती का | | | | | |
| चूर्ण | | | | | |
| मूंगफली की खली | 22 | 13 | 12 | 18 | 21 |
| तिल का खली | 08 | – | 06 | 06 | 04 |
| मछली का चूर्ण | 12 | 06 | 06 | 14 | 12 |
| अस्थि चूर्ण | 1.3 | 1.4 | 1.8 | 1.1 | 0.64 |
| सीप–घोंघा दिलका के | – | – | 06 | – | – |
| टुकड़े | | | | | |
| नमक (ग्राम) | 500 | 500 | 500 | 500 | 500 |
| विटामिन मिश्रण (ग्राम) | 25 | 25 | 25 | 25 | 25 |
| खनिज मिश्रण (ग्राम) | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 |
| एंटीबायोटिक (ग्राम) | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 |
| काक्सीडियोस्टेट (ग्राम) | 50 | 37.5 | – | 50 | 50 |

तालिका 2 में दर्शाये अनुसार कुक्कुटों के आहार के संघटन में समान गुणवत्ता तथा खाद्य वर्ग के आहार के अन्य घटक भी स्थानीय उपलब्धता के आधार पर मिलाये जा सकते हैं। जैसे मूंगफली की खली के स्थान पर सोयाबीन की खली, चावल के चोकर के स्थान पर गेहूं का चोकर, तथा मक्का के स्थान पर गेहूं, ज्वार, चावल–कनकी आदि मिलाये जा सकते हैं।

○○○○

# कुक्कुटों पर प्रत्याबल (स्ट्रैस) का दुष्प्रभाव एवं निवारण

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

पक्षियों में प्रत्याबल शरीर की वह अवस्था है जब एक या अनेक कारक शरीर की प्राकृतिक क्रियाओं की सीमा/सीमाओं का उल्लंघन करने पर बाध्य हों तथा शरीर की कार्य क्षमता पर दुष्प्रभाव पड़े। प्रायः वही कारक जो ज्यादा मात्रा में स्ट्रैस का कारण बनते हैं थोड़ी मात्रा में यदि बार–बार घटित हों तो पक्षियों में स्ट्रैस को सहन करने या उससे मुकाबला करने की क्षमता बढ़ा देते हैं। ये कारक बहुत प्रकार के हो सकते हैं, जैसे कि विपरीत मौसम (ज्यादा गर्मी या सर्दी एवं हवा में अधिक नमी), आसपास की अवस्था या वातावरण (अधिक तेज रोशनी या पूर्णतया अंधेरा, गीला बिछौना, हवा के आवगमन में अवरोध), शरीर के क्रियाकलाप (बहुत अधिक बढ़ोत्तरी, अतिशीघ्र एवं अत्यधिक अण्डे देने की क्षमता), भौतिक (पक्षियों को पकड़ना, रोकना, टीकाकरण एवं ट्रांसपोर्ट), आपसी तनाव (ज्यादा भीड़,अलग–अलग भार एवं आयु के चूजों को एक दड़बे में रखना), खानपान सम्बन्धित (असंतुलित, प्रदूषित एवं एकदम बदलाव या सीमा से अधिक मात्रा में दाने के किसी भाग को मिलाना), मनोवैज्ञानिक (डर, दुर्व्यवहार) इत्यादि ।

**तालिका : विभिन्न तापक्रमों का कुक्कुटों पर प्रभाव**

| दड़बों का तापमान | प्रभाव |
|---|---|
| 10 डिग्री सेल्सियस से कम | अण्डों के उत्पादन तथा बढ़ोत्तरी में कमी तथा इनके लिए ज्यादा दाने की खपतं। |
| 10 डिग्री से 21 डिग्री सेल्सियस | दाने को अण्डे या मांस में परिवर्तन करने की थोड़ी सी ज्यादा जरूरत, उत्पादन क्षमता अच्छीं। |
| 21 डिग्री से 26 डिग्री सेल्सियस | उत्पादन के लिए दाने को मांस तथा अण्डे में परिवर्तन करने की क्षमता अति उत्तम। |
| 26 डिग्री से 29 डिग्री सेल्सियस | दाने की खपत में थोड़ी कमी अण्डे के आकार तथा गुणवत्ता में कुछ कमी। |
| 29 डिग्री से 32 डिग्री सेल्सियस | खुराक की खपत में और कमी, अण्डों के उत्पादन, आकार तथा गुणवत्ता में गिरावट, दड़वों में तापक्रम को कम करने के उपाय शुरू कर देने चाहिए। |
| 32 डिग्री से 35 डिग्री सेल्सियस | गर्मी से बेतहाशा होकर गिर पड़ने की काफी संभावना, अण्डों के उत्पादन तथा खुराक की खपत में भारी कमी, पानी की खपत में अति वृद्धि, तापमान को काबू में लाने के लिए आपातकालीन कोशिश की जरूरत। |
| 38 डिग्री सेल्सियस से अधिक | इस तापमान पर पक्षियों को जीवित रख पाने की चिन्ता करनी चाहिए, तापमान को काबू पाने के लिए जो भी उपलब्ध तरीके हों तथा अन्य सभी तरीके जो मददगार साबित हों, अवश्य प्रयोग में लाएं। |

**आरामदायक तापक्रम की सीमा को प्रभावित करने वाली स्थितियां –**

1. **शारीरिक क्रियाएं :** जितनी अधिक क्रियाएं होंगी, चाहे कारण कोई भी हो, शरीर में ऊर्जा का उत्पादन अधिक होगा। अतः ज्यादा क्रियाओं से दड़वों में आरामदायक तापमान की ऊपरी सीमा और कम न होने दें अर्थात् यदि पक्षी ज्यादा क्रियाएं करता है तो गर्मी में उसी ताप पर गर्मी का ज्यादा बुरा असर पड़ेगा।

2. **आहार :** जो भी दाना खाया जाता है वह शरीर में पूर्णतया इस्तेमाल नहीं होता। उसके खाने से लेकर शरीर द्वारा प्रयोग में लाने तक काफी मात्रा में ताकत ऊर्जा के रूप में निकलती है, तथा शरीर में गर्मी पैदा होती हैं इसलिए यदि पक्षियों ने खाना खाया हुआ है तो वे ज्यादा तापक्रम सहन नहीं कर पायेंगी जबकि खाली पेट ज्यादा गर्मी सहन कर सकते हैं।

3. **हवा की गति :** हवा की गति से तापक्रम की सीमा (कम्फर्ट जोन) प्रभावित होती है। यदि हवा की गति बढ़ा दी जाए और दड़वों का तापमान शरीर के तापक्रम से कम हो जाए तो आराम की ऊपरी सीमा बढ़ाई जा सकती है। अर्थात् हवा यदि ज्यादा संपर्क में आयेगी तो शरीर से गर्मी ज्यादा निकल पाएगी तथा कुक्कुट ज्यादा तापक्रम सहन कर पायेंगे। परन्तु यदि तापक्रम शरीर के बराबर या अधिक है तो तेज हवा ज्यादा हानिकारक होगी तथा पक्षियों में मृत्यु जल्दी तथा अधिक होगी।

4. **नमी की मात्रा :** तापक्रम के साथ–साथ यदि नमी की मात्रा बढ़ जाती है तो वह ज्यादा हानिकारक सिद्ध होगी, क्योंकि पक्षियों में शरीर की गर्मी श्वास–प्रश्वास की गति बढ़ने तथा फेफड़ों में अधिक वाष्पीकरण से ठण्डक पैदा होने से दूर होती है। इसका प्रभाव जैसे नमी की मात्रा बढ़ती है कम होता चला जाता है। अतः नमी बढ़ने से आरामदायक तापक्रम की ऊपरी सीमा घट जाती है।

5. **पंख की मात्रा :** ज्यादा तथा रंगीन पंख आरामदायक तापक्रम की ऊपरी सीमा घटा देते हैं जबकि पंखों का गिरना शरीर की गर्मी कम करने में सहयोग देता है।

6. **गर्मी का कुक्कुटों पर प्रभाव एवं लक्षण :** गर्मी में पक्षी के शरीर का तापमान बनाए रखने के लिए श्वांस क्रिया तेज चलती है। हालांकि श्वांस गहरे नहीं होते जिससे फेफड़ों में वाष्पीकरण द्वारा ठण्डक उत्पन्न हो, इस श्वांस की तेज प्रक्रिया में कार्बनडाईआक्साइड तथा बाईकार्बोनेट्स की मात्रा शरीर में कम हो जाती है तथा गर्मी में अण्डे के छिलके ज्यादातर पतले होने का यह भी मुख्य कारण है।

7. ज्यादा गर्मी में खून का आवागमन दिमाग में कम हो जाता है तथा दिमाग के तापक्रम को कम रखने की प्रक्रिया पर बुरा प्रभाव पड़ने से इसका तापक्रम बढ़ जाता है जिससे एकदम अचानक हिट स्ट्रोक से मृत्यु हो जाती है।

8. शरीर में प्रत्याबल के समय कुछ ऐसे हार्मोन पैदा होते हैं जोकि शरीर की प्रोटीन को तोड़ते हैं तथा जो यूरिक एसिड एवं अमोनिया के रूप में पेशाब से होती हुई बीट में निकलकर बाहर निकल जाते हैं इनके साथ–साथ कुछ खनिज भी निकल जाते हैं। इनका उत्पादन पर कुप्रभाव पड़ता हैं

9. गर्मी के तनाव से शरीर में बीमारियों से जूझने की क्षमता कम हो जाती है। यदि गर्मी के साथ–साथ नमी की मात्रा अधिक है तो ब्रॉयलरों में कॉक्सीडियोसिस होने की संभावना भी अधिक होती है, जिससे लीवर प्रभावित होता है तथा लीवर में ही जर्दी बनती है। अतः जर्दी की कमी से अण्डे के वजन में भी कमी आ सकती है। यह देखा गया है कि अण्डाणु भी गर्मी में निष्क्रिय हो जाते हैं।

10. गर्मियों में प्रजनन शक्ति भी प्रभावित होती है। भ्रूण बनने के लिए शुक्राणु ही एक डिम्ब (ओवम) के लिए चाहिए। मगर देखा गया है कि गर्मी की वजह से डिम्ब में ज्यादा शुक्राणु को रोकने की क्षमता कम हो जाती है तथा ज्यादा शुक्राणु एक डिम्ब में प्रविष्ट होकर भ्रूण बनने की प्रक्रिया को निष्फल कर देते हैं।

11. बॉयलर, विशेष कर बड़े पक्षी गर्मी से ज्यादा प्रभावित होते हैं। जैसे कि वृद्धि में अवरोध, दाने को मांस में बदलने की क्षमता में गिरावट, चर्बी का अंतड़ियों तथा त्वचा में ज्यादा जमाव, मांस की उपलब्धि में कमी तथा मृत्युदर में बढ़ोत्तरी मुख्यतः देखने को मिलती हैं।

12. पक्षियों में किसी कारण से तनाव उनकी निराशा का कारण बनता है तथा उनकी प्राकृतिक क्रियाओं में विघ्न डालता है जैसे कि नेस्टिंग, अंडासेने, ब्रूडिंग, सैक्स में उदासीनता इत्यादि।

**गर्मी से पक्षियों का बचाव**

**आहार संबंधी उपाय :** खानपान की नियमावली में बदलाव : भोजन शरीर में तापक्रम को बढ़ाता है जिसका प्रभाव मुर्गियों में खाना खाने के कम से कम 3 से 8 घण्टे तक पाया गया है। इसको ध्यान में रखते हुए दिन में ज्यादा गर्मी के समय 10 से 4 बजे तक दाना हटा लें तथा ठण्डा पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराएं। दाने की कमी को पूरा करने के लिए सुबह तथा शाम को प्रकाश देकर दाना डाल देना चाहिए।

खानपान की नियमावली में बदलाव : खाना शरीर में ताप का भार बढ़ाता है जिसका प्रभाव मुर्गियों में खाना खाने के कम से कम 3 से 8 घण्टे तक पाया गया है। इसको ध्यान में रखते हुए दिन में ज्यादा गर्मी के समय 10 से 4 बजे तक दाना हटा लें तथा ठण्डा पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराएं। दाने की कमी को पूरा करने के लिए सुबह तथा शाम को प्रकाष देकर दाना डाल देना चाहिए।

**खुराक के तत्वों की खपत बढ़ाना :** जैसे–जैसे गर्मी बढ़ती है पक्षी खाना कम खाते हैं तथा पानी अधिक पीते हैं। दाने में ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज तथा विटामिनों का घनत्व बढ़ाने से इस कमी को काफी हद तक पूरी कर सकते हैं जिनकी जानकारी निम्नलिखित है।

1. **ऊर्जा :** इस कमी को दाने में तेल या चर्बी को मिलाकर पूरा किया जाता है। इससे एक लाभ और भी है वसा की मात्रा शरीर में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट के मुकाबले कम तापमान बढ़ाती हैं इसके अलावा वसा दाना खाने के बाद उसकी गति धीमी रखती है जिससे खाना पचने की क्रियाओं को ज्यादा समय मिलता है तथा वे दाने का अच्छा उपयोग कर सकती है।
2. **प्रोटीन :** गर्मियों में खुराक में यदि असंतुलित प्रोटीन ज्यादा है तो वह शरीर में तापमान की मात्रा अधिक बढ़ाएगी जिससे ज्यादा नुकसान होने की संभावना बनी रहेगी। इसलिए हमेशा संतुलित प्रोटीन की मात्रा ही बढ़ाएं। आरजीनिन, ल्यूसिन एवं सल्फर एमिनो एसिड, जिनकी दाने में मात्रा कम होती है, गर्मियों में अतिरिक्त मात्राा में मिलाकर संतुलित प्रोटीन की मात्रा दाने में बढ़ाई जा सकती है।
3. **खनिज :** विशेषकर गर्मियों में पोटैशियम की मात्रा मुर्गियों के शरीर से काफी मात्रा में बीट में मिल कर बाहर चली जाती है तथा अन्य खनिज भी खुराक कम खाने के कारण शरीर को कम उपलब्ध होते हैं। कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम, पोटेशियम एवं क्लोराइड की मात्रा 1.5 प्रतिशत हर एक डिग्री सेल्सियस पर 20 डिग्री सेल्सियस से ऊपर होने पर बढ़ा देनी चाहिए।
4. **विटामिन :** पोल्ट्री में दूसरे पशुओं के मुकाबले शरीर में जमा होने वाले विटामिन की जरूरत पर इतना बुरा असर नहीं पड़ता है। लेकिन विटामिन 'सी', जो कि मुर्गी के शरीर में बनता है, गर्मी में इसके बनने की क्षमता काफी कम हो जाती है। अतः गर्मियों में यह विटामिन अवश्य दे देना चाहिए। इससे अण्डों के उत्पादन में गिरावट कम होगी तथा अण्डे की गुणवत्ता भी बेहतर हो जाती है। गर्मी में थाईमीन की भी कमी हो जाती है। इसकी मात्रा 32 डिग्री सेल्सियस पर 21 डिग्री के मुकाबले दोगुनी हो जाती है। कुछ मात्रा विटामिन 'डी' तथा 'ई' की भी बढ़ा देनी चाहिए।
5. **पानी :** गर्मी के साथ–साथ पानी की आवश्यकता भी बढ़ती है। यदि हम ठण्डा पानी उपलब्ध करा पायें तो इससे दाने की खपत में बढ़ोत्तरी होगी तथा पानी की खपत में कमी आएगी। ठण्डा पानी क्रॅप (पेट के आगे का भाग) में जमा हो जाता है और पास से गुजरती हुई खून की नस, जो मस्तिष्क को जाती है, को ठण्डा करता है जिससे काफी हद तक मृत्यु दर कम हो जाती है।

**दड़बों की व्यवस्था में फेर–बदल**

**दड़बों की बनावट :** पोल्ट्री फार्म की दिशा सीधी धूप से बचाने के लिए पूरब–पश्चिम ही रखें। यदि गर्मी की सम्भावना ज्यादा रहती हो तो छत की ऊँचाई ज्यादा रखें। हवा के प्रबन्ध की व्यवस्था पर पूर्ण ध्यान देने चाहिए। यदि आंधी–तूफान आते हों तो उनसे भी बचने का प्रबंध कर लेना चाहिए। छत का छज्जा थोड़ा बाहर रखने से धूप दड़बे में सीधे नहीं पड़ती है। छत तथा दीवार

बनाते समय सामान सस्ता, आसानी से उपलब्ध होने वाले टिकाऊ तथा कुचालक क्षमता का अच्छा होना चाहिए। फर्श भी ऐसा न हो जो ज्यादा गर्मी हजम करके लगातार छोड़ता रहे। खासकर ब्रॉयलर की मुर्गियों के लिए पिंजरों के बजाय बिछौने की व्यवस्था उपयुक्त रहती है।

**छत पर बेल का चढ़ना** : गर्मियों में दबडवों के ऊपर बेल (गेन्दल, बोगन बेलिया इत्यादि) चढ़ाने पर दड़वों के भीतर गर्मी में तापमान काफी कम रहता है। यह भी एक आसान तरीका है जिससे गर्मी से कुछ हद तक बचाव किया जा सकता है।

**छतों पर सफेदी व सफेद पेंट** : रंगीन एवं खुदरी सतह धूप की गर्मी का शोषण अधिक करती है अतः छत का ऊपरी भाग साफ होना चाहिए और सफेदी कर देना चाहिए तथा छत की भीतरी सतह पर काला रंग कर देना चाहिए। 10 किलो बुझा चूना 20 लीटर पानी में घोलकर लगभग 60 वर्ग मीटर के लिए काफी होगा तथा एक मौसम के लिए काफी है। हालांकि सर्दियों में यदि बहुत ज्यादा ठण्ड रहती है तो छत पर काला रंग करना उपयोगी होगा। खर्च का ध्यान रखते हुए यदि सफेदी का प्रभाव ज्यादा समय रखने के उत्सुक हैं तो 10 किलो बुझा हुआ चूना, 25 लीटर पानी में 10 किलो सफेद सीमेन्ट डालकर प्रयोग करना चाहिए। यह मात्रा लगभग 70 वर्ग मीटर के लिए काफी होगी तथा 3 वर्ष तक आराम से काम दे सकती है।

**छत पर पानी का छिड़काव** : छत पर खाली बोरी (गनी बैग) या धान का पुआल डाल कर आपातकालीन स्थिति में पानी का स्प्रिंकलर द्वारा छिड़काव कर देना चाहिए। यदि दड़वे में इससे नमी (70 से 75%) बढ़ जाती है तो इसको बन्द कर देना चाहिए। अत्यधिक गर्मियों में पक्षियों पर ठंडे पानी की बौछार की जा सकती है।

**हवा का प्रबन्ध** : यदि नमी की मात्रा 70% ज्यादा तथा दड़वों का तापक्रम 40 डिग्री सेल्सियस से कम हैं तो दड़वों में हवा प्रवाह बढ़ाना अति उत्तम है क्योंकि इससे बेहतर सिर्फ वतानुकूल व्यवस्था ही है जोकि काफी मंहगी है। यदि सूखी गर्मी है तो कूलर अत्यन्त लाभकारी है। कमरे की चौड़ाई ज्यादा नहीं होनी चाहिए। बेहतर होगा कि पिंजरों की दो लाइन ही हों। ज्यादा चौड़े दड़वों में हवा का पूर्णतय आवगमन नहीं हो पाता है।

**बिछावन की व्यवस्था** : बिछावन की मोटाई तकरीबन 3 ईंच ही रखें तथा उसे समय–समय पर चलाते रहें जिससे कि गर्मी निकलती रहे।

**पंखों का चुनाव** : यह देखा गया है कि बिजली के पंखों की मोटर लगातार गर्मी का कारण बनती हैं। घटिया टाइप के पंखे ज्यादा ऊर्जा पैदा करते हैं । अतः पंखों को खरीदते समय सिर्फ पैसे का ही ध्यान न दें, इस बात को भी सोचें।

**फार्म के आसपास का वतावरण** : पोल्ट्री फार्म के आसपास गर्मी में हरे–भरे पेड़ तथा घास उगा देनी चाहिए। इससे भी ठण्डक बनी रहने में मदद मिलती है।

**प्रकाश कम करना** : अधिक गर्मी में दड़वों में प्रकाश की मात्रा को कम करना भी लाभकारी पाया गया है। दाने की खपत एवं अण्डों की मात्रा पर अच्छा प्रभाव देखा गया है।

**क्रियाएं कम रखें** : गर्मी में पक्षियों को शान्त रहने दें। ज्यादा शोर–शराबे से पक्षियों की क्रियाएं बढ़ेगी, जिससे शरीर में और तापमान पैदा होगा तथा ज्यादा कुप्रभाव पड़ेगा। पक्षियों में हलचल कम रखने के लिए दड़वों में दिन में गर्मी के समय अंधेरा रखें।

**पक्षियों का घनत्व** : गर्मी में पक्षियों को खासकर पानी पीने के लिए अधिक खुली जगह दें। शरीर से उत्पन्न नमी व गर्मी भी दड़वों में प्रत्याबल का काम करती है। इसके अतिरिक्त ज्यादा हवा के प्रवाह में भी रूकावट कम होगी।

**अमोनिया क्लोराइड** : शोध से यह मालूम पड़ा है कि एक प्रतिशत अमोनिया क्लोराइड दाने में मिलाने से ब्रायलरों के शरीर में काफी हद तक गर्मी के कारण बढ़ी श्वांस क्रिया उत्पन्न क्षारीय (रिस्पायेरेटरी–अलक्लेसिस) समस्या का समाधान हो जाता है तथा बढ़ोत्तरी मे काफी लाभकारी सिद्ध हुई है।

**दड़वों में कुछ असुविधाजनक जगह** : यह ध्यान में रखने योग्य बात है कि दड़बों में खासकर ज्यादा चौड़े दड़बों में ऐसी कुछ जगह हो सकती हैं जहां पक्षी उत्पादन कम देते हों तथा दाना भी कम खाते हों। यदि ऐसा है तो हो सकता है वहां पर हवा के

आवागमन में कोई बाधा हो तथा तापक्रम भी उस जगह ज्यादा हो। अतः ऐसी जगहों में हवा का प्रवाह बढ़ाने के प्रति ध्यान दें। ऐसी जगह में पक्षियों की संख्या कम कर दें। यदि कोई दूसरा कारण भी नजर आए तो दूर करने की कोशिश करें।

**ठण्डे पानी का पाइपों से आवागमन** : अनुसंधानों से यह भी पाया गया है कि यदि पाइपों का दड़वों में फैलाव हो तो ठण्डा पानी (5 डिग्री सेल्सियस के लगभग) का बहाव करने से पक्षी उन पर बैठते हैं तथा काफी हद तक शरीर की गर्मी पैरों द्वारा निकल जाती है। आर्थिक स्थिति देखकर ही यह कदम उठाएं।

**कार्बन डाई–आक्साइड की मात्रा बढ़ाना** : अनुसंधान बताते हैं कि कार्बन डाईआक्साइड की थोड़ी सी मात्रा दड़बों में बढ़ाने से पक्षी गहरा श्वांस लेते हैं तथा वाष्पीकरण की क्रिया बढ़ जाती है। पक्षी अपने शरीर का तापमान बढ़ने को अच्छी तरह रोक पाते हैं। इसके साथ–साथ यह भी पाया गया है कि अण्डों के छिलके भी बेहतर जो जाते हैं।

**एस्प्रीन का प्रयोग अप्रभावकारी** : गर्मी की वजह से यदि शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है तथा कुक्कुट पालक एस्प्रीन दवाई गर्मी से राहत दिलाने में देते हैं तो यह सही नहीं हैं अनुसंधानों से यह पाया गया है कि यह दवाई ऐसी हालत में शरीर का तापमान बिल्कुल भी कम नहीं करती है वरन् संक्रामक बीमारी से बढ़े तापमान को नीचे लाने में मदद करती है इसलिए इस भेद को समझें।

**सर्दी से प्रत्याबल** : सर्दी मुर्गियों के लिए गर्मी की अपेक्षा कम हानिकारक है। सर्दी में पक्षी खाना ज्यादा अवश्य खायेंगे तथा दाने को मांस में परिवर्तन करने की क्षमता कम हो जाती है। सर्दी में छोटे चूजे एक–दूसरे पर चढ़कर एकत्रित हो जाते हैं तथा हवा की कमी से मर भी सकते हैं। सर्दी में बाहरी हवा का आवगमन इतना ही होना चाहिए जिससे कि आक्सीजन की जरूरत पूरी हो सके तथा कार्बन डाई–आक्साईड तथा अमोनिया की मात्रा न बढ़े। अमोनिया की महक यदि आपको महसूस हो तो हवा का दड़बों में आवागमन बढ़ा दें। यदि बिछौना गीला हो तो गैसें ज्यादा पैदा होती हैं। इससे कुक्कुटों के आराम तथा उत्पादन दोनों पर बुरा असर पड़ता है। अमोनिया से श्वांस नली पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे श्वांस लेने की गति तथा गहरा श्वांस लेने में दिक्कत होती है। श्वांस नली में बीमारी प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। हालांकि दड़बों को हवादार बनाकर यह समस्या अच्छी तरह से दूर की जा सकती है परन्तु ज्यादा सर्दी में यह नुकसान भी दे सकती हैं। अतः नीचे कुछ तरीके दिए गए हैं जिनसे कुछ सप्ताहों के लिए अमोनिया से छुटकारा पाया जा सकता है।

**पैराफारमलडीहइड द्वारा** : यह पाउडर दानेदार तथा पत्तर ( फूलेटस) के रूप में मिलता है। इसका एक किलोग्राम 5 वर्ग मीटर के बिछौने में मिलाकर करने पर लगभग 21 दिन के लिए अमोनिया की समस्या हल हो जाती है तथा उत्पादन भी कम नहीं होता है।

**सुपर फास्फेट या फास्फोरिक एसिड** : मोनो बेसिक कैल्शिम फास्फेट (सुपर फास्फेट) या फास्फोरिक एसिड बाजार में आराम से मिल जाते हैं, सस्ते हैं तथा अमोनिया को कम करने के साथ–साथ खाद की गुणवत्ता भी बढ़ाते हैं। आधा से एक किलोग्राम सुपर फास्फेट अथवा 2.4 किलोग्राम फास्फोरिक एसिड प्रति वर्ग मीटर बिछौने के लिए काफी होते हैं। यह लगभग दो सप्ताह तक लाभकारी पाया गया है। कुछ दूसरे रासायनिक जैसे कि एसीटिक एसिड, प्रोपायोनिक एसिड, जियोलाइट, सोरबिक एसिड, कैल्शियम प्रोपयोनेट इत्यादि भी प्रयोग में लाए गए हैं परन्तु सभी कुछ सप्ताहों के लिए ही उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

**कुछ अन्य तरह के प्रत्याबल हैं, जो कि कुक्कुट उत्पादन को प्रभावित करते हैं :–**

**परिवहन से प्रत्याबल** : जहाँ तक हो सके कुक्कुटों को गर्मियों में सुबह, शाम या अंधेरे में एक जगह से दूसरी जगह ले जाएं। ले जाने से पहले तथा बाद में दाना–पानी तथा विटामिन की खुराक दे देनी चाहिए। एन्टीबायोटिक भी लाभकारी हो सकते हैं। लम्बी यात्रा में विशेषकर गर्मियों में पानी का प्रबंध होना चाहिए। ले जाने से पहले नींद वर्द्धक दवाइयां भी लाभकारी पाई गई हैं। एक दिन के चूजे अब कभी दूर से आयें तो उसमें पानी तथा खनिज लवणों की कमी आ जाती है। अतः एक भाग नमक तथा नौ भाग ग्लूकोज या चीनी मिला हुआ 50 ग्राम मिश्रण प्रति लीटर पानी में मिलाकर दें। अचानक बदलाव भी तनाव का काम करता है। पक्षी अपनी हर रोज

की आदतों में ढले होते हैं। अचानक दाने में अथवा दाना डालने के समय में, प्रकाश की मात्रा या समय की अवधि में, प्रबंध या प्रबंधक के एकदम बदलाव से भी पक्षियों में डर तथा तनाव पैदा होता है। बदलाव से अपने आपको ढालने के लिए शरीर की कुछ ताकत तो लगानी ही है जो कि दाने से आती है। जितना बदलाव धीमे–धीमे होता है उतना ही बुरा असर कम किया जा सकता है।

**शोर–शराबे से प्रत्याबल :** कुक्कुट कम आवाज से ज्यादा प्रभावित होते हैं। अचानक दरवाजे की आवाज से भी मुर्गियाँ चैक जाती हैं। मुर्गियाँ यदि अण्डे शुरू करने से पहले शोर–शराबे से दूर रखी गयी हों और अण्डे देने के समय यदि शोर–शराबें का सामना करना पड़े तो अण्डों के उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। कोशिश करें पोल्ट्री फार्म शोर–शराब या सड़क से दूर हो।

**दाने या पानी में नमक की अधिकता :** यह देखा गया है कि यदि पानी खारा है और उसमें नमक की मात्रा ज्यादा है अथवा मछली के चूरे में नमक ज्यादा है तो इन अवस्थाओं में अण्डे के छिलके पतले, ज्यादा टूटे हुए तथा इनमें अन्य कमियां देखने को मिलती हैं। यह छिलके का पतलपान कैल्शियम की खुराक में मात्रा बढ़ाने से भी ठीक नहीं होता है। नमक ज्यादा न हो यह जांच कर लें। यदि ज्यादा है तो जो नमक खुराक में उसी हिसाब से कम कर दें। इसके साथ–साथ कुछ अन्य दाने में मिलावटें या घटिया दाना भी शरीर में प्रत्याबल का काम करता है जैसे कि ज्यादा प्रोटीन खिलाने के लिए यूरिया की मिलावट।

**आपसी तनाव से प्रत्याबल :** कुक्कुटों की आयु में असमानता नहीं होना चाहिए। खासकर शुरू की आयु में। वैसे भी यदि एक आयु की पक्षी एक दड़बे में रहते हों तो ताकत के आधार से उनमें एक आपसी सहनूभूति हो जाती है। ज्यादा ताकतवर पक्षी के कार्य में कमजोर विघ्न नहीं डालते । कई बार देखा गया है कि यदि एक दड़बे में ज्यादा मुर्गे हैं उनमें एक ज्यादा ताकतवर है तो वह दूसरे कमजोर मुर्गे को नपुंसक तक बना देता है। अतः बराबर आयु तथा सेहत के मुर्गे की एक दड़बे में मुर्गियों के साथ रखें। बार–बार मुर्गियों की दड़बों में अदला–बदली न करें।

**टीकों से प्रत्याबल :** टीकों से उत्पन्न हुए प्रत्याबल के प्रभाव को कम किया जा सकता है परन्तु बचाया नहीं जा सकता। यह ध्यान रहे कि टीके लगाने के समय दूसरे तनाव न हों। बीमारियों के समय टीके न लगायें। जब पक्षी स्वस्थ हों तभी टीकाकरण करना चाहिए। टीकों की खुराक उचित मात्रा में ही प्रयोग में लायें। टीकों के रखरखाव एवं समाप्ति (एक्सपायरी) की तिथि पर भी अवश्य ध्यान दें।

**चोंच काटने के समय तनाव :** जहाँ तक हो सके दूसरे तनाव इस समय न हों। इससे पहले 'एन्टीबायोटिक' पानी तथा आहार में दे देना चाहिए।

**परजीवी, कीड़े तथा चूहे आदि :** इनका प्रकोप गर्मी तथा वर्षा के मौसम में अधिक होता है तथा उत्पादन पर बुरा असर पड़ता है। इसलिए आम उन्मूलन के उपाय प्रयोग में लाकर कुक्कुटों में इनसे होने वाले तनाव से बचाकर उत्पादन में कमी न होने दें।

**ज्यादा दवाइयाँ भी प्रत्याबल के लिए जिम्मेदार :** पेट की कीड़े मारने वाली दवाइयां शरीर पर बुरा असर डालती हैं। इसी प्रकार सल्फा ड्रग भी शरीर को प्रभावित करते हैं। गर्मी के मौसम में खासकर पानी में मिलाकर देने वाली दवाईयों की मात्रा ज्यादा पानी पीने की वजह से अधिक न हो इसका ध्यान देना चाहिए। एन्टीबायोटिक की आम मात्रा से कोई तनाव नहीं होता, परन्तु इनके खाने से कुक्कुटों के शरीर में बनने वाली विटामिन (विटामिन 'सी' एवं 'के') प्रभावित होते हैं। अतः इनकी मात्रा भी साथ में दे सकते हैं। एन्टीबायोटिक अंतड़ियों के कीटाणुओं को काबू में लाते हैं मगर मोल्ड तथा ईस्ट को नहीं रोकते। जिससे कि अंतड़ियों के रोग होने की सम्भावना बनी रहती है।

उपरोक्त बातों का ध्यान रखते हुए कुक्कुट पालाकों को चाहिए कि वे स्वयं उन कारकों का ध्यान रखें जो उत्पादन में गिरावट का कारण बनते हैं तथा कौन से कारक को काबू में लाने के लिए उनके पास कौन सा सस्ता, सरल एवं टिकाऊ उपाय हैं। उनका अपना अनुभव, भविष्य में ज्यादा विश्वास पैदा करने, अधिक लाभ प्रदान करने तथा प्रदर्शक में मुख्य सूत्रधार का कार्य करेगा।

○○○○

# मौसम के अनुसार कुक्कुटों की देखभाल

**डा० भूपेन्द्र सिंह**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

कुक्कुट पालन में अलग–अलग मौसमों का कुक्कुट की उत्पादकता पर काफी असर पड़ता है जिस पर ध्यान न देने से मुर्गी पालक को आर्थिक हानि उठानी पड़ सकती है। किसान भाई विभिन्न मौसमों अर्थात् गर्मी, बरसात तथा सर्दी में निम्नलिखित सावधानियां अपनाकर अपनी मुर्गियों को इन मौसमों के प्रकोप से बचाये रखने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

**गर्मी में कुक्कुट प्रबन्ध**

मुर्गियों को उनकी आवश्यकतानुसार आवास में सभी साधन प्राप्त होना चाहिए, जिससे मुर्गियों से अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके तथा उन पर वातावरण की गर्मी का प्रभाव कम पड़े। मुर्गियों पर वातावरण की गर्मी, सूर्य की किरणों, परावर्तित किरणों, वर्षा तथा हवा के दबाव का प्रभाव गर्म मौसम में पड़ता है जिससे सावधान रहना चाहिए। मुर्गी के अन्दर की 70 प्रतिशत गर्मी रेडियेसन, कन्डक्सन, कन्वेक्सन से बाहर आती है। जब वातावरण में नमी ज्यादा हो जाती है तो मुर्गी की साँस द्वारा आई नमी को वातावरण शोषित नहीं कर सकते जिससे मुर्गी की साँस की गति तेज हो जाती है। मुर्गियों को गर्मी के प्रभाव से बचाव के लिए निम्नलिखित विशेष प्रबन्ध करने पड़ते हैं :–

**(क) आवास का प्रबन्ध**

1. आवास की लंबाई पूर्व व पश्चिम दिशा में होना चाहिए जिससे सूर्य की किरणें कम पड़ें।
2. आवास में हवा के उचित आवागमन हेतु छत की ऊँचाई निश्चित होना चाहिए। आवास दोनों तरफ से खुला होना चाहिए। ईट की दीवार की ऊँचाई कम होनी चाहिए।
3. आवास की छत पर बाहर से सफेदी कर देना चाहिए।
4. आवास की छत के लिए ऊष्मा के कुचालक सीट का प्रयोग करना चाहिए।
5. आवास की छत पर छप्पर रख देना चाहिए।
6. आवास की छत दोनों तरफ कम से कम 3 फीट बाहर निकली होनी चाहिए।
7. छत पर पानी के छिड़काव से अन्दर का तापक्रम 5 से 10 डिग्री फारेनहाइट कम हो जाता है।
8. आवास के बीच में पेड़ लगाना लाभदायक है।
9. आवास के बीच में हरा लॉन बनाना लाभदायक होता है।
10. आवास की छत पर हरी लतायें चढ़ा देनी चाहिए।
11. आवास के दोनों तरफ बोरी के पर्दे लगा देना चाहिए जिन पर दिन में पानी का छिड़काव करना लाभदायक है।
12. आवास की छत से बिजली के पंखे लगाना चाहिए तथा एक्जॉस्ट पंखों का प्रयोग किया जाना चाहिए। अधिक गर्मी में कूलर का प्रयोग करना उचित रहता है।
13. मुर्गियों को गर्म मौसम में अधिक स्थान प्रदान करना आवश्यक होता है।

## (ख) बिछावन का प्रबन्ध

1. बिछावन को समय–समय पर उलटते रहना चाहिए जिससे बिछावन में ढेले न पड़ें।
2. बिछावन ज्यादा धूलित नहीं होना चाहिए अन्यथा मुर्गियों को साँस की बीमारी हो जाती है।

3. बिछावन की मोटाई 2–3 ईंच रखनी चाहिए।
4. बिछावन को आवश्यकतानुसार बदलते रहना चाहिए क्योंकि बिछावन से काफी गर्मी व गैस बनती है। बिछावन में उत्पन्न अमोनिया गैस से मुर्गियों की वृद्धि तथा उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

## (ख) जल का प्रबन्ध

1. मुर्गियों की आवश्यकतानुसार पानी कम से कम चार बार देना चाहिए। पानी के बर्त्तनों की संख्या बढ़ाना लाभदायक होता है।
2. मुर्गियों को स्वच्छ व ठण्डा पानी देना चाहिए।
3. मुर्गियों को 45 से 80 डिग्री फारेनहाइट के तापमान का पानी अच्छा होता है। पानी का तापक्रम कमरे के तापक्रम से कम होना चाहिए।
4. सामान्यतया मुर्गियों को दो लीटर पानी प्रति किग्रा० दाने पर आवश्यक होता है।
5. मुर्गियों की पानी आवश्यकता प्रति डिग्री तापक्रम बढ़ने पर 4 प्रतिशत बढ़ जाती है।
6. सामान्तया दाना व पानी की खपत का अनुपात 1:2 रहता है लेकिन यदि तापक्रम 65 डिग्री फारेनहाइट से ज्यादा हो जाये तो यह अनुपात 1:4 से ज्यादा हो जाता है।
7. मिट्टी के बर्त्तन में पानी देना अधिक लाभदायक होता है।
8. समय–समय पर पानी का भी निरीक्षण करना चाहिए। पानी का शुद्धिकरण ब्लीचिंग पाउडर से करना चाहिए।
9. अण्डे वाली मुर्गी को आमतौर पर 250 मि० लीटर पानी के स्थान पर आधे से 1 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।
10. पानी वाली पाइप लाइन पर सफेदी करना तथा टेंकर पर बोरे का टुकड़ा लपेट देना अच्छा रहता है।
11. पानी में शीरा या गुड़ मिलाना लाभदायक होता है।
12. अगर पीने का पानी कुँआ से लाया जा रहा है तो पूरे दिन का पानी एक बार लें जिससे पानी साफ प्राप्त होगा।

## (घ) आहार का प्रबन्ध

1. दाने को पानी से गीला कर मुर्गियों को देना चाहिए। पानी दाने के बर्त्तन में नहीं मिलाना चाहिए। दाने में आवश्यक पानी अलग मिलाकर दें। दाने के बर्त्तन में भींगा दाना शेष नहीं देना चाहिए अन्यथा फफूँद का संदूषण हो जायेगा जिससे कुक्कट उत्पादन का हानिकारक प्रभाव पड़ेगा।
2. दाने के बर्त्तन में 3–4 बार देना चाहिये तथा हाथ से मिलाना चाहिए।
3. मुर्गियों को गर्मी में दाना पैलेट के रूप में देना लाभदायक होता है जिससे उनकी आहार ग्रहण क्षमता बढ़ जाती है साथ ही आहार का नुकसान भी कम होता है।
4. आहार दिन के ठण्डे समय जैसे सुबह या शाम को देना चाहिए।
5. सुबह के समय कुछ अतिरिक्त प्रकाश देने से लाभ होता है।
6. जैसे–जैसे तापक्रम बढ़ता है मुर्गी की ऊर्जा की आवश्यकता कम हो जाती है। अतः दाने मे ंअन्य पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ा देना चाहिए।

### बरसात में कुक्कुट प्रबन्ध

मुर्गी घर की छत में अगर सूराख हों तो उन्हें बन्द कर दें। छत पर डामर (कोलतार) का पेन्ट कर देने से छत के छोटे छिद्र

तथा सीलन आदि समाप्त हो जाते हैं। मकान के चारों ओर बने छज्जों के उस ओर, जिधर से बारिश की बौछार हो रही हो, छज्जों से मिलाकर चिक तथा पर्दा डालें जिससे पानी की बौछार मकान के अन्दर न जाये। कभी भी जाली के ऊपरी बोरी का पर्दा नहीं लगाना चाहिए।

बरसात के दिनों में नमी के कारण बिछावन गीला हो जाता है ऐसे समय मुर्गियों को आधा वर्ग फीट अधिक स्थान देना चाहिए तथा बिछावन की गहराई भी अधिक बढ़ा देना उत्तम रहता है। अगर फिर भी बिछावन गीला हो जाता है तो 10 मुर्गियों पर एक किग्रा0 चूना बिछावन में मिला दें। पक्के मकानों में हर दो दिन में एक बार बिछावन को अवश्य उलट–पुलट कर देना चाहिए जिससे नमी निकल जाये। बिछावन के वह हिस्से जो केक अथवा पत्थर की तरह सख्त हो गये हों उन्हें उठाकर बाहर फिकवा दें नहीं तो उसमें कीड़े पड़ जाते हैं। दो तीन इंच सूखा रेत फर्श पर डालकर उस पर बिछावन बिछाने से जमीन की नमी से बिछावन गीला नही हो पाता। पानी के बर्त्तन जिस जगह रखें हो उनके नीचे दो चार ईंटें बिछा दें तथा उन पर पालिथीन या एसबेस्टस की शीट डाल दें। ऐसा करने से पानी बिछावन पर नहीं गिरेगा।

अक्सरा देखा गया है कि बरसात के मौसम में मुर्गी के दाने में प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं जैसे मूँगफली की खली तथा मक्का आदि में फफूँद (फंगस) हो जाती है। फफूँद से एक जहरीली चीज निकलती है जिसे एफलाटॉक्सिन कहते हैं। इससे प्रभावित दानों के प्रयोग से मुर्गी की मृत्यु तक हो जाती है। इसके बचाव के लिए आवश्यक है कि दाना बनाने के लिए हमेशा सूखा तथा अच्छा अनाज ही खरीदें, फफूँद वाले सामान को कभी प्रयोग न करें तथा एक बार बनाया दाना दस दिन के अन्दर अवश्य इस्तेमाल में ले आयें। अनाज या मुर्गी के दाने का भण्डारण जिस जगह किया जाये उस जगह लकड़ी के पटरे बिछाकर ही अनाज अथवा दाने को रखें जिससे अनाज को जमीन की सीलन से बचाया जा सके।

बरसात के मौसम में मक्खी बहुत बढ़ जाती हैं। मक्खी मुर्गी को परेशान ही नहीं करती अपितु बीमारी फैलाने में भी मदद करती हैं। मक्खियों से बचाव के लिए मुर्गीघर के चारों ओर मैलाथियान का छिड़काव करवा देना चाहिये इससे मक्खियों के प्रकोप से मुर्गियों को बचाया जा सकता है। बरसात के मौसम में मुर्गियों में एसकेरिस (पेट के कीड़े) भी बहुत जल्दी बढ़ते हैं। इनसे बचाव के लिये मुर्गियों को शाम के समय पाइपरेजिन औषधि देना उत्तम रहता है। इस मौसम में मुर्गियों को होने वाली पेचिस (दस्त) से बचाव के लिये आवश्यक है कि मुर्गियों को केवल टयूबवैल या हैण्डपम्प का पानी ही पीने को दिया जाये। इसके अलावा कभी–कभी मुर्गियों को इस मौसम में खूनी पेचिस (काक्सीडियोसिस) भी हो जाती है। इससे बचाव के लिए सल्फर दवाइयां तथा नाइट्रोफुरजान जैसी दवाईयाँ देना ठीक रहता है। इस दवा को देने से पहले मुर्गियों की बीट की जांच अवश्य कर लेनी चाहिए।

अगर मुर्गी पिंजरा पद्धति में पाली जा रही है तो कुछ अन्य प्रमुख बातें ध्यान रखना आवश्यक हैं। जैसे मुर्गियों के बीट प्रत्येक दिन साफ करें और उसको एकत्र कर कहीं दूर ले जाकर जमीन के नीचे गाड़ दें। यह देखना आवश्यक है कि बीट की सफाई करते समय बीट कमरे के अन्दर न गिरे। जहाँ कैलिफोर्निया पिंजरा पद्धति से मुर्गीपालन किया जा रहा है वहाँ दिन में एक बार बीट के ऊपर चूने का पाउडर छिड़कना चाहिये। जहां बीट के कारण अधिक गीला हो गया हो वहाँ सूखा रेत बीट के ऊपर डाल दें।

### सर्दी में कुक्कुट प्रबन्ध

ठंडक के दिनों में चूजों को उचित तापक्रम देना अवश्यक है। चूजे सेने वाली मशीन के नीचे व बिछावन की सतह के ऊपर तापक्रम इस प्रकार देना चाहिए–एक सप्ताह तक 90–95 डिग्री, 1 से 2 सप्ताह तक 85–90 डिग्री, 2 से 3 सप्ताह तक 80–85 डिग्री, 3 से 4 सप्ताह तक 75 से 80 डिग्री, 4 से 5 सप्ताह तक 75 डिग्री तथा 5 से 6 सप्ताह तक 70 डिग्री फारेनहाइट रहे। होवर के नीचे पलने वाले चूजों को उनके स्वभाव के अनुसार तापक्रम देना पड़ेगा। अगर चूजे आराम से होवर के नीचे घूम–फिर कर दाना वा पानी ले रहे हैं तो यह पता लग जाता है कि उनको उचित तापमान मिल रहा है या उन्हें ठंडक लग रही है। अगर चूजे ऊष्मा स्रोत से दूर हों तो यह बात सिद्ध करती है कि चूजों को गर्मी लग रही है व तापमान अधिक है। चूजों के स्वभाव को देखकर तुरन्त तापमान ठीक

करना चाहिये। व्यावहारिक तौर पर प्रारम्भ में 1 वाट प्रति चूजे के हिसाब से एवं बाद में 1/2 वाट प्रति चूजे के हिसाब से बल्ब लगाना चाहिये। हैचरी से चूजे मिलने के बाद 3–4 दिन तक उनकी अच्छी तरह देखभाल करना अति आवश्यक है।

जब चूजों को आरामदायक तापमान नहीं मिलता तो अपने को गरम रखने के लिए चूजे एक दूसरे पर बैठने लगते हैं व देखा–देखी चूजे अपनी एक आदत सी बना लेते हैं जो कि बहुत हानिकारक है। उसके कारण काफी चूजे मर भी जाते हैं। इससे बचाव के लिए होवर के चारों तरफ गोलाई में डेढ़ फिट ऊँचा गत्ते या टिन का गार्ड बना देना चाहिए जिससे चूजों की कोनों में बैठने की आदत न पड़े। जैसे–जैसे चूजे बड़े होते जायें, गार्ड को होवर से दूर करते रहना चाहिए।

छोटे चूजे पानी के बर्तनों में न घूस पायें इसके लिए पानी के बर्तनों में कंकड़ डालने से चूजे पानी में भीगकर या डूबकर ठंड से नहीं मर पायेंगे। बिजली न होने पर अंगीठी व बुरादे की बुखारी या स्टोव से कमरा गर्म करना चाहिए व रोशनी का प्रबन्ध करना चाहिए जिससे चूजे अपना दाना–पानी देख सकें। कमरे को गर्म करने के लिए टाट या बोरी से सभी ओर बन्द कर दें। खिड़कियों में प्लास्टिक शीट भी लगाई जा सकती है जिससे कमरे में सीधी हवा नहीं घुस पायेगी एवं दिन में धूप भी आती रहेगी जो चूजों को गर्म करने में सहायक सिद्ध होगी। चूजों को गुनगुना पानी भी दिया जा सकता है। बिछावन पानी से गीला न होने पाये इसका उचित प्रबन्ध करना पड़ता है।

ध्यान रहे कि स्वच्छ हवा चूजों को हमेशा मिलती रहे। अगर बाड़े में अमोनिया की बदबू आने लगे तो हवा का आवागमन बढ़ा देना चाहिए। मुर्गियों को बीमारियों से बचाने के लिए बिछावन का सूखा रहना आवश्यक है। सप्ताह में एक बार बिछावन को उलट–पुलट कर देना चाहिए। अगर बिछावन गीली महसूस हो तो 10 किग्रा० चूना 100 वर्ग गज के हिसाब से बिछावन में मिलाकर फिर से बिछावन का उपयोग करना लाभादायक होता है।

○○○○

# कुक्कुट पालन का आर्थिक विश्लेषण

**डा० सरोज कुमार रजक**
सहायक प्राध्यापक, पशु पालन प्रसार शिक्षा विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

कृषि क्षेत्र में कुक्कुट पालन व्यवसाय का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें ब्रॉयलर उत्पादन की वृद्धि दर 15 से 18 प्रतिशत तथा अण्डा उत्पादन की वृद्धि दर 7 प्रतिशत प्रति वर्ष है जो कि अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा तीव्रतम है। भारत का विश्व में अण्डा उत्पादन में तीसरा एवं ब्रॉयलर उत्पादन में पाँचवां स्थान है। भारत में कुक्कुट व्यवसाय की प्रगति अत्यन्त तीव्र गति से हुई है परन्तु देश की जनसंख्या के अत्यधिक बढ़ने से कुक्कुट उत्पादन सम्पूर्ण लोगों के लिए पर्याप्त नहीं है। पोषण सलाहकार समिति के मानकों के अनुसार प्रति व्यक्ति अण्डा एवं मांस उपलब्धता क्रमशः 180 अण्डे तथा 9 कि०ग्रा० होनी चाहिए। इन आंकड़ों की प्राप्ति हेतु अंडा उत्पादन 300 प्रतिशत तथा मांस उत्पादन 900 प्रतिशत तक बढ़ाने की आवश्यकता है। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि भी अंडे व मांस की प्रभावी मांग बढ़ाने का एक प्रमुख कारक है।

इन सभी तथ्यों को देखते हुए भारत में अण्डा एवं मांस उत्पादन बढ़ाने के भरपूर अवसर है लेकिन सुदृढ़ बाजार व्यवस्था तथा असंगठित व अव्यवस्थित निवेशों के चलते कुक्कुट उत्पादन क्षेत्र में उक्त लक्ष्य प्राप्ति अत्यंत कठिन प्रतीत होती है। भारतीय परिवेश में कुक्कुट उत्पादन के वास्तविक लक्ष्य प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है कि यह व्यवसाय अधिक से अधिक लोगों द्वारा किया जाए। कुक्कुट पालन ऐसा व्यवसाय है जिसे पूँजी अनुसार अति निम्न स्तर से अत्यन्त उच्च स्तर पर किया जा सकता हैं।

अति निम्न स्तर के अन्तर्गत 'घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन' प्रणाली आती हैं, जिसमें कोई विशेष पूँजी की आवश्यकता नहीं होती है। किसानों को केवल चूजे खरीदने हेतु थोड़ी पूँजी की जरूरत होती हैं किसान घर में ही 10–15 मुर्गियों को पाल लेते हैं जो घर का बचा हुआ खाना खाकर या इधर–उधर घूमकर कीड़े–मकोड़े आदि से अपना पेट भर लेती हैं। इन पक्षियों की देखरेख भी घर की महिलाओं एवं बच्चों द्वारा हो जाती है, अर्थात् न ही पक्षियों के आवास और न ही आहार पर कुछ विशेष खर्च होता है। इस प्रणाली में देशी मुर्गियाँ ही पाली जाती हैं जिनमें उत्पादन प्रायः कम होता है। हालांकि कुछ देशी किस्मों के अनुरूप प्रजातियाँ विकसित की जा चुकी हैं जो कि उपरोक्त प्रणाली में आसानी से पाली जा सकती हैं तथा अधिक उत्पादन करती हैं।

मध्यम स्तर के अन्तर्गत 'अर्ध सघन प्रणाली' आती है, जिसमें पक्षियों के आवास एवं आहार हेतु थोड़ी पूँजी की आवश्यकता होती है। चूँकि इस पद्धति में 50–100 मुर्गियाँ तक पाली जाती हैं अतः उनके रख–रखाव हेतु अलग से आवास की आवश्यकता होती है। यदि किसान के पास अपनी–जमीन है तो वह उस पर अपनी सामर्थ्य के अनुसार कामचालाऊ आवास बना सकता है। पक्षियों के आहार हेतु बचे हुए अनाज आदि का प्रयोग कर लेता है परन्तु अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु कुछ पूरक आहार बाजार से खरीद कर देना पड़ता है। पक्षियों की देखभाल स्वयं या घर के सदस्यों द्वारा हो जाती है। इस प्रकार इस प्रणाली द्वारा कुक्कुट पालन हेतु केवल आवास तथा कुछ भाग आहार हेतु ही पूँजी आवश्यक होती है। इस प्रणाली से प्राप्त उत्पादों को बिक्री हेतु प्रायः गाँवों में या आसपास के साप्ताहिक बाजारों में लाया जाता है।

उच्च स्तर के अन्तर्गत 'सघन प्रणाली' आती है जिसमें फार्म के आकार के आधार पर तीन श्रेणियों में कुक्कुट पालन किया जाता है। इन सभी श्रेणियों के लिए संस्थागत वित्त सुविधाओं की आवश्यकता होती है।

प्रथम श्रेणी में कम लागत द्वारा पक्षी पाले जाते हैं, जिसमें पक्षियों की संख्या 500–1000 होती है। पक्षियों के लिए घास–फूस के छप्पर वाले कच्चे आवास बना लेते हैं। आहार प्रायः बाजार से ही खरीद लिया जाता है, पक्षियों के खाने व पानी पीने के बर्तन मिट्टी या सस्ती धातु के होते हैं जो स्थानीय संसाधनों द्वारा निर्मित होते हैं व सस्ते होते हैं। इस प्रकार के फार्म व्यवसायिक तौर पर प्रबन्धित नहीं होते एवं पारिवारिक सदस्यों द्वारा ही प्रबन्धन संभव हो जाता हे। इस प्रणाली से प्राप्त उत्पाद प्रायः छोटे कस्बों व निकटवर्ती शहरों में ही बेच दिए जाते हैं। यह प्रणाली ग्रामीण क्षेत्रों में जीविकोपार्जन हेतु अत्यन्त उपयुक्त है।

द्वितीय श्रेणी में अपेक्षाकृत अधिक निवेश होता है इसमें पक्षियों की संख्या 5,000–10,000 तक होती है। इस प्रकार के फार्म व्यवसायिक रूप से प्रबन्धित हो भी हो सकते हैं और नहीं भी। पक्षियों के आवास हेतु भी अधिक स्थान की आवश्यकता होती है, आवास व्यवस्था पक्की एवं वैज्ञानिक तरीकों पर आधारित होती है। पक्षियों के रख–रखाव एवं प्रबन्धन में वैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग करते हैं तथा कुछ स्वचालित उपकरणों का भी प्रयोग करते हैं। इसमें आहार वैज्ञानिक विधि से स्वयं बनाया जाता है अथवा थोक मूल्यों पर बाजार से खरीदा जाता है जिस पर अधिक खर्च होता हे। इस प्रणाली से प्राप्त उत्पाद प्रायः पशु उत्पादन मंडी में बड़ी मात्रा में बेचे जाते है, जो इस प्रकार की मंडियों से पोषित क्षेत्रों व शहरों में उपभोग किए जाते हैं। इस पद्धति में पारिवारिक सदस्यों के अतिरिक्त भी श्रम–शक्ति की आवश्यकता होती हैं

तृतीय श्रेणी में निवेश अत्यन्त उच्च स्तर पर किया जाता है क्योंकि इस प्रकार के फार्म आकार एवं क्षमता में विशाल होते हैं। ये फार्म पूर्णतया व्यवसायिक रूप से प्रबन्धित होते हैं। इनमें बड़ी संख्या में पक्षी पाले जाते हैं जिनकी आवास व्यवस्था एवं प्रबन्धन पूर्णतया वैज्ञानिक तकनीकी पर आधारित होता है। इनमें प्रयुक्त सभी उपकरण स्वचालित एवं गुणवत्ता की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ होते हैं साथ ही ढांचागत निवेश भी अधिक होता है। इनमें स्वयं की ही हैचारी एवं आहार इकाई होती है तथा शोध की भी व्यवस्था होती है। पक्षियों की देखरेख हेतु अत्यन्त कुशल प्रशिक्षित श्रमिकों एवं डॉक्टरों की आवश्यकता होती है। इनमें उत्पादन में वृद्धि या कमी बाजार मूल्यों को प्रभावित कर सकती हैं। इससे प्राप्त उत्पाद बड़ी मात्रा में एक मंडी से दूसरी मंडी तक भेजे जाते हैं फिर उस मंडी द्वारा उस पर निर्भर शहरों में वितरीत होते हैं। इस प्रकार के फार्म औ़द्योगिक स्तर पर कार्य करते हैं। इस प्रणाली में पूंजी निवेश व स्वामित्व सामूहिक होता हैं

एक आम किसान से लेकर बड़े पूँजी निवेशकों तक उपरोक्त में से किसी भी प्रणाली में अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुक्कुट पालन किया जा सकता है। स्वयं के पास पर्याप्त पूँजी अभाव की स्थिति में संस्थागत वित्त/ऋण की आवश्यकता होती है। इसके लिए अन्य सभी औपचारिकताओं के अतिरिक्त प्रायोजन प्रारूप भी देना पड़ता है। ब्रॉयलर एवं लेयर फार्म हेतु एक आदर्श प्रायोजन प्रारूप यहाँ प्रस्तुत प्रयोजनाएँ निम्न मानकों पर आधारित हैं :–

| **आवश्यकताएँ** | ***लेयर*** | **ब्रायलर** |
|---|---|---|
| स्थान | 0–8 सप्ताह = 0.75 वर्ग फुट प्रति मुर्गी<br>8 सप्ताह से अधिक = 2 वर्ग फीट प्रति मुर्गी | 1 वर्ग फुट प्रति पक्षी |
| शैड निर्माण खर्च | रू. 100/– प्रति वर्ग फुट की दर से | रू. 100/– प्रति वर्ग फुट की दर से |
| चूजे | रू. 10.00 प्रति चूजा | रू. 12.00 प्रति चूजा |
| मृत्यु दर | 10 प्रतिशत<br>(5% ब्रूडिंग अवधि में + 5% वयस्कों में) | 5 प्रतिशत |
| आहार–मात्रा | 140 दिन तक 8 किलो प्रति मुर्गी<br>140–500 दिन तक 38 किलो प्रति मुर्गी | 6 सप्ताह में 1.5 किलो शारीरिक वजन प्राप्त करने के लिए 3.23 किलो प्रति ब्रॉयलर आहार (FCR=2.15) |
| मूल्य | स्टार्टर आहार– रू. 7/– प्रति किलो<br>लेयर आहार –रू. 6.50/– प्रति किलो | ब्रॉयलर आहार रू. 8/– प्रति किलो |
| मजदूर | 1 मजदूर प्रति 1000 लेयर पर | 1 मजदूर प्रति 2000 ब्रॉयलर पर रू. 1500/– प्रति माह<br>रू. 1500/– प्रति माह की दर से की दर से |
| उत्पादन | 500 दिन तक 280 अण्डे प्रति मुर्गी | छः सप्ताह में 1.5 किलो शारीरिक वजन |
| पानी, बिजली दवा एवं बिछावन पर खर्च | रू. 8/– प्रति मुर्गी<br>(रू. 4/– ब्रूडिंग अवधि में + रू. 4/– वयस्कों में | रू. 4/– प्रति ब्रॉयलर |

| | | |
|---|---|---|
| उपकरण | रू. 12 / – प्रति मुर्गी | रू. 10 / – प्रति ब्रॉयलर |
| | – रू. 1.30 प्रति अण्डा | – रू. 35 / – प्रति किलो |
| | – अण्डा देने की अवधि के अंत में निस्तारण | (जैवभार के आधार पर) |
| | मूल्य रू. 50 / – प्रति मुर्गी | – छः सप्ताह की आयु पर बिक्री |
| | – खाद की बिक्री रू. 450 / –प्रति टन की दर से। | खाद की बिक्री रू. 450 / – प्रति टन की दर से। |

**उत्पादन चक्र–लेयर**

लेयरों का प्रथम बैच 140 दिन में अण्डे देना शुरू कर देता है। पहला बैच शुरू करने के लगभग एक वर्ष (360 दिन) बाद दूसरा बैच शुरू कर दिया जाता है। जब तक दूसरे बैच के लेयर अण्डा उत्पादन शुरू करते हैं, तब तक पहले बैच के लेयरों की आर्थिक रूप से उपयुक्त अण्डा उत्पादन अवधि (500 दिन की आयु तक) समाप्त हो चुकी होती है। इस अवस्था पर पहले बैच के लेयरों की छटनी (कलिंग) कर दी जाती है तथा नए स्टॉक (दूसरे बैच) से अण्डा उत्पादन शुरू हो जाता है। इस प्रकार अण्डा उत्पादन का क्रम बिना रूके चलता रहता है। इस क्रम को बनाए रखने के लिए 2,000 वर्ग फीट (1,000 लेयरों के लिए) का शैड तथा 750 वर्ग फीट का ब्रूडर हाउस आवश्यक होता है।

**1000 मुर्गियों के लेयर फार्म की स्थापना हेतु प्रायोजना :**

| | | | |
|---|---|---|---|
| **1.** | **अनावर्ती खर्चे :** | | |
| (क) | इमारत | | 2,95,000 |
| | – शैड 2 x 1000 x 100 = 2,00,000 | | |
| | – ब्रूडर हाउस 0.75 x 1000 x 100 = 75,000 | | |
| | – कार्यालय / भण्डार गृह 200 x 100 = 20,000 | | |
| (ख) | उपकरण 1000 x 12 = 12,000 | | 12,000 |
| | (1000 चूजों के लिए रू. 12 / – प्रति चूजे की दर से ) | **कुल** | **3,07,000** |
| | (140 दिन आयु तक) | | |
| **2.** | **प्रतिस्थापित स्टॉक :** | | |
| (क) | 1100 चूजों का मूल्य 10 x 1100 = 11,000 | | 11,000 |
| | रू. 10 / – प्रति चूजें की दर से | | |
| (ख) | 1050 चूजों का आहार 8 x1050 x 7 = 58,800 | | 58,000 |
| | रू. 7 / – प्रति किग्रा. एवं 8 किलो प्रति मुर्गी की दर से | | |
| (ग) | पानी, बिजली, दवा आदि 4 x 1100 = 4, 400 | | 4, 400 |
| | का 1100 मुर्गियों पर अण्डे देने की अवधि तक रू0 40 / – प्रति मुर्गी खर्च | | |
| (घ) | मजदूरी 5 x 1500 = 7,500 | | 7, 500 |
| | | **कुल** | **81,700** |

| | | |
|---|---|---|
| **3.** | **पूंजी आवश्यकता** | |
| | अनावर्ती + प्रतिस्थापित स्टॉक | |
| | = 3,07,000 + 81,700 | 3,88,700 |
| **4.** | **आवर्ती खर्चे :** | |
| (क) | प्रतिस्थापित स्टॉक | 81,700 |
| (ख) | 1000 मुर्गियों 1000 x 38 x 6.50 = 2,47,000<br>का 38 किलो प्रति मुर्गी रू.<br>6.50 प्रति किग्रा. की दर से आहार | 2,47,000 |
| (ग) | पानी, बिजली, दवा 4 x 1000 = 4,000<br>आदि पर रू. 4/– प्रति मुर्गी की दर से खर्च | 4,000 |
| (घ) | मजदूरी 12 x 1500 = 18,000 | 18,000 |
| | कुल | 3,50,700 |
| **5.** | **आय :** | |
| (क) | अण्डों की बिक्री 280 x 1000 x 1.30 = 3,64,000 | 3,64,000 |
| (ख) | 60 टन खाद की 60 x 450 = 27,000<br>रू. 450/– प्रति टन की दर से बिक्री | 27, 000 |
| (ग) | 660 बोरों की 660 x 10 = 6,600<br>रू. 10/– प्रति बोरा की दर से बिक्री | 6, 600 |
| (घ) | पुराना स्टॉक 1000 x 50 = 50, 000 | 50, 000 |
| | **कुल** | **4,47,600** |
| **6.** | **कुल लाभ :** | |
| | आय – आवर्ती खर्चे 4, 47,6000–3,50, 700 | 96, 900 |
| **7.** | **स्थायी खर्चे :** | |
| (क) | कुक्कुट गृह पर 5% की दर से मूल्य ह्रास | 14, 750 |
| (ख) | उपकरणों पर 10% की दर से मूल्य ह्रास | 1,200 |
| (ग) | भवनों के रख –रखाव पर 5% की दर से खर्च | 14,750 |
| (घ) | उपकरणो के रख–रखाव पर 5% की दर से खर्च | 600 |
| (ङ.) | पूंजी निवेश पर 12% की दर से व्याज | 46,644 |
| (च) | बीमा रू. 1.50 प्रति मुर्गी | 1,500 |
| | **कुल** | **79,444** |

| | | |
|---|---|---|
| 8. | **शुद्ध लाभ :** | |
| | कुल लाभ –स्थायी खर्च | |
| | = 96,900 – 79,444 | 17,456 |
| 9. | **शुद्ध लाभ प्रति मुर्गी** | 17.46 |
| 10. | **लागत –निर्गत अनुपात** | 1:1.04 |

**उत्पादन चक्र–ब्रॉयलर**

प्रति सप्ताह 1000 ब्रायलर प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रति सप्ताह उतने ही चूजे प्रारम्भ किए जाएं। चूंकि ब्रॉयलर की परिपक्वता आयु छः सप्ताह होती है (लगभग 1.5 किलो शारीरिक वजन) अतः प्रत्येक बैच के को परिपक्व होने के लिए छः सप्ताह का समय चाहिए। इसके लिए सात पैंन की आवश्यकता होती हैं, जिसमें से एक पैन साफ–सफाई हेतु चक्रीय क्रम में खाली रहता है। इस प्रकार प्रत्येक पैंन में आरम्भित किए 1000 चूजे छः सप्ताह तक उसी पैन में रहते हैं तथा छठ्ठे सप्ताह के अंत तक ब्रॉयलरों की बिक्री के पश्चात वह पैन खाली हो जाता है। इस प्रकार यह उत्पादन चक्र चलता रहता है।

उत्पादन के प्रथम वर्ष में छः पैन भरने में छः सप्ताह का समय लगता है, अतः प्रथम वर्ष में कुल 46,000 ब्रायलरों का उत्पादन होता है। तदुपरान्त अनुवर्ती वर्षों में 52,000 ब्रायलरों का उत्पादन होता है।

**1000 ब्रायलरों के फार्म की स्थापना हेतु प्रायोजना :**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 1. | **अनावर्ती खर्चे :** | | | |
| | (क) | इमारत | | 7,20,000 |
| | | पैन 7 x 1000 x 1.00 x 100 = 7,00,000 | | |
| | | कार्यालय / भण्डार गृह 200 x 100 = 20,000 | | |
| | (ख) | उपकरण | | 66,500 |
| | | (950 ब्रॉयलर के लिए 10 x 7 x 950 = 66,500 | | |
| | | 7 पैन में रू. 10 / – प्रति ब्रॉयलर की दर से) | | |
| | | | कुल | 7,86,500 |
| 2. | **आवर्ती खर्चे :** | | | |
| | (क) | चूजे 52,000 x 12 = 6,24,000 | | 6,24,000 |
| | | (रु. 12 / – प्रति चूजे की दर से ) | | |
| | (ख) | आहार 49,400 x 1.5 x2.15 x8 =12,74,520 | | 12,74,520 |
| | | (रु. 8 / – प्रति किग्रा. 5% मृत्यु दर एवं 2.15 | | |
| | | आहार रूपान्तरण क्षमता अनुसार) | | |
| | (ग) | पानी, दवा, बिजली 52,000 x 4 = 2,08,000 | | 2,08,000 |
| | | आदि पर रू. 4 / – प्रति ब्रायलर की दर से खर्च | | |
| | (घ) | मजदूरी 3 x 12 x 1500 = 54,000 | | 54,000 |
| | | 3 मजदूरों के लिए रू. 1500 / – प्रति माह 12 महीनों में खर्च | **कुल** | **21,60,520** |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 3. | **पूँजी निवेश :** | | | |
| | (क) | इमारत एवं उपकरण लागत | | 7,86,500 |
| | (ख) | प्रथम 6000 चूजों का मूल्य 6000 x 12 = 72,000 | | 72,000 |
| | (ग) | 5,700 ब्रॉयलरों का आहार 5700 x 1.5 x 2.15 x 8 = 1,47,060<br>रू. 8 / – प्रति किग्रा. की दर से | | 1,47,060 |
| | (घ) | पानी, बिजली, दवा आदि का 6000 x 4 = 24,000<br>6000 चूजों पर रू. 4 / – प्रति<br>चूजे की दर से खर्च | | 24,000 |
| | (ड.) | 3 मजदूरों की 3 x 1.5 x 1500 = 6,750<br>6 सप्ताह के लिए<br>रू. 1500 / – प्रति मजदूर की दर से मजदूरी | | 6,750 |
| | | | **कुल** | **10,36,310** |
| 4. | **आय :** | | | |
| | (क) | 1.5 किलो के प्रत्येक 49,400 x 1.5 x 35 = 25,93,500<br>ब्रॉयलर की रू. 35 / – प्रति<br>किलो की दर से बिक्री | | 25,93,500 |
| | (ख) | 255 टन खाद की 255 x 450 =1,14,750<br>रू. 450 / – प्रति टन की<br>दर से बिक्री | | 1,14,750 |
| | (ग) | 2,275 बोरों 2,275 x 10 = 22,750<br>की रू. 10 / – प्रति बोरे<br>की दर से बिक्री | | 22,750 |
| | | | **कुल** | **27,31,000** |
| 5. | **कुल लाभ :** | | | |
| | आय – आवर्ती खर्चे 27,31,000–21,60520 | | | 5,70,4870 |
| 6. | **अन्य खर्चे :** | | | |
| | (क) | इमारत पर 5% की दर से मूल्य ह्रास | | 36,000 |
| | (ख) | उपकरणों पर 10% की दर से मूल्य ह्रास | | 6,650 |
| | (ग) | इमारत के रख–रखाव पर 5% की दर से खर्च | | 36,000 |
| | (घ) | उपकरण के रख–रखाव पर 5% की दर से खर्च | | 3,325 |
| | (ड.) | पूंजी निवेश पर 12% की दर से व्याज | | 1,24,357 |
| | (च) | बीमा 0,50 पैसे की दर से | | 26,000 |
| | | | **कुल** | **2,32,332** |

| | | |
|---|---|---|
| 7. | **शुद्ध लाभ = कुल लाभ – अन्य खर्च :** | |
| | = 5,70,480–2,32,332 | 3,38148 |
| 8. | **शुद्ध लाभ प्रति ब्रॉयलर (रू.)** | 6.85 |
| 9. | **लागत–निर्गत अनुपात** | 1:1 .14 |

वे मानक जिनके आधार पर उपरोक्त गणनाएँ की गई हैं, स्थान व समय के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं। निवेशक अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ मानकों में परिवर्तन कर सकते हैं। उपरोक्त गणनाओं में जोखिम कारकों के प्रभाव को समावेशित नहीं किया गया है।

**व्यवसायिक कुक्कुट पालन में अर्जित लाभ मुख्यतः निम्न कारकों पर निर्भर होता है –**

1. **फार्म का स्थान** : कुक्कुट पालन में फार्म हेतु स्थान का चयन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा जो फार्म शहरों या कस्बों में होते हैं, वे अधिक लाभप्रद होते हैं क्योंकि वे बाजार के निकट होते हैं साथ ही वहाँ बिजली, पानी, संतुलित आहार, उपकरण, दवा तथा स्वास्थ्य सुविधाएँ आदि सभी उपलब्ध होती हैं। शहरों, कस्बों व गांवों में भी अन्य स्थानों की अपेक्षा सड़क के किनारे स्थित फार्म सुगमता की दृष्टि से अधिक उपयुक्त होते हैं। यहाँ से उत्पादों का आवागमन आसानी से एवं कम खर्च में हो जाता है और उत्पादों का भी उचित मूल्य प्राप्त होता है।
2. **जेनेटिक स्टॉक** : चूँकि पक्षियों की प्रजनन क्षमता ही उत्पादन का निर्धारण करती है अतः अधिक उत्पादन हेतु सदैव अच्छी नस्लों के चूजे खरीदने चाहिए। अच्छी नस्ल के चूजों की पैदावार व बढ़त अधिक होती है और इनमें बीमारियों की भी कम संभावना रहती है। इनके अण्डे व मांस पौष्टिक होने के साथ–साथ जनसामान्य के स्वाद एवं पसन्द के अनुरूप होते हैं, जिससे उनकी बिक्री भी अधिक होती है और व्यवसायी को लाभ भी अधिक होता है। अच्छी नस्ल के चूजों की खरीद हेतु हमेशा ख्याति प्राप्त हैचरी एवं सरकारी फार्मों को ही प्रधानता देनी चाहिए। चूंकि सम्पूर्ण व्यवसाय चूजों पर ही निर्भर होता है अतः फेरी वालों या अनजानों से चूजे नहीं खरीदने चाहिए क्योंकि उनकी गुणवत्ता सन्देहयुक्त होती है।
3. **कुक्कुट आहार** : कुक्कुट पालन में कुल उत्पादन का लगभग 60–70% भाग केवल आहार पर खर्च होता है। व्यवसायिक कुक्कुट पालन में अच्छा आहार, अच्छा स्टॉक एवं अच्छा प्रबन्धन ये तीन आधार ही सम्पूर्ण व्यवसाय की सफलता की कुंजी होते हैं। अच्छी आहार का तात्पर्य उस संतुलित आहार से होता है जो पक्षियों को सभी पोषक तत्व प्रदान कर सके अर्थात् आहार में प्रोटीन, ऊर्जा, वसा, विटामिन एवं खनिज तत्वों का समावेश हो। इसके साथ–साथ आहार के मूल्य का भी ध्यान रखना चाहिए। कम लागत हेतु आहार का निर्माण फार्म पर ही किया जा सकता है और मंहगे खाद्य–पदार्थों के स्थान पर प्रचलित खाद्य पदार्थों का प्रयोग कर सकते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा बनाए गए आहार सूत्रों के अनुरूप आहार देने पर पक्षियों में उत्पादन अधिक होता है। अतः आवश्यकतानुसार व्यवसाय में प्रशिक्षित व्यक्तियों या वैज्ञानिकों की सलाह भी लेनी चाहिए।
4. **फार्म की क्षमता** : किसान अपनी पूँजी सामर्थ्य के अनुसार पक्षियों की संख्या कम या अधिक कर सकते हैं। यदि किसान के पास साधन अधिक हैं तो वह पक्षियों के समूह में वृद्धि कर सकता है जिससे उन पर होने वाला स्थायी खर्च कम व लाभ अधिक हो सके।
5. **श्रमिक क्षमता** : कुक्कुट पालन व्यवसाय की विभिन्न प्रणालियों में भिन्न–भिन्न स्तर की कार्य शक्ति की आवश्यकता होती है और इन पर होने वाला खर्च सम्पूर्ण व्यवसाय को प्रभावित करता हैं। जैसे 'घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन' या अर्द्ध सघन प्रणाली

में इन पर कम खर्च आता है साथ ही अत्यधिक कुशल व्यक्तियों की भी आवश्यकता नहीं होती है परन्तु औद्योगिक स्तर पर अत्यंत कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता है और इन पर होने वाला खर्च भी अधिक होता है।

6. **बाजार व्यवस्था :** एक सुदृढ़ बाजार व्यवस्था के अन्तर्गत उत्पादकों को अपने उत्पाद का अच्छा मूल्य प्राप्त होता है, साथ ही उपभोक्ताओं को भी ये उत्पाद उचित मूल्य पर उपलब्ध हो जाते हैं। अच्छी बाजार व्यवस्था हेतु यह आवश्यक है कि उपभोक्ता एवं उत्पादक के बीच की कहीं छोटी से छोटी हो अर्थात् बिचौलियों की संख्या कम हो। उपभोक्ता व उत्पादकता के बीच की कड़ी जितनी लम्बी होती हैं, प्रति इकाई लाभ उसी अनुपात में कम हो जाता है। इससे न केवल अंतिम उत्पाद का मूल्य बढ़ता है बल्कि उत्पादक को भी उपयुक्त मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई होती है। हालांकि बाजारीकरण प्रणाली में इन बिचौलियों को बिल्कुल नकारा भी नहीं जा सकता विशेषतया उस स्थिति में जब उत्पादों के शीघ्र खराब होने का भय हो और उत्पादक पूर्णतया इन्हीं पर निर्भर हों। इस स्थिति में छोटे–छोटे उत्पादक मिलकर सहकारी विपणन समिति बना सकते हैं जिससे प्रति इकाई विपणन मूल्य कम किया जा सकता है साथ ही बिचौलियों पर निर्भरता को भी कम किया जा सकता है।

7. **उत्पादों का श्रेणीकरण, मानकीकरण एवं संवेष्टीकरण :** कुक्कुट पालन व्यवसाय में उत्पादों की बिक्री हेतु श्रेणीकरण, मानकीकरण एवं संवेष्टीकरण अत्यधिक आवश्यक होता है। अण्डों का उनके वजन एवं आकार के अनुसार श्रेणीकरण करने से अपेक्षाकृत अच्छे दाम मिलते हैं। उत्पादों की आकर्षक एवं स्वास्थ्यप्रद पैकेजिंग भी उपभोक्ता को आकर्षित करती है। यदि उत्पादक गुणवत्ता प्रमाणपत्र प्राप्त कर कोई 'ब्रान्ड' देकर उनके उत्पादों की बिक्री करे तो अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इसके साथ उत्पादों का प्रचार भी महत्वपूर्ण होता है, जिसके लिए विभिन्न प्रचार माध्यमों जैसे–रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं आदि में दिए जा सकते हैं। चूंकि कुक्कुट उत्पादों के शीघ्र ही खराब होने का खतरा रहता है अतः इनका उचित संरक्षण आवश्यक होता है। इन उत्पादों को उचित रूप में संग्रहित न करने से इनको शीघ्र ही कम दामों पर बेचना पड़ता है। इस स्थिति में 'कोल्ड चेन' पद्धति अधिक उपयोगी होती है जिसमें उत्पादों का आवागमन प्रशीतित गाड़ियों के माध्यम से होता है। इसके प्रयोग से अत्यधिक मांग वाले क्षेत्र में उचित समय पर सुरक्षित उत्पादों की पूर्ति कर उपयुक्त मूल्य प्राप्त किए जा सकते हैं। यदि अण्डों व मांस के विभिन्न द्वारा तैयार उत्पादों को बेचा जाए तो उनके न ही शीघ्र खराब होने का भय रहता है और न ही कुक्कुट उत्पादों के गुणों में कमी आती है। साथ ही अच्छे मूल्य भी प्राप्त हो जाते हैं।

उपर्युक्त सभी कारकों के साथ–साथ व्यवसाय को योजनाबद्ध रूप में करना अधिक लाभदायक होता है। इस व्यवसाय पर मौसमों एवं त्यौहारों का भी बहुत प्रभाव पड़ता है। गर्मी के मौसम की अपेक्षा जाड़ों में अण्डों एवं मांस की अधिक मांग होती है। अतः कुक्कुट व्यवसायियों को पक्षियों के उत्पादन–चक्र को इन उतार–चढ़ाव के अनुरूप रखना चाहिए, जिससे मांग व आपूर्ति सुचारू रूप से चलती रहे। इसके अतिरिक्त पक्षियों को ग्राहकों की मांग के अनुसार उपयुक्त शारीरिक वजन व आयु पर बेच देना चाहिए। प्रायः एक से डेढ़ किलो वजन वाले ब्रॉयलरों की मांग अधिक होती है। इस प्रकार उपयुक्त योजना द्वारा किया व्यवसाय अधिक लाभ अर्जित कराता है।

कुक्कुट पालन व्यवसाय प्रत्येक स्तर पर लाभकारी होता है। ग्रामीण अंचालों में ये व्यवसाय युवकों को रोजगार के अवसर प्रदान करने के साथ–साथ उन्हें खाद्य–सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी है। अतः इस व्यवसाय को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाने के लिए विस्तार क्षेत्र से जुडें सभी स्थानों को प्रयास करना चाहिए तथा राज्य सरकार द्वारा इस प्रकार के व्यवसायों को समर्थन देने के लिए पर्याप्त परियोजनाएँ प्रारम्भ करनी चाहिए। राज्य सरकारों को कुक्कुट पालन उद्योग को बढ़ाने के लिए आहार सब्सिडी, कर प्रोत्साहन, ब्याज सब्सिडी व आसान दरों पर ऋण उपलब्ध कराने जैसे कार्यक्रम चलाने चाहिए।

○○○○

# कुक्कुटशाला में अभिलेखों का महत्व एवं रख-रखाव की जानकारियाँ

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

किसी भी उद्योग की सफलता में उस उद्योग के अभिलेखों का विशेष योगदान होता हैं अभिलेखों के उचित प्रबंधन के द्वारा हम किसी भी समय यह ज्ञात कर सकते हैं कि हमारे उद्योग धंधे की क्या स्थिति हैं। वह लाभ में है अथवा हानि में। इसी बात को ध्यान में रखते हुए कुक्कुट पालकों के लिए निम्न अभिलेखों का रखना नितान्त आवश्यक है।

1. आहार अभिलेख
2. मृत्यु दर अभिलेख
3. अण्डा उत्पादन अभिलेख
4. अण्डा सेने के यंत्र एवं उसमे रखे जाने वाले अण्डों से सम्बन्धित अभिलेख
5. चूजों के पालन एवं वंशावली सम्बन्धी अभिलेख
6. क्रय विक्रय अभिलेख

### 1. आहार अभिलेख :

कुक्कुट पालन में आहार अभिलेख का विशेष महत्व है, क्योंकि कुल लागत का लगभग 70 प्रतिशत व्यय आहार पर होता है। हमें चाहिए कि प्रत्येक कुक्कुट आवास पर एक चार्ट रखें जिसमें नित्य प्रति पक्षियों की संख्या, मरने वाले पक्षियों की संख्या, आवास में लगने वाले दाने की मात्रा तथा प्रति सप्ताह आकस्मिक रूप से पकड़कर कुछ पक्षियों का औसत वजन ज्ञात कर इस चार्ट पर लिख लेना चाहिए, इससे पक्षियों की वृद्धि दर का ज्ञान रहेगा। वृद्धि दर कम होने पर उसके कारणों पर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। हमें दिन–प्रतिदिन के दाने का हिसाब ज्ञात रहना चाहिए कि कुल कितना एवं किस प्रकार का दाना फार्म में लगाना है तथा अगले कितने दिनों का दाना हमारे पास शेष है। हमें कम से कम एक सप्ताह का दाना भण्डारण करके रखना चाहिए ताकि आकस्मिक व्यवधान आने पर भी पक्षियों को भोजन दिया जा सके। समय–सयम पर फार्म में रखे दाने का भौतिक सत्यापन भी कर लेना चाहिए। इससे हमें यह ज्ञात हो जायेगा कि फार्म पर कार्य करने वाले मजदूर पक्षियों को समुचित मात्रा में दाना दे भी रहे हैं या नहीं। जब भी कुक्कुट आवास में दाने की मात्रा बढ़ानी या घटानी हो उसका विवरण आवास चार्ट पर अवश्य कर देना चाहिएं

**आहार अभिलेख चार्ट**

आवास संख्या.....................................वर्ष / माह...........................................नस्ल का नाम ..............................................................................

| दिनांक | पक्षियों की संख्या | मृत पक्षियों की सं. | शेष पक्षी | | प्रारंभ में दाने की मात्रा (कि.ग्रा. में) | मंगाये गये दाने की मात्रा (कि.ग्रा. में) | कुल दाना (कि.ग्रा. में) | आवास में लगने वाले कुल दाने की मात्रा (कि.ग्रा. में) | शेष दाने की मात्रा (कि.ग्रा. में) | प्रति सप्ताह पक्षियों का लिखा गया औसत भार (ग्राम में) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | | | |

2. **मृत्यु दर अभिलेख :**

इस अभिलेख के अंतर्गत फार्म में प्रतिदिन मरने वाले पक्षियों का विवरण नोट करते हैं। शव परीक्षण दिनांक, पक्षियों की संख्या मृत पक्षियों की संख्या, शेष पक्षियों की आयु उपरान्त पक्षी के मरने का कारण ज्ञात होते ही तुरन्त उसका उपचार चिकित्सक की देख–रेख में शुरू कर देना चाहिए। इस कार्य में लापरवाही कभी–कभी घातक सिद्ध हो सकती है। पक्षियों के मरने के अनेक कारण हो सकते हैं जैसे उचित स्थान की कमी, दाने–पानी की उचित मात्रा का न मिलना, आवास घर क तापक्रम का उचित रख–रखाव न होने के कारण, बिछावन के गीले हो जाने के कारण तथा उचित टीकाकरण न होने के कारण। मृत्यु दर को रोकने के लिए हमें प्राथमिकता के आधार पर कार्यवाही करनी चाहिए जिससे अनावश्यक हानि से बचा जा सके। विभिन्न मौसमों में पक्षियों के मरने का कारण भिन्न–भिन्न होता है। इस अभिलेख की सहायता से आने वाले सयम में पक्षियों की मृत्यु के संदर्भ में हमें पहले से ही सावधान हो जाना चाहिए। उदाहरण के लिए गर्मी का मौसम आने से पूर्व ही हमे पंखों व कूलरों की व्यवस्था कर लेना चाहिए। तेज गर्म व ठंडी हवाओं से बचाने की व्यवस्था भी आवश्यक है। बरसात के मौसम में हमें बिछावन पर अधिक ध्यान देना चाहिए क्योंकि वातावरण में नमी के कारण बिछावन जल्दी–जल्दी गीली होने लगती है।

**मृत्यु दर अभिलेख चार्ट**

आवास संख्या......................................... वर्ष / माह................................................ नस्ल का नाम ........................................................................

| दिनांक | कुल पक्षियों की संख्या | कुल मृत पक्षियों की संख्या | शेष पक्षियों की संख्या | चिकित्सक के अनुसार पक्षियों के मरने का कारण | चिकित्सक के सुझाव | की गई कार्यवाही |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | |

3. **अण्डा उत्पादन अभिलेख :**

कुक्कुट पालन व्यवसाय में अण्डा उत्पादन अभिलेख का विशिष्ट स्थान है। उत्पादन में एकाएक ह्रास होने पर हमें तुरन्त उसके कारणों पर ध्यान देना चाहिए। आवास घर का तापमान सामान्य से काफी कम या अधिक होना, पक्षियों को दी जाने वाली आहार की मात्रा एवं गुणवत्ता में कमी आना, समय–समय पर पक्षियों को आन्तरिक व बाह्य परजीवियों से मुक्त करने के लिए दवा का न देना आदि ऐसे कारण हैं जो अण्डा उत्पादन पर कुप्रभाव डालते हैं। अधिक शोर युक्त वातावरण भी पक्षियों के उत्पादन पर कुप्रभाव डालता है। हमें प्रतिदिन फार्म पर अण्डों का एकत्रीकरण प्रातः आठ बजे से लगातार दो–दो घंटे के अन्तरालों पर कर लेना चाहिए। इससे विछावन या ट्रेपनेस्ट में अण्डों के टूटने से अनावश्यक क्षति नहीं होगी।

**अण्डा उत्पादन अभिलेख**

आवास संख्या.................................... वर्ष / माह................................................ नस्ल का नाम..............................................................................

| दिनांक | कुल मुर्गियों की संख्या | मृत मुर्गियों की संख्या | शेष मुर्गियों की संख्या | कुल अण्डा उत्पादन | उत्पादन प्रतिशत में $\frac{\text{कुल अंडों की संख्या}}{\text{कुल मुर्गियों की संख्या}} \times 100$ |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | |

**4. अण्डा सेने के यंत्र तथा उसमें रखे जाने वाले अण्डों के विवरण सम्बन्धी अभिलेख :**

दिन प्रतिदिन के अण्डा उत्पादन में निषेचित व अनिषेचित अण्डों का विवरण अलग–अलग रखा जाना चाहिए। अण्डा सेने की मशीन में जो अण्डा रखा जाना है उसके बारे में निम्न सावधानी रखनी चाहिए।

(क) मशीन में रखे जाने वाले अण्डों का भार 52 से 65 ग्राम के बीच होना चाहिए।

(ख) दीर्घीकृत, कमजोर छिलके वाला चटका हुआ अंडा मशीन में नहीं रखना चाहिए।

(ग) अंडा गन्दा नहीं होना चाहिए

(घ) प्रतिदिन हैचिंग के अण्डों फ्यूमीगेशन करना चाहिए। इसके लिए प्रत्येक घनमीटर स्थान में अंडों को रखकर उस कक्ष में 20 ग्राम पोटेशियम परमैगनेट तथा 40 मिली फार्मेलीन एक चीनी मिट्टी के बर्तन में रखकर, बर्तन को उस कक्ष में रखकर, कक्ष को 20 मिनट के लिए बन्द कर देना चाहिए। इस कक्ष का तापक्रम 75 डिग्री फारेनहाइट तथा आर्द्रता 75 प्रतिशत होनी चाहिए।

उपरोक्त हैचिंग के अंडों को संक्रामक दोष से शुद्धीकरण के उपरान्त शीत कक्ष में 7 से 10 दिन एकत्र करते हैं। अंडे सेने की मशीन में अंडों को रखने से पहले अंडों को शीत कक्ष से बाहर निकाल लेते हैं तथा कक्ष तापक्रम पर आने पर ही अंडों को मशीन की ट्रे में रखते हैं। ट्रे में अंडा रखते समय यह ध्यान रखें कि अंडे का चौड़ा भाग ऊपर की ओर रहे। मशीन ट्रे की स्थिति को पूरे दिन में छः से आठ बार समान अन्तराल पर घुमाने की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। मशीन में बिजली न रहने पर इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए, अन्यथा अंडे के अंदर भ्रूण उसके छिलके से चिपककर नष्ट हो सकते हैं।

18वें दिन उपरोक्त सैट किये अंडों की कैन्डलिंग करें इसमें से अनिषेचित (इनफरटाइल) तथा ऐसे अंडों को मशीन से बाहर निकाल देते हैं जिनका भ्रूण प्रारंभिक अवस्था में ही मृत हो चुका है। शेष अंडों को हैचर (निषेचित अंडों से चूजा निकालने की मशीन) में चार दिन के लिए रख देते हैं। हैचर का तापक्रम 98.5 डिग्री फारेनहाइट तथा सापेक्ष आर्द्रता 70 प्रतिशत रखी जाती है। 22वें दिन चूजों को निकालकर केवल स्वस्थ चूजों का टीकाकरण करवाकर फार्म में अथवा बिक्री के लिए ले जाना चाहिए।

**हैचिंग मशीन में रखे जाने वाले अंडों का विवरण**

आवास संख्या........................................वर्ष / माह........................................................नस्ल का नाम..............................................................

| क्र.सं. | मशीन में अंडा रखने की तिथि | कुल रखे गये अण्डों की संख्या | अनिषेचित अंडों की संख्या | प्रारंभिक अवस्था में भरे भ्रूण की संख्या | हैचर में स्थाना–न्तरित अंडों की संख्या | अंडों की संख्या जिन से हैचर में चूजा नहीं निकला | कमजोर अथवा मृत चूजों की संख्या (अ) | स्वस्थ चूजों की संख्या (ब) | अंडे से निकले कुल चूजों की संख्या (अ+ब) | चूजे निकलने की तिथि |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | | | |

5. **चूजों के पालन एवं वशांवली सम्बन्धी अभिलेख :**

जिन चूजों को हम अपने फार्म पर पालने जा रहे हैं हमें उनकी वंशावली का ज्ञान होना चाहिए। एक रजिस्टर में हमें नर तथा उनके साथ उन मुर्गियों के नम्बर नोट कर लेना चाहिए जो उक्त नर के साथ रहेंगी। अगले वर्ष हैचिंग के समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि एक नर एवं उसके साथ की मादाओं से उत्पन्न चूजों से पुनः मैटिंग कराकर संतान न उत्पन्न की जाये। ऐसी संतानें शारीरिक रूप से कमजोर होती हैं। इसी को वर्ण दोष भी कहते हैं।

इसके अतिरिक्त मैटिंग योजना बनाते समय हमें सबसे अच्छे नर व मादाओं का उपयोग करना चाहिए। नर को उनके वजन के आधार पर तथा मुर्गियों को अंडा उत्पादन के आकार पर छांटना चाहिए।

**वंशावली अभिलेख**

| कमरा या पैन सं. | नर का नम्बर (अ) | मुर्गियों के नम्बर (ब) | हैच सं. | अ एवं ब के क्रास से प्राप्त चूजों के नम्बर | छः सप्ताह पर वजन | 40 सप्ताह तक प्राप्त अंडों की संख्या |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | |

6. **क्रय–विक्रय अभिलेख :**

क्रय–विक्रय अभिलेख में कुक्कुट पालन में होने वाली सभी प्रकार की खरीद की गयी एवं विक्रय की गयी वस्तुओं का मूल्य दर दिनांक सहित नोट कर लेते हैं। इसमें दाना, दवाईयां, मजदूरी, बिजली, चूजों का मूल्य व अन्य खर्चों का विवरण नोट किया जाता है। आय के रूप में अंडा, खाद, चूजों, वयस्क नर व मादाओं की बिक्री से प्राप्त धन का विवरण इस अभिलेख में रखते हैं। इस अभिलेख के आधार पर हम फार्म से होने वाले लाभ/हानि का अनुमान लगा सकते हैं। लाभ/हानि लगाते समय उस दिन फार्म में उपलब्ध पक्षियों व दाने के बाजार मूल्य को भी ध्यान रखना चाहिए।

○○○○

# कुक्कुट शव परीक्षण का व्यवहारिक ज्ञान

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

एक व्यक्तिगत जीव का मृत्यु के पश्चात् व्यवस्थित परीक्षण शव परीक्षण कहलाता है। दूसरे शब्दों में यह शव के ऊतकों तथा अंगों का वैज्ञानिक परीक्षण, मृत्यु के कारण का निर्णय करना, क्षत स्थल का विस्तार से अथवा बीमारी की प्रकृति का व्यवस्थित वर्णन है।

**शव परीक्षण निम्नलिखित में सहायता करता है :–**

1. मृत्यु के कारण तर्कयुक्त निदान स्थापित करना तथा इसमें संयुक्त कारण का अध्ययन करना।
2. मुख्यतः चिकित्सा वैज्ञानिक द्वारा रोगियों में मृत्यु के समय का निर्णय करना।
3. बीमारी की प्रकृति जानना तथा मृत्यु से पूर्व पशु द्वारा प्रदर्शित लक्षणों को भली भांति जानना।
4. प्रयुक्त उपचार के प्रभाव को निर्धारित करना।
5. बीमारी की रोकथाम के सही उपायों को स्थापित करना।
6. विकृति विज्ञान, आयुर्विज्ञान, शरीर रचना विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान के क्षेत्र में ज्ञान वृद्धि करना।

यह कहा जाता है कि शव परीक्षण, शव से जीवित को विवेक का संदेश है। कुछ रोगियों में रोग निदान लक्षणों के आधार पर किया जा सकता है जबकि अन्य के निदान में प्रयोगशाला परीक्षण सहायक हो सकते है। तो भी अवशेष कुछ में शव परीक्षण एक महत्वपूर्ण नैदानिक तकनीक है।

शव परीक्षा एक बीमारी के क्रम की वैज्ञानिक समझ के लिए परम आवश्यक है। शव परीक्षा का उद्देश्य केवल विकृत परिवर्तनों को प्रकाशित करना नहीं होना चाहिए बल्कि उत्तरकालीन अध्ययन के लिए पदार्थ तथ्यों को उत्पादित करना तथा वास्तविक तथ्यों की व्याख्या करना भी है।

पक्षियों, विशेषकर कुक्कुटों, जो कि बड़ी संख्या में व्यापारिक कारणों से पाले जाते हैं, को आवश्यकता पड़ने पर पक्षीधन का स्वामी रोग निदान हेतु कुछ पक्षियों की बलि चढ़ाने के लिए सहर्ष तैयार हो जाता है। इस कारण शव परीक्षक को इच्छानुसार विभिन्न अवस्थाओं के रोगी तथा रोग के विभिन्न रूपों से आक्रान्त, प्ररूपी तथा अप्ररूपी सब तरह के पक्षियों की शव परीक्षा करने का अवसर प्राप्त हो जाता है। पक्षी शव परीक्षा, पशु शव परीक्षा की अपेक्षा कहीं अधिक सरल तथा जल्दी सम्पन्न हो सकने के कारण, शव परीक्षक को भी अनेक पक्षियों की शव परीक्षा करने में असुविधा, श्रम तथा समयाभाव की समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता।

पक्षियों के प्राणहरण की प्रक्रिया स्वयं सम्पन्न करना, शव परीक्षक के हित में एक वांछनीय तथा प्रशंसनीय कार्य है और इस आचरण को आदत में शुमार करके शव परीक्षक को पक्षी को जीवित अवस्था में ही देखने, संभालने तथा उसके विभिन्न अंगों तथा ऊतकों में विद्यमान परिवर्तनों को प्रेक्षित करने का अवसर मिल जाता है। इसी सोपान पर शरीर तापमान का मापक रक्त एवं निःश्राव के आलेपों का निर्माण तथा नमूनों का एकत्रीकरण भी किया जा सकता है। नैसर्गिक द्वारों अथवा छिद्रों से निकले श्रावों या उत्सर्जनों के नमूने तथा आलेप भी इसी समय जुटाये जाते हैं।

प्रयोगशाला पशुओं की शव परीक्षा के समान ही, पक्षियों की शव परीक्षा में शव को किसी विसंक्रामक घोल या पानी में डुबोने से संदूषण की संभावना तथा पंखों और धूल इत्यादि की गन्दगी से बहुत कुछ छुटकारा मिल जाता है। शव परीक्षा के पूर्व परीक्षा के स्थान पर कोई कागज या पोलीथीन की पतली झिल्ली को बिछा लेने से शव परीक्षा के पश्चात् अवशेषों को उसी में लपेटकर शव निस्तारण करने में सुविधा रहती है। त्वचा में कोई विशेष विक्षति विद्यमान होने से अथवा अन्य किसी कारण से त्वचा का विशेष परीक्षण

वांछित होने पर पंखों को नोचकर निकालते हैं अन्यथा पंखों को निकालने की आवश्यकता बिरले ही होती है। विक्रतिजनन के क्रम में अन्तिम सन्धि गढ़ने के लिए शव परीक्षा को ऊतक खंडों की पूर्ण व्यवस्था, ऊतक संवर्धन, जीवाण्विक संवर्धन, रासायनिक परीक्षण, परजीवी पहचान तथा अन्य आवश्यक विधि व्यवहार के द्वारा अनुसरण करना चाहिए। शव परीक्षा उपचार, विकृत रोग निदान सम्बन्धी अध्ययन में एक महत्वपूर्ण परिणाम की तरह मानी जाती है। शव परीक्षा की तुलना एक किताब खोलने एवं पढ़ने से की जा सकती है, जिसका शीर्षक निश्चित अर्थ प्रतिपादित करता हो, लेकिन यह मूल सूत्र है जो कि वास्तव में कथानक घटनाओं के अनुक्रम में एवं अन्त का वर्णन करता है। शव परीक्षा पाठ्य पुस्तक की तरह अद्भुत या अचानक प्रकृति का विषय प्रकट कर सकती है। इस प्रकार पहले से अज्ञात या रूकी हुयी घटनाओं की व्याख्या करती है।

सामान्य से आधारी विषयों तथा विशिष्ट विज्ञान समाप्ति पर केवल तभी पहुँचते हैं जबकि वे शव परीक्षा व्यवसाय द्वारा अनुसरित किये जाते हैं। यहाँ कोई देखता है, महसूस करता है तथा वैसे ही सूंघता है उन ऊतकों तथा सरल परिवर्तनों को जिनकी कि वह एक रोगग्रस्त पशु में आवृत्ति करता है। मारसेलो डोनेटो (1586) एक इटैलियन चिकित्सक की गम्भीर प्रेरणा उसकी पुस्तक डी मेडिसिन हिस्टोनिका मीराबिली में योग्यता आवृत्ति, इसकी सम्पूर्णता में विकृति विज्ञानी का उसके लिए स्पष्ट वर्णन, दो स्थायी समस्याएँ हैं जो कि शरीर को खोलने से रोकते हैं, उन्हें अपनी त्रृटियों को समझाना चाहिए जबकि रोग का कारण अस्पष्ट है। वे शेष मानव जाति की महान क्षति करते है, वे चिकित्सक को ज्ञान प्राप्त करने से रोकते हैं जो कि समान बीमारी से प्रभावित व्यक्ति विशेष को अन्तिम महान सुखों का साधन देता है। उन चिकित्सकों के लिए अल्पतर दोष भी उचित नहीं है जो आलस्य या अरूचि के कारण श्रम से सत्य की जाँच करने की अपेक्षा प्रेम से पीछे ठहर जाते हैं। यह नहीं विचारणा चाहिए कि वैसे ही व्यवहार के द्वारा वे अपने दोष को ईश्वर, अपने आप के सामने तथा बड़े समाज के सामने प्रतिपादित करें।

पशुचिकित्साविद का अन्तिम उद्धेश्य रोगों का प्रभावकारी, प्रतिबन्ध एवं नियंत्रण हैं जिसके लिए शव परीक्षा स्थिति की कुँजी अधिकारी में रहती है।

**मुर्गियों का वध एवं माँस बनाने के तरीके :**

मुर्गी का वध करने से पूर्व हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :–

1. जो मुर्गियाँ वध के लिए लाई जाऐं वे स्वस्थ हो तथा सही उम्र की हों।
2. फार्म से लाने के पश्चात मुर्गियों का हमें तुरन्त वध नहीं करना चाहिए बल्कि उन्हें कुछ समय तक वधशाला के निकट बने साफ दड़बों में रखना चाहिए तथा दाना पानी देना चाहिए। वध करने से लगभग 12 घण्टे पहले इनका दाना हटा देना चाहिए परन्तु पीने का पानी रहने देना चाहिए।
3. जिस स्थान पर मुर्गियों को वध से पहले रखा जाए वह मुर्गियों की संख्या के हिसाब से माप में सही होना चाहिए। वहाँ का वातावरण शांत होना चाहिए तथा मौसम के हिसाब से तापक्रम सही होना चाहिए।

   उपरोक्त बातों का यदि हम सावधानीपूर्वक पालन करते हैं तो हमें स्वच्छ तथा देखने में आकर्षक मांस प्राप्त हो सकेगा।

**मुर्गियों का वध करना :**

जैसा कि हम जानते हैं कि प्रत्येक प्राणी को अपना जीवन बहुत प्यारा होता है तथा उसे यदि यह पता चल जाए कि वह कुछ ही क्षणों का मेहमान है तो वह अवश्य ही अपने जीवन को बचाने के लिये या तो संघर्ष करेगा या मृतप्राय सा हो जाएगा। मुर्गी अथवा पशु का इस स्थिति में वध करना क्रूरता तो है ही साथ ही वैज्ञानिक दृष्टि से भी गलत है। अतः वध से पहले हमें मुर्गियों को बिजली का करंट देकर बेहोश कर देना चाहिए तथा बेहोश होने के तुरंत बाद ही गले में स्थिति खून की मुख्य नलियाँ काट देनी चाहिए। काटते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि सांस की नली व रीढ़ न कटने पाए। इसके पश्चात 45–60 सेकण्ड तक खून निकलने देना चाहिए।

**पंख उतारना :**

हमारे देश में प्रायः मुर्गियों के केवल पंख ही नहीं उतारे जाते बल्कि त्वचा भी उनके साथ उतार दी जाती है। ऐसा करने से त्वचा तथा उसके नीचे कि चर्बी दोनों ही बेकार चली जाती है। जैसा कि बहुत से लोग जानते होंगे कि मुर्गी की त्वचा तथा उसके साथ की चर्बी दोनों ही खाने के काम में लाए जा सकते हैं। ये दोनों (त्वचा की चर्बी) ही अवयव मनुष्य पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इनको बेकार जाने से बचाने के लिये हम वध की हुई मुर्गी को गर्म पानी में 1–3 मिनट तक डुबाते हैं अर्थात ब्राइलर के लिये पानी का तापमान 55–58 डिग्री सेंटीग्रेट तथा बूढ़ी मुर्गी के लिए तापमान 60 डिग्री सेन्टीग्रेट रखा जाता है। इसके पश्चात हाथ से या मशीनों की सहायता से मुर्गी के पंख शरीर से अलग कर दिये जाते हैं। यदि कार्य धैर्य तथा सावधानी से किया जाए तो हम देखेंगे कि पंख आसानी से अलग हो जाते हैं तथा त्वचा भी नहीं फटती है। बड़े पंख उतारने के बाद हम पाते हैं कि कुछ पखों की जड़ें मुर्गी की त्वचा पर कुछ स्थानों पर रह जाती है। इन्हें निकालने के लिये मुर्गी को तरल मोम में डुबाकर निकाला जाता है। हवा लगकर मोम जम जाता है तथा इस मोम को जब मुर्गी की त्वचा पर से छीला जाता है तो मोम के साथ–साथ पेंखों की जड़ें भी निकल आती है।

पंख विहीन मुर्गी की त्वचा को यदि ध्यान से देखा जाए तो पाया जाता है कि उस पर हमारे बालों से मिलते जुलते रोए से होते हैं। इन्हें हटाने के लिए पंख विहीन मुर्गी के शरीर को एक तेज बर्नर की आग के आसपास अच्छी प्रकार घुमाकर बालों को जला दिया जाता है।

**मुर्गी के शरीर के आंतरिक अंग, सिर तथा पैर इत्यादि निकालना :**

सर्वप्रथम एक तेज चाकू की सहायता से मुर्गी का सिर गर्दन की पहली तथा दूसरी हड्डी के पास से काटकर अलग कर दिया जाता है तत्पश्चात पैरों को जोड़ पर से काटकर अलग कर दिया जाता है। इसके बाद पूंछ की ओर स्थित गोल ग्रन्थि को चाकू से काटकर अलग कर लिया जाता है।

अब मुर्गी के पेट को सफाई से काटा जाता है तथा यह ध्यान रखा जाता है कि आंत कटने न पाए। मुर्गी को पीठ की ओर से बांए हाथ से पकड़ा जाता है तथा दाएं हाथ की अंगुलियों की सहायता से उसके आतंरिक अंग जैसे दिल, कलेजी, गिजर्ड तथा आंत इत्यादि को एक हल्का सा झटका देकर शरीर से निकाल लिया जाता है। जहाँ से आंत शरीर से जुड़ी होती है उस हिस्से को तेज चाकू से काटकर आंत तथा अन्य अंगों को शरीर से अलग कर लिया जाता है।

इसके पश्चात कलेजी, दिल तथा गिजार्ड को आंतों से अलग कर लिया जाता है। कलेजी से जुड़ी पित्त की थैली को सावधानी पूर्वक काटकर अलग कर लिया जाता है।

दिल के आस पास लगी झिल्ली तथा रक्त वाहिनियों को काटकर अलग कर लिया जाता है तथा गिजार्ड को काटकर उसे खाली कर लिया जाता है तथा उसके अन्दर अलगी झिल्ली को भी छीलकर हटा लिया जाता है।

यह सब करने के बाद मुर्गी के शरीर में पुनः हाथ डालकर अन्दर चिपके हुए गुलाबी रंग के फेफड़ों को अंगुलियों या किसी पैने चाकू की सहायता से कुरेदकर बाहर निकाल लिया जाता है तथा खाने की नली और अनाज की थैली को भी खींचकर निकाल लिया जाता है।

अंत में मुर्गी के शरीर तथा कलेजी, दिल और गिजार्ड को साफ पानी से बहुत अच्छी तरह धोकर 4 डिग्री सेंटीग्रेट तापक्रम पर नियंत्रित कक्ष या रेफ्रीजेरेटर में ठंडा होने के लिए रख देना चाहिए।

**यदि हम उपरिलिखित बातों को ध्यान में रखें तो हमें निम्न फायदे होंगे :**

1. स्वस्थ मुर्गी का मांस बनाने एवं खाने से न तो वधिक को नुकसान पहुँचेगा और न खाने वाले को ही।
2. सही उम्र की मुर्गी बेचने से वधिक को फायदा होगा क्योंकि ऐसा मांस अधिक ग्राहक लेंगे।

3. यदि थकी तथा घबराई हुई मुर्गी का वध करके मांस प्राप्त किया जाता है तो ऐसे मांस की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है। ऐसे मांस की शीघ्र खराब होने की संभावना भी रहती है। साथ–साथ मांस भी थोड़ी कम मात्रा में प्राप्त होता है।
4. वध करने के 12 घण्टे पूर्व दाना हटा लेने तथा पर्याप्त मात्रा में पीने का पानी देने से मुर्गी की आंतें काफी हद तक खाली हो जाती हैं जिससे पेट काटते समय उनके फटने का भय कम हो जाता है। आधा पचा हुआ भोजन जीवाणुओं की वृद्धि का एक बहुत उत्तम माध्यम है तथा यदि ऐसा भोजन मॉस के सम्पर्क में आ जाए तो मॉस दूषित होकर जल्दी खराब हो जाता है।
5. खून अधिक से अधिक निकले इसके लिए हृदय का काम करना आवश्यक है। अतः वध करते समय हम सांस की नली व रीढ़ को सुरक्षित रखते हैं। खून जीवाणु वृद्धि का एक उत्तम माध्यम है।
6. त्वचा तथा चर्बी सहित मांस बेचने से वधिकों को अधिक वजन होने से लाभ मिलता है तथा ग्राहक को कई पोषक तत्व प्राप्त होते हैं।
7. मुर्गी के मांस को 4 डिग्री से० पर ठंडा करने से उस पर स्थित जीवाणुओं की वृद्धि दर पर गिरावट आ जाती है तथा मॉस अधिक समय तक रखा जा सकता है।

○○○○

# कुक्कुटों में रानीखेत रोग

**डा० शशि भूषण सुधाकर**
वरिष्ठ वैज्ञानिक, भा.कृ.अ.प.– राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशुरोग संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश)

सर्वप्रथम डोयल ने सन् 1926 में इस रोग को न्यूकैसल प्रदेश में पाया था। अतः इसे न्यूकैसल डीसीज भी कहते हैं। इसमें श्वास न लेने के कारण 100% मृत्यु हो सकती है। यह रोग एक विषाणु द्वारा फैलता है। अण्डा देने वाली मुर्गियां उत्पाद न बन्द कर देती है। इस रोग में 50% तक मृत्यु हो सकती है। यह विषाणु बड़ा ही प्रतिरोधक है– अच्छे में 255 दिन, शैल में 208 दिन तक जीवित रह सकता है।

रानीखेत रोग (आर. डी.) या न्यूकैसल डिजीज सम्पूर्ण विश्व में मुर्गियों का एक अति महत्वपूर्ण रोग है। इस रोग का प्रकोप पूरे भारतवर्ष में है जिसके कारण असमय ही बहुत सारी कुक्कुटशाला बन्द हो जाता है, जिससे कुक्कुट पालक को काफी आर्थिक क्षति होता है। यह बीमारी भारतवर्ष में पहली बार उत्तराखण्ड के रानीखेत शहर में अभिलेख किया गया, जिसके कारण इस बीमारी का नाम रानीखेत रोग रखा गया है। यह रोग मुर्गियों में अचानक होंने लगती है और प्रभावित कुक्कुट शाला के मुर्गियों में तेजी से फैलने लगती है। यह बीमारी सभी उम्र के मुर्गियों में होता है लेकिन इनका प्रकोप कम उम्र के पक्षियों में अधिक एवं तीब्रता से फैलने बाला होता है एवं महामारी का रूप धारण कर लेता है ईस रूप में मृत्यु दर 90 से 100 प्रतिशत तक होती है। बडी पक्षियों में कम तीब्रता से फैलता है। इस रोग का इन्क्यूवेशन पीरियड 5 से 7 दिन का होता है। इस रोग का लक्षण एवं मृत्यु दर विषाणु के स्ट्रेन पर निर्भर करता है। यह विषाणु मनुष्य में कंजंक्टिवाइटिस, सरदर्द एवं इन्फ्लुनेंजा के तरह लक्षण उत्तपन करता है।

**कारक** : यह एक विषाणु जनित रोग है जो की एवियन परमिक्सो वायरस टाइप–1 से होता है। इस विषाणु को रोग जनकता के आधार पर लैटोजनिक,मिसोंजनिक एवं वैलोजनिक किस्मो में बंटा जाता है। लैटोजनिक स्ट्रेन लक्षण रहित संक्रमण करती है, मिसोंजनिक स्ट्रेन में बीमारी पैदा करने की क्षमता होती है तथा वैलोजनिक स्ट्रेन में मुर्गियों की मृत्यु करने की क्षमता होती है। वैलोजनिक स्ट्रेन मुर्गियों में 100 प्रतिशत तक मृत्यु कर सकता है। ईस अवस्था में मुर्गियों के सभी येग्जूडेट से विषाणु का श्राव होता है जो रोग फैलने में सहायक होता है। अतः ईस अवस्था मुर्गियों का शव–परिक्षण के नहीं कर जला देना चाहिए। रानीखेत रोग या न्यूकैसल डिजीज (आर.डी.) से बचाव के टीके बनाने में लैटोजनिक, मिसोंजनिक स्ट्रेन का उपयोग होता है। यह विषाणु 1:5000 पोटासियम परमैंग्नेट एवं 3 प्रतिशत फार्मोलिन द्वारा मिनटों में निष्क्रिय हो जाता है।
इस रोग के चार प्रारूप होते हैं :

1. **विरूलेन्ट फार्म** : यह तीव्र असर की अवस्था है तथा मृत्युदर 100% हो सकती है। बीमारी 3–4 दिन रहती है तथा कभी–कभी एक दिन में ही सब मुर्गी मर सकती है। इसके मुख्य लक्षण है, साँस लेने में विशेष आवाज (रेल्स), अधिक देर तक साँस लेने में कठिनाई, गर्दन लम्बी, खुली हुई चोंच, नाक से तरल पदार्थ का स्राव, अधिक दस्त, तापमान सामान्य से 2–3 डिग्री० अधिक तथा बाद में सामान्य से कम तापमान तथा पक्षाघात एवं कंपकपी।
2. **मिसोजेनिक प्रकार** : इसमें हानि कम होती है। मृत्युदर 5–15% तक होती है। श्वास लेने में कठिनाई, हरे रंग का दस्त, अण्डों के उत्पादन में भारी कमी पायी जाती है। अण्डे का छिलका कमजोर, असाधारण रूप का हो सकता है। पंखों तथा पैरों का लकवा हो सकता है।
3. **लेन्टोजेनिक प्रकार** : यह रोग के कम प्रभाव वाला स्वरूप है। हल्के श्वास लक्षण दिखाई देते हैं – अंडा देना कम हो जाता है। बड़ी मुर्गियों में मृत्युदर बहुत कम हो सकती है, पर छोटी उम्र में मृत्यु दर 50 प्रतिशत तक हो सकती है। इस अवस्था में ट्रेकिया में हल्की सूजन पायी जाती है।

4. **एसिम्टोमेटिक फार्म** : कोई विशेष लक्षण नहीं पाये जाते हैं। सीरोलोजिकल प्रयोग से यह अवस्था पहचानी जाती है। यह रोग किसी की उम्र के पक्षी में हो सकता है, परन्तु छोटी उम्र के पक्षी बहुत अधिक ग्रसित होते हैं।

इस रोग में गैस्पिंग खांसी, गले की खराश, रैटलिंग की आवाज मुख्यतः पाये जाते हैं। आहार उपयोग कम हो जाता है, प्यास अधिक लगती है तथा स्नायु के लक्षण अधिक दिखाई पड़ते हैं। पंख तथा पैर का लकवा पाया जा सकता है। सिर दोनों पैर के बीच में अथवा कंधों के बीच में पाया जा सकता है। मुर्गी पीछे चलती है, चक्कर खाती है, सिर दोनों पैर के बीच में अथवा कंधों के बीच में पाया जा सकता है। मुर्गी पीछे चलती है, चक्कर खाती है, सिर तथा गर्दन को घुमाती है। विकृत रूप के अण्डे पाये जाते हैं। इस रोग की पक्की जाँच हेतु प्रयोगशाला परीक्षण आवश्यक है।

**प्रसार** : ऐरोसोल या हवा के माध्यम से रोग के विषाणु एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचकर पक्षी को संक्रमित करते हैं। आगन्तुकों के माध्यम से यह रोग एक फार्म से दूसरे फार्म पर शीघ्र फैलता है।

**लक्षण** : रोग अचानक प्रकट होता है एवं इससे प्रभावित पक्षी में खांसी, श्वसन में तकलीफ, गेस्पिंग के अतिरिक्त श्वसन में विशेष प्रकार की आवाज प्रकट होती है। पक्षी द्वारा आहार का उपभोग कम एवं पानी का उपभोग अधिक हो जाता है। पक्षियों को हरे दस्त लगना। इसके अतिरिक्त क्लोनिक स्पास्म आना, कंपकंपी, गर्दन की मांसपेशियों में लकवा मार जाना आदि लक्षण दिखते हैं। विकृत रूप के चूजे पाये जाना, अण्डों का छिल्का कमजोर होना आदि लक्षण प्रकट होते हैं।

**शव परीक्षण** : श्वासनली में म्यूकस, हेमोरेज, एयरसैक का धुंधला एवं फेफड़ों में सूजन। पक्षी की आंतों में हिमोरेजिक बटन अल्सर, सूजन मिलना। प्रावेन्टिकुलस एवं सीकल टॉसिल का हिमोरेजिक मिलन, पिटिकियल हिमोरेज, एब्डोमिबल केविटी में जानी के सामान एराचो एवं कई एग कालीकल्स मिलना।

**कारक** : न्यू कैसल डिसीज पैरामिक्सोविरिडी परिवार में जीनस एवूलावायरस का सदस्य है। एवियन पैराम्किसोवायरस के दस सीरोटाइप (एपीएमवी 1–10) में एनडीवी–1 के अन्तर्गत आता है। संक्रमित कुक्कुट में नैरानिक लक्षण के आधार पर एनडीवी को पाँच पैथोराइप में वर्गीकृत किया गया है – 1. विसेरोजेनिक वेलोजेनिक 2. न्यूरोट्रोपिक वेलोजेनिक, 3. मेसेजेनिक, 4. लेन्टोजेनिक या रिस्पिरेटरी, 5. एसिम्पोयेटिक।

यह विषाणु 56 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 3 घंटे में या 60 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 30 मिनट में, निष्क्रिय कृत हो जाता है। अम्लीय पी.एच. 2 पर निष्क्रिय कृत हो जाता है। यह विषाणु ईयर से संवेदनशील होता है तथा फार्मलीन, फेनोलिक्स, क्लोरहेक्सीडीन, 6% सोडियम हाइपोक्लोराइट से निष्क्रिय हो जाता है। यह विषाणु सामान्य तापमान पर काफी दिनों तक जीवित रह सकता है विशेषकर मुर्गीयों के वीट में।

**पोषद** : कई पक्षियों (घरेलु अथवा जंगली) की प्रजातियाँ प्रभावित होती है :

- मुर्गियां अत्यधिक संवेदनशील होती है। टर्की में घातक लक्षण नहीं होता है।
- खेल पक्षियां (फीजेंट, पैट्रीज, बटेर और गिनीफाउन) तथा तोता की संवेदनशीलता में भिन्नता पायी जाती है।
- जंगली पक्षियां व जलपंडूक विषाणु के पोषद होते हैं।
- यह रोग शुतुरमुर्ग में भी रिकॉर्ड किया गया है तथा कबूतर संवेदनशील पाये गये हैं।
- रैप्टर आमतौर पर एनडी के लिए प्रतिरोधी होते हैं, (दाएत्रदार गिद्ध में गंभीर बिमारी के रिपोर्ट को छोड़कर) समुद्री ईगल आदि।

- एनडीवी से प्रभावित होने वाले अन्य पक्षी है – गल्स, ऊल्लु एवं पेलिकन।
- कौवों व रेवेन्स में भी मृत्यु रिकॉर्ड की गई है।
- पेंगुइन में भी कांभी एनडी रिकॉर्ड की गई है।
- विभिन्न प्रजातियां में विषाणु प्रभेद के आधार पर रोग दर व मृत्युदर में भिन्नता पायी जाती है।
- मनुष्य भी संक्रमित हो सकते है। जिसमें आंखों में रक्ताभ लालिमा, अत्यधिक अनुस्राव, पलकों को फलजाना, नेत्रश्लेष्मलाशीध तथा रक्तस्राव भी हो सकते हैं।

**संचरण :**
- संक्रमित पक्षियों के स्राव से प्रत्यक्ष सम्पर्क; मुख्यतः खाने व सांस लेने के द्वारा।
- दाना, पानी, उपकरण, अहाता, मनुष्य के कपड़े, जुते, बोरे, अंडा ट्रे आदि के सम्पर्क से।
- वीट में विषाणु अधिक दिनों तक जीवित रहता है अंडे के छिलके में भी।

**विषाणु के श्रोत :**
- संक्रमित पक्षी के श्वसन स्राव, निःस्राव तथा वीट।
- मृत पक्षी के सभी अंग।
- उष्मायन अवधि के दौरान विषाणु उत्सर्जन, नैदानिक रोग के दौरान तथा कुछ समय के लिए रोग से उभरने के दौरान।
- जंगली पक्षी व जलपक्षी एनडीवी के लेन्टोजेनिक पैथेटाइप के आधार माने जाते हैं।
- कुछ सिटामिन प्रजाति के पक्षी 1 वर्ष तक एनडीवी का उत्सर्जन करते रहते हैं।

**वितरण :**

वेलोजेनिक एन्डीवी, मेक्सिको, मध्य व दक्षिण अमेरिका, एशिया, मिड्लईस्ट एवं अफ्रीका तथा कनाडा में स्थानिक रूप से उपस्थित है। लेन्टोजेनिक उपभेद पूरे विश्व में पाया जाता है।

**निदान :**

उष्मायन अवधि 2–15 दिनों का होता है औसत 5–6 दिन। कुछ प्रजातियों में 20 दिन भी हो सकता है।

**नैदानिक निदान :**

एनडीवी से संक्रमित पक्षियों मं नैदानिक लक्षणों में काफी भिन्नता पायी जाती है जो निम्न कारकों पर आधारित होते हैं।

1. विषाणु पैथोटाइप, 2. पोषद प्रजाति, 3. पोषद की आयु, 4. सह संक्रमण, 5. वातावरण का प्रभाव, 6. प्रतिरक्षा स्थिति।

एनडी की निदान सिर्फ लक्षणों के आधार पर नहीं किया जा सकता है। रोगदर व मृत्युदर विषाणु उपभेद की तीव्रता, टीकाजनित प्रतिरक्षा की स्थिति, वातावरणीय स्थिति तथा मुर्गियों झुण्डों की स्थिति पर आधारित होता है।

**लेन्टोजेनिक उपभेद :**

आमतौर पर उपनैदानिक रोग उत्पन्न करते हैं जिसमें निम्न श्वसनीय लक्षण; खांसी, गास्पिंग, छींकना एवं गले की आवाज आती है। सह संक्रमण होने पर भी लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। मृत्युदर न के बराबर होती है।

**मेसोजेनिक उपभेद :**

- तीव्र श्वसनीय रोग और कुछ प्रजाति में तंत्रिका लक्षण उत्पन्न करते हैं।
- मृत्युदर आमतौर पर 10% से कम होती है।
- सहसंक्रमण की अवस्था में गंभीर लक्षण उत्पन्न होते हैं।
-

**वेलोजेनक उपभेद :**

- प्रायः गंभीर बीमारी उत्पन्न करती है तथा मृत्यु भी होती है। मुख्यतः श्वसनीय व तंत्रिका लक्षण पाये जाते हैं।
- शुरूआती नैदानिक लक्षण पाये जाते हैं।
- शुरूआती नैदानिक लक्षण निम्न होते हैं जिसमें सुस्ती, अरूचि, बिखरे पंख, सूजन, फूले नेत्र
- जैसे–जैसे रोग बढ़ता है – हरा या सफेद दस्त, सांस लेने में कठिनाई, सिर व गर्दन की शोथ, साइनोटिक मलिनीकरण सहित
- रोग की बाद की अवस्था में तंत्रिका लक्षणों में, कंपकपी, कलोनक स्पाष्म, पंख या पैर की अंशाघात/पक्षाघात, मन्यस्तंभ और गोल–गोल घुमना शामिल है।
- अण्डा उत्पादन में तीव्र गिरावट, जलीय अंसूमिन, कुरूप अण्डे, कमजोर छिलका आदि।
- इस उपभेद से प्रायः अचानक मृत्यु हो जाती है बिना किसी लक्षण के।
- जो पक्षी रोग से उभर जाते हैं उनमें तंत्रिका लक्षण होते हैं तथा अण्डा उत्पादन आंशिक या पूर्ण रूप से बंद हो जाता है।
- अटीकाकृत पक्षियों में 100% तक मृत्युदर हो सकती है।

**विभेदक निदान :**

1. फाउल कोलेरा, 2. बर्डफ्लु, 3. लेरिंगोट्रेकियाइटिस, 4. चेचक, 5. सिटाकोसिस, 6. माइकोप्लाज्मता, 7. संक्रामक ब्रोंकाइटिस, 8. एस्परजिलसता, 9. प्रबंधन त्रृटि, 10. अन्य पैटानिक्सो विषाणु, 11. बोट्लिज्म आदि

**प्रयोगशाला निदान :**

नमूने : तुरंत मृत हुए पक्षी से नमूने एकत्र करने चाहिए

**विषाणु की पहचान :**

मृत पक्षी के मूने : भुखनासिका फूरेरी, फेफड़ा, यकृत वृक्क, छोटी आंत, सीकस टांसिल, प्लीहा, मस्तिष्क, यकृत, दिल के ऊतक, अलग–अलग या एक साथ

**जीवित पक्षी के नमूने :**

ट्रेकिया, ओरोफेरिन्जियल या क्लोकल फूरटी विशिष्ट मिडीया में डालकर शिपिंग

**सीरमी टेस्ट :**

रक्त के थक्के या सीरम

**तरीके, विषाणु की पहचान :**

1. विषाणु पृथकीकरण : विशिष्ट रोगाणुमुक्त, भ्रुणयुक्त अण्डों में संरोपण तथा रक्त समूहन परीक्षण।

2. विषाणु पहचान : रक्त समूहन रोधन परीक्षण।
3. अंतःमस्तिष्किय विधि से रोगजनकता सूचकांक निर्धारण।
4. आण्विक आधार पर रोग जनकता सूचकांक निर्धारण।
5. मोनोक्लोनल प्रतिपिण्ड : एनडीवी के त्वरित पहचान हेतु और एनडछीकी आइसोरेमट्स में भिन्नता की पहचान हेतु।
6. फाइलोजेनटिक अध्ययन :– विषाणु की उत्पति एवं संचरण के त्वरित पशुपदक मूल्यांकन के लिए।
7. निदान के ाण्विक तकनीक – त्वरित पहचान हेतू।

**सीरमी जाँच :**

1. रक्त समूहन व रक्त समूहन रोधन जांच : विषाणु ग्लाइकोप्रोटीन की प्रतिपिण्ड की पहचान हेतु
2. एलाइसा एसे

**बचाव व नियंत्रण :**

स्वच्छता उपाय :

- बाह्य पक्षियों से सुरक्षित आवास, दाना एवं पानी की आपूर्ति
- उचित मृतपक्षी का निराकरण
- पक्षी झूण्ड में कीट, कीड़े व चूहों का नियंत्रण
- अशांत स्वास्थ्य स्थिति वाले पक्षियों से सम्पर्क नहीं रखना
- मनुष्यों की आवाजाही नियंत्रण
- यातायात साधनों की आवाजाही नियंत्रण, विसंक्रमण उपकरणों का विसंक्रमण

**प्रकोप के दौरान :**

- प्रभावी क्वारेन्टाइन व आवाजाही नियंत्रण
- सभी संक्रमित व सम्पर्क में आये पक्षियों का संक्रमण
- 21 दिन के बाद ही पुनः पक्षी धारण
- परिसर अहाते की सफाई व विसंक्रमण

**स्वास्थ्य उपाय :**

पारस्परिक जीवित विषाणु टीका – 2 समूह

1. लेन्टोजेनिक टीका (उदाहरण : हिचनर बी1; लासोटा, बी4, एनडीडब्ल्यू, आई2 एन एफ)
2. मेसेजेनिक टीका (उदाहरण : रोकिन; मुक्तेश्वर एवं कोमोरोव)

जीवित विषाणु टीका पक्षियों में पीने के पानी के साथ दिया जाता है, एयरोसोल स्प्रे, या अन्तःनासिका या आँखों में बूंद के माध्यम स भी दिया जाता है। कुछ मेसोजेनिक उपभेद के टीके अन्तःत्वचा संरोपण द्वारा भी दी जा सकती है।

**निष्क्रियकृत टीका :**

- जीवित विषाणु टीके के मुकाबले अधिक महंगा होता है।

- इसे प्रति पक्षी संरोपित करना पड़ता है। अंतःमांसपेशिय, अधोत्वीय विधि से।
- इस टीके का फायदा है कि विषाणु का आगामी प्रसार नहीं होता है तथा विपरीत श्वसनीय प्रतिक्रिया नहीं होती है।
- नवीन पुर्नसंयोजक टीका का भी प्रयोग किया जा सकता है
- दुनियाँ की मुर्गीपालन उद्योग के लिए रानीखेत रोग प्रमुख खतरा बन गया है।

○○○○

# कुक्कुटों में संक्रामक बर्सा रोग या गमबोरो रोग

डा० दीपक कुमार
सहायक प्राध्यापक, पशु व्याधि विज्ञान विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

संक्रामक बर्सा रोग या गमबोरो रोग को संयुक्त राज्य अमेरिका के गमबोरो नामक स्थान से जोड़ा गया है, जहाँ वैज्ञानिक कोसग्रोव ने इसे नये रोग के रूप में पहचाना था। भारत में यह रोग वर्ष 1971 में पहचाना गया था तथा वर्ष 1980 में इसे झारखण्ड में पहचाना था। भारत में यह रोग भयावह रूप ले चुका था, परंतु अब टीकाकरण आदि द्वारा काफी नियंत्रित हो गया है। इस रोग के भारत के बिहार, पं बंगाल, एवं दक्षिण भारतीय राज्यों के साथ ही चीन व नेपाल में भी पाये जाने के प्रमाण मिलते हैं।

## कारण

यह रोग आम भाषा तथा लोगों में आई.बी.डी. के नाम से जाना जाता है। संक्रामक बर्सा रोग का विषाणु आर.एन.ए. धारक और 50–60 आकार का होता है। इस विषाणु का नाम बिर्नाविषाणु है जो बिर्नावायरिडी कुल के अंतर्गत आता है। इन विषाणु की किस्मों को प्रतिजन के आधार पर दो सीरमी प्रकारों 1 तथा 2 में बांटा गया है। रोगजनकता के आधार पर इन्हें चार प्रकारों में बांटा गया है।

## विक्षतियाँ

मृत पक्षी में निर्जलीकरण के लक्षण अक्सर मिलते हैं। कम उग्र प्रकार के रोग को छोड़कर अन्य रोगों में रुधिरांक रक्तस्राव पैरों की मांस पेशियों आदि में अक्सर मिलते हैं। ग्रंथिलजठर की श्लेष्मकला में भी रक्तस्राव मिलता है, विशेषकर ग्रंथिलजठर तथा पेषणी जहाँ मिलते हैं, वहां पर कभी–कभी हृदय की पेशियों में चर्बी में भी रक्तस्राव मिलता है।

बर्सा ऑफ फैब्रीसियस में सबसे महत्वपूर्ण क्षत मिलते हैं। प्रारंभ में बसा दुगुने आकार का, शोफमय, पीलापन लिए हुए तथा सफेद धारीदार दिखता है। कभी–कभी बर्सा रक्तस्राव के कारण बड़ा तथा लाल हो जाता है। बर्सा के आसपास भी शोथ मिलता है। कभी–कभी शोथमय बर्सा में रुधिरांक रक्तस्राव मिलता है, बाद की अवस्था में बर्सा छोटा हो जाता है तथा उसके अंदर परिगलित ऊतक की गुठली जैसी मिलती है। प्लीहा प्रारंभ में कुछ बड़ी तथा सफेद दाग वाली होती है, परंतु बाद में छोटी हो जाती है।

वृक्कों में महत्वपूर्ण क्षत मिलते हैं। वे कुछ बड़े तथा भूरे के बजाय सफेद हो जाते हैं, क्योंकि उनमें यूरेटों का जमाव हो जाता है। वृक्क की नलिकाएं सफेद तथा उभरी हुई दिखती हैं। यह अधिक मिलने वाला क्षत है।

## मृत्युदर

विभिन्न देशों की विषाणु उग्रता में अंतर होने से मृत्युदर में भी अंतर आ जाता है। उदाहरण के लिए, उत्तर तथा दक्षिण अमेरिका में कम, मध्यपूर्व एशिया में मध्यम तथा जापान, थाइलैंड, इंग्लैंड, हॉलैंड, दक्षिण अफ्रीका तथा भारत में अधिक मृत्यु दर पाई जाती है। मृत्युदर 1 से 6 प्रतिशत तथा कभी–कभी बिना टीका दिए पक्षियों में 80 प्रतिशत तक पायी जाती है। मृत्यु का ग्राफ विशेष प्रकार का होता है। मृत्यु अधिकतर 6–7 दिन तक होती है, जिसके बीच के समय में मृत्यु शिखर पर पहुंचती है।

## निदान

(i) रोगी पक्षियों की उम्र, बर्सा एवं वृक्क आदि क्षत तथा मृत्यु के ग्राफ रोग का विश्वसनीय निदान देते हैं।

(ii) विषाणु पृथक्करण तथा पहचान : रोगी पक्षी के तीव्र रोग की अवस्था में लिया गया बर्सा विषाणु पृथक्करण के लिए उपयुक्त होता है। इसके लिए 9 से 11 दिन के कुक्कुट भ्रूण की जरायु अपरापोषिकीय कला पर संरोपण करने पर भ्रूण 3 से 5 दिन में

मृत हो जाते हैं तथा उनकी त्वचा, जोड़ तथा अंगुलियों में रक्तस्राव मिलता है। अंडे पर संवर्धित विषाणु कुक्कुट भ्रूण तंतुप्रसू या बर्सा की कोशिकाओं में संवर्धित हो सकता है।

(iii) रोग से बचे कुक्कुटों के सीरम या अतिप्रतिरक्षित खरगोश के सीरम को फलोरेस्सीन आइसोथायोसायनेट से युग्म करके विषाणु को रोगी पक्षी या कोशिका संवर्ध में दर्शाया जा सकता है।

(iv) ऐगार जैल अवक्षेपण परीक्षण : इस परीक्षण में संक्रमित बर्सा का फॉस्फेट बफर सेलाइन में निलंबन बनाकर टीकाकरण के लिए या रोगी पक्षी के सीरम के विरुद्ध उपयोग करते हैं।

(v) एलाइजा परीक्षण : यह परीक्षण अत्यंत विश्वसनीय है। इसके लिए परिष्कृत विषाणु की परत सूक्ष्म अनुमापन प्लेट में बनाई जाती है, जो प्रतिजन का कार्य करती है। आजकल एलाइजा परीक्षण के लिए बाजार में किट उपलब्ध है। परीक्षण को आँखों या एलाइजा रीडर द्वारा आंका जा सकता है।

**रोकथाम एवं उपचार :**

(i) बायोसुरक्षा : यह विषाणु अत्यंत स्थाई होता है। अतः संक्रमित फार्म को आग द्वारा या चूने के छिड़काव तथा सर्वोत्तम आयोडीनयुक्त विसंक्रामक, जैसे आयोडोफोर का उपयोग कर विषाणु रहित बनाना चाहिए। पक्षियों के दो बैच के बीच में बिछावन तथा अन्य आर्गेनिक कचरों को अच्छी तरह निकाल देना चाहिए।

(ii) आनुवंशिक बचाव : अंडा उत्पादक नस्ल के चूजों में अधिक (लगभग 80 प्रतिशत) तथा ब्रॉयलर चूजों में कम (20–30 प्रतिशत) मृत्युदर देखी गई है।

(iii) माता से प्राप्त प्रतिर्पिड : यदि प्रजनक पक्षियों में मृत विषाणु वाला टीका दिया जाए, तो उन मुर्गियों से प्राप्त चूजों के अधिक टाइटर में प्रतिरक्षा प्रतिपिंड पाये जाते हैं, परंतु प्रजनक पक्षियों में टीका न देने की स्थिति में उनसे प्राप्त चूजों में गहन, जीवित विषाणु वाला टीकाकरण कार्यक्रम चलाया जाता है।

**टीकाकरण** : संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में डेल्वास गमबोरो LZ 228 E टीका वाले विषाणु का प्रायोगिक परीक्षण में प्रयोग अत्यंत तीव्र रूप में मेरेक रोग से बचाव में उपयोगी पाया गया था। यही नहीं, इसके प्रयोग से पक्षियों की शारीरिक वृद्धि 30 ग्राम प्रति ब्रॉयलर अधिक देखी गई।

भारत में निम्न प्रकार के टीके संक्रामक बर्सा रोग से बचाव के लिए उपलब्ध है :

(i) नम्र किस्म (लूकर्ट किस्म) का टीका : यह टीका विषाणु माता से प्राप्त प्रतिरक्षियों द्वारा उदासीन हो सकता है, अतः बर्सा में पहुंचकर प्रतिरक्षी बनाने में चूक सकता है।

(ii) मध्यम या कुछ रोगजनक (ज्योर्जिया किस्म) टीका : यह किस्म माता से प्राप्त प्रतिरक्षियों के होते हुए भी अच्छा कार्य करती है।

(iii) मृत टीका विषाणु : इस तरह के टीके तैलीय इमल्शन के रूप में मृत विषाणु मिलते हैं। इसका गुण यह है कि यह विषाणु मृत होने के कारण बर्सा या अन्य भागों में नहीं पहुंचता और न ही प्रतिरक्षा तंत्र का दमन करता है।

इन टीकों के निर्माताओं में वेंट्री ब्रायलॉजिकल्स इंडिया तथा इंडोवैक्स प्राइवेट लि. आदि सम्मिलित हैं, जिन्होंने अलग–अलग टीकों का अलग–अलग उम्र तथा कुक्कुट प्रकारों के अनुसार जानकारी उपयोग की सलाह दी है।

○○○○

# कुक्कुटों में मैरेक रोग

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

मैरेक रोग एक विश्वव्यापी, विषाणुजनित रोग है, जो तंत्रिकाओं या आंतरिक अंगों को क्षतिग्रस्त कर देता है। भारत में भी यह विनाशकारी रूप में वर्ष 1985 तक रहा, परंतु अब अच्छे टीके उपलब्ध होने के कारण अधिकांश कुक्कुट फार्म इस रोग से सुरक्षित हैं।

**कारण**

यह रोग डी.एन.ए. किस्म के हर्पिस विषाणु द्वारा होता है। मैरेक विषाणु 80 से 100 नैनोमीटर अकार का होता है, जो संक्रमित कोशिकाओं के केन्द्रक में तथा कभी–कभी कोशिका द्रव में मिलता है। इससे मिलता–जुलता परंतु रोग न करने वाला एक और हर्पिस विषाणु टर्की के रक्त से पृथक किया गया है, जिसे टर्की का हर्पिस विषाणु या एच.वी.टी. विषाणु कहते हैं। इस विषाणु को मैरेक रोग से बचाव का टीका बनाने के काम में लाया जाता है। इन दोनों विषाणुओं को पीतक कोश द्वारा प्रवेश कराने पर कुक्कुट या बतख के भ्रूण में क्षत उत्पन्न होते हैं। मैरेक विषाणु तीन प्रकार के प्रतिजन उत्पन्न करता है, जिन्हें A, B तथा C प्रतिजन कहते हैं। इनमें B तथा C अवक्षेपण करते हैं। चौथा प्रतिजन कोशिका कला से संबद्ध रहता है और वह अर्बुद विशिष्ट प्रतिजन है। यह प्रतिजन विषाणु से असंबंधित परंतु मैरेक रोग अर्बुद से संबद्ध है जिसे सतही प्रतिजन या माटसा कहते हैं। मैरेक रोग विषाणुओं को तीन किस्मों में बांटा गया है : (किस्म 1, किस्म 2 तथा किस्म 3)। किस्म 1 में मैरेक विषाणु तथा उनके उग्रता क्षीण किस्में शामिल हैं। किस्म 2 में रोग अनुत्पादक तथा कोशिका संवर्ध में छोटे कोशिका विक्षत कारक किस्में होती है। तीसरी किस्म में एच वी टी सम्मिलित हैं।

**परपोषी**

मैरेक रोग मुख्यतः कुक्कुटों का रोग है, परंतु कुछ रिपोर्ट फीजेन्ट, टर्की, जंगली मुर्गी, जापानी क्वेल के रोगी होने की भी है। कुक्कुटों में संक्रमण किसी भी उम्र में हो सकता है, परंतु चौथे सप्ताह के बाद शायद ये सबसे सुग्राहय होते हैं, जब माता से प्राप्त प्रतिरक्षी सबसे कम हो जाती है। रोग दो प्रकार का होता है। उग्र प्रकार का रोग डेढ़ से ढाई माह की उम्र में होता है और दूसरा चिरकारी तथा तंत्रिका प्रभावित करने वाला रोग 3 से 5 माह की उम्र में होता है। इस प्रकार में 3 माह में सर्वाधिक रोग होता है।

**विक्षतियाँ**

चिरकारी रोग अधिक महत्वपूर्ण है। इस रोग से प्रभावित पक्षियों की जाँघ के भीतरी भाग में स्थित सियाटिक तंत्रिका, पंखों की मुख्य श्वास तंत्रिका, आंतों की सीलियक तंत्रिका, गर्दन की वेगस तंत्रिका आदि को बारीकी से देखने पर, ये चपटी के बाजय गोल चमकीली तथा सामान्य से मोटी दिखती हैं। कुछ तंत्रिकाएं अप्रभावित रह सकती हैं।

तीव्र मैरेक रोग में यकृत् प्लीहा, डिम्बकोष, वृक्क, ह्रदय आदि अंगों में सफेद उभरे हुए मोटे तौर पर गोलाई लिए अर्बुद मिलते हैं। थाइमस अपुष्ट होता है। बर्सा ऑफ फैब्रीसियस सामान्य से कुछ छोटा हो सकता है।

**मृत्युदर**

मैरेक विषाणु की किस्मों की रोगजनकता में बहुत श्रेणियां होती हैं, अतः मृत्युदर भी 25 प्रतिशत या उग्र किस्म के रोग में 50 से 60 प्रतिशत तक पहुँच सकती है। चिरकारी मैरेक रोग जो अधिक होता है, उसमें केवल 10 से 30 प्रतिशत मृत्युदर होती है।

**रोकथाम एवं उपचार**

(i) मैरेक रोग का उपचार संभव नहीं है, अतः केवल बचाव ही संभव है। आजकल बचाव के अच्छे टीके उपलब्ध हैं। भारत में अधिकतर HVT की FC 126 किस्म से बने टीके अनेक कंपनियों द्वारा निर्मित किये जाते हैं। इन टीकों को चूजे निकलते ही ऊष्मायित्र में ही पेशियों में इंजेक्शन के रूप में दिया जाता है। अतः बेचे जाने वाले चूजे एम.डी. का टीकाकरण प्राप्त हैं, यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए। यह टीका रोग उत्पादक विषाणु को शरीर में प्रवेश तथा विषाणुरक्तता उत्पन्न करने से नहीं रोक सकता, परंतु रोग की उत्पत्ति को लगभग 80 प्रतिशत कम कर देता है। उदाहरण के लिए, यदि एक क्षेत्र में 20 प्रतिशत पक्षी रोगग्रस्त होते थे, तो टीका देने के बाद केवल 4 प्रतिशत तक ही रोगी हो सकते हैं। फार्म में विसंक्रमण, सफाई तथा बाहरी लोगों, पक्षियों आदि के प्रवेश पर प्रतिबंध द्वारा यह प्रतिशत (4 प्रतिशत) नगण्य पर आ सकता है। ब्रॉयलरों में कम उम्र के कारण रोग की समस्या नहीं है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में अतिउग्र विषाणुओं से रोग होने के कारण द्वि–विषाणुधारक टीके उपयोग में लाये जाते हैं। इनमें सीरमी किस्में 2,3, C-CVI-988/Rispens तथा R2 आदि सम्मिलित हैं।

(ii) प्रजनन द्वारा मैरेक रोगरोधी नस्लें बनाने के भी प्रयत्न विदेशों में हुए हैं, परंतु अभी यह विधि अधिक प्रचलित नहीं है।

(iii) मैरेक रोग के टीकाकरण से माइकोप्लाज्मा के संक्रमण, कॉक्सीडियारुग्णता आदि रोगों में भी कमी पायी गयी है।

(iv) मैरेक रोग चूजों में हो सकने की संभावना का पूर्वानुमान भी कोशिका संबंधित प्रतिरक्षा जांच द्वारा संभव है। इससे रोग निरोधक पक्षियों का प्रजनन संभव है।

(v) टीकों के उपयोग, किस्में तथा खुराक आदि की विस्तृत जानकारी नामक पुस्तक में दी गयी है।

○○○○

# कुक्कुटों में चेचक रोग

**डा० शशि भूषण सुधाकर**
वरिष्ठ वैज्ञानिक, भा.कृ.अ.प.– राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशुरोग संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश)

कुक्कुटों में चेचक रोग कभी–कभी बड़ी समस्या पैदा कर देता है। इसके अलावा यह रोग तीतर, कबूतर, बत्तख हंस आदि अन्य पक्षियों को भी होता है।

यह रोग किसी भी आयु के पक्षियों में हो सकता है और आम तौर पर यह रोग पठौर तथा अण्डा देने वाली मुर्गियों में होता है। बड़ी उम्र के पक्षी चेचक निकलने के बाद आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं रहते, उनसे अण्डों का उत्पादन कम हो जाता है। उनका वजन घट जाता है और वे स्वस्थ पक्षियों में रोग की छूत फैलाने का साधन बनते हैं। चेचक के विषाणु कड़ी सर्दी को सहन कर सकते हैं। यह रोग वर्ष के ठंडे मौसमों में जब मुर्गीघरों में बहुत से पक्षी एक साथ बन्द रखे हों और ठंड के कारण एक दूसरे के निकट सम्पर्क में आते हैं तो रोग ज्यादा फैलता है। त्वचा, मुँह या गले में किसी चोट का या खरोंच के जरीये इस रोग के विषाणु स्वस्थ पक्षियों तक पहुँचाने में मदद करते हैं।

**रोग के प्रकार :**

चेचक के दाने शरीर के विभिन्न भागों की त्वचा पर या आँखों के आस–पास जहाँ कहीं निकलते हैं उसी के अनुसार उसको नाम दिया जाता है।

**त्वचा की चेचक :**

इसमें चेहरे और गले की त्वचा पर छोटे फफोले हो जाते हैं। और जल्दी ही फफोले सख्त और मस्सी जैसे बन जाते हैं और बाद में खुर्रट बन कर गिर जाते हैं। यदि अण्डा देने वाली मुर्गियों में यह रोग फैला हो, तब अण्डा उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। पक्षियों को तेज बुखार भी होता है जिससे पक्षी दाना कम खाते हैं।

**गले की चेचक :**

इसमें मुँह और गले की झिल्ली पर रोग का असर होता है वहाँ भूसी जैसी छोटी–छोटी पीले रंग की पपड़ियाँ पैदा हो जाती हैं और जो बाद में बढ़कर मोटी हो जाती है। और पनीर के टुकड़ों जैसी दिखाई देती हैं यह पपड़िया बढ़कर मुँह और गले की बगलों और कामों में बनती हैं और इस प्रकार सांस लेने और पानी पीने में बाधा डालती हैं। यदि इन पपड़ियों को निकाल दिया जाये तो उनकी जगह पर कच्चे लाल और उभरे हुए घाव बन जाते हैं। इस प्रकार की चेचक में पक्षियों की मृत्यु हो जाती है।

**आँख की चेचक :**

इसमें आँखों में पानी गिरता है और उसके बाद जल्दी ही पलकों पर सूजन आ जाती है उन पर फफोले पैदा हो जाते हैं। फफोलों से निकलने वाला पानी अधिक हो जाता है और गाढ़ा एवं पीले रंग का हो जाता है। जो बाद में जल्दी ही सूख जाता है।

**रोग का निदान :**

आमतौर पर रोग का निदान, रोग के लक्षणों को देखकर आसानी से किया जा सकता है। कभी–कभी विटामिन की कमी से होने वाले लक्षणों को आँखों की चेचक का लक्षण समझ लिया जाता है। यदि चेचक रोग को ठीक तरह से पहचानने में कई कठिनाई

हो तो प्रयोगशाला की विधियों द्वारा रोग का सही निदान किया जा सकता है।

**रोकथाम :**

चेचक का कोई इलाज नहीं इसलिए इस रोग के लिए किसी तरह की कोशिश करना, बेकार पैसा खर्च करना है। कोई उपयुक्त रोग रोधक टीका लगाकर रोग को छूत से फैलने से रोका जा सकता है इसके लिए दो तरह के टीके उपलब्ध है।

1. कबूतर की चेचक के विषाणु से तैयार किया गया टीका।
2. मुर्गियों की चचेक के विषाणु से तैयार किया गया टीका।

मुर्गियों की चेचक के विषाणु से तैयार किया गया टीका विषाणुओं की कुछ चुनी हुई किस्मों से तैयार होता है और उस को लगाने से मुर्गियों को रोग रोधक क्षमता प्राप्त हो जाती है।

टीका लगाने के दो तरीके हैं। इनमें से किसी भी तरीके से टीका लगाया जा सकता है। पहले तरीके से जिस पक्षी को टीका लगाना हो उसकी जाँघ पर लगभग दस पंखों को जड़ से उखाड़ लेते हैं और जब पंख उखड़ी हुई जगह से पानी सा निकलने लगता है तब वहाँ टीके की दवा मल देते हैं। दूसरे तरीके के अनुसार टीका लगाने के लिए एक विशेष प्रकार का औजार इस्तेमाल किया जाता है। इस औजार में दो नोकों वाली एक सुई लगी होती है और सुई की हर एक नोक में नुकीले सिरे की ओर लम्बा एक खाँचा होता है। इस औजार को टीका लगाने के लिए हर बार वैक्सीन में डुबो लेते हैं और फिर पंखों के बीच में रखकर पक्षी के शरीर में चुभो देते हैं। आज कल मांस पेशी में लगने वाला टीका उपलब्ध है इसमें 0.2 मि०ली० टीका इन्जेक्शन की सहायता से पंख की मांसपेशी में लगाते हैं। पक्षियों में टीका 6 से 9 सप्ताह की आयु पर तथा 14 से 16 सप्ताह की आयु पर लगाने से रोग फैलने की सम्भावना बहुत कम होती है।

○○○○

# कुक्कुटों में श्वासनाल रोग

डा० सविता कुमारी
सहायक प्राध्यापक, पशु सुक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना (बिहार)

दीर्घकालीन श्वासनाल रोग (सी.आर.डी.) आई.बी. तथा कंड व श्वासनाल संक्रमण (आई.एल.टी.) मुख्य हैं।

**सी.आर.डी. :**

कारण व आर्थिक महत्व :

यह रोग प्रमुख रूप से मुर्गियों तथा टर्की में होने वाला रोग है तथा एक प्रकार के माइकोप्लाज्मा जिसका कि नाम माइकोप्लाज्मा गैलीसैप्टीकम है के द्वारा होता है। चूजों में यह रोग अधिक घातक होता है तथा इसके कारण चूजों में मृत्युदर अन्य संक्रामक रोगों के साथ होने पर लगभग 30 प्रतिशत तक पहुंच जाती है। वयस्क मुर्गियों में यद्यपि मृत्युदर शून्य रहती है परन्तु अंडा देने वाली मुर्गियों में अंडा उत्पादन रूक जाने के कारण तथा मांस के लिये पाली जाने वाली मुर्गियों की वृद्धि से उनके भार में कमी आ जाने के कारण बहुत अधिक आर्थिक हानि होती है। इस रोग के प्रारम्भिक लक्षणों में पक्षियों को साँस लेने में कठिनाई, हाँफना, हाँफते–खाँसते समय नाक से पानी का बहाना आदि मुख्य हैं।

**आई.बी. तथा आई.एल.टी. :**

यह दोनों रोग दो भिन्न–भिन्न विषाणुओं के द्वारा होते हैं। इनके प्रमुख लक्षणों में खाँसते रहना, छींके आना आदि मुख्य हैं। आई.बी. रोग चूजों में अधिक घातक होता है जिसके कारण चूजों में मृत्यु, पक्षियों में शारीरिक भार में कमी, वयस्क अंडा देने वाली मुर्गियों में अंडा उत्पादन में कमी आदि हैं।

आई.एल.टी. यद्यपि सभी वर्ग की मुर्गियों को प्रभावित करता है। इस रोग के प्रमुख लक्षणों में साँस का कम हो जाना, हाँफना, खून मिश्रित कफ का आना आदि हैं। इस रोग के कारण मुख्य हानि मुर्गियों की मृत्यु अंडा न देने वाली मुर्गियों की संख्या में वृद्धि तथा अंडा उत्पादन में भारी कमी का आना है।

**रोग फैलने के कारण :**

ये दोनों रोग श्वासनाल को प्रभावित करते हैं तथा रोग के जीवाणु साँस के साथ शरीर मे प्रवेश करते हैं। पक्षियों के समूह में यह रोग कुछ रोगवाहक पक्षियों के द्वारा आ सकता है जो कि हवा या साँस के द्वारा दूसरे अन्य पक्षियों में फैलता है। आई.बी. रोग आई. एल.टी. रोग के अपेक्षा संक्रामक होता है तथा तेजी से फैलता है।

**रोग के लक्षण :**

1. **सी.आर.डी. :** यह रोग चूजों में अधिक घातक होता है तथा इसके मुख्य लक्षणों में हाँफना, नाक, का बहना तथा खाँसते रहना मुख्य है। पोषक तत्वों का अभिग्रहण कम हो जाता है। यह रोग अन्य रोगों जैसे जीवाणुजनित दस्त, अन्य विषाणु रोग जैसे कि रानीखेत रोग या आई.बी. के साथ होने पर यह और अधिक घातक होता है। इसमें अंडों से चूजों में स्थानान्तरित हो जाता है।
2. **आई.बी. :** विषाणु के शरीर में प्रवेश के 18 से 36 घण्टे बाद लक्षण स्पष्ट होने लगते हैं। इस रोग के मुख्य लक्षणों में पक्षियों का हाँफना, खाँसते रहना, नाक से पानी बहना आदि हैं जो विशेषतः चूजों में अधिक स्पष्ट दिखाई देते हैं। इसके कारण मुर्गियों की वृद्धि दर में कमी आ जाती है तथा अंडे देने वाली मुर्गियों में अंडा उत्पादन में लगभग 25 प्रतिशत कमी हो जाती है।

3. **आई.एल.टी.** : यह रोग लगभग आई.बी. की तरह का ही होता है। इस रोग में पक्षियों को साँस लेने में कठिनाई होती है तथा यह रोग धीरे–धीरे फैलता है। इस रोग में विषाणु के शरीर में प्रवेश के 6 से 12 दिन में लक्षण प्रकट होने लगते हैं। खाँसी में खून मिश्रत कफ आना इस रोग का मुख्य लक्षण है।

**निदान :**

1. छोटे चूजों श्वासकष्ट तथा रात्रि में गुड़गुड़ाहट की आवाज, बड़े पक्षियों में अंडा उत्पादन में गिरावट, अंडों के कवच में परिवर्तन तथा अंडे के गाढ़े ऐल्बुमिन का पतला पड़ना रोग निदान में सहायक है।
2. **विषाणु का संवर्धन** : विषाणु के संवर्धन के लिए श्वासप्रणाल या वृक्क का निलंबन बनाकर 9 से 12 दिन के कुक्कुट भ्रूण के अपरापोषिकीय कोश में संरोपित किया जाता है। कई बार अपरापोषिकीय द्रव को इसी तरह भ्रूण में संरोपित करने पर सातवें दिन भ्रूण में कुबड़ापन, वामनता देखी जाती है।
3. विषाणुधारी अपरापोषिकीय द्रव (ऊपर की विधि द्वारा) को सुग्राही चूजों के श्वासप्रणाल में संरोपित करने पर 18 से 36 घंटों में श्वासरोग के लक्षण उभरते हैं।
4. उदासीनीकरण परीक्ष, रोग प्रतिकारक प्रतिदीप्ति परीक्षण या ऐगार जैल अवक्षेपण परीक्षण भी सरल तथा विश्वसनीय है। एक मतानुसार संक्रामक श्वसनीशोथ का पक्का निदान उदासीनीकरण परीक्षण द्वारा ही प्राप्त करना चाहिए।
5. **विषाणु उपभेद** : संक्रामक श्वसनीशोथ विषाणु के 21 से अधिक उपभेद पहचाने जा चुके हैं, जिनमें मैसाचुसेट्स, कनेक्टिकट, ऑस्ट्रेलियन 'टी', बाडैट, कई ब्रितानी तथा जर्मन उपभेद शामिल हैं। इन सभी को प्लाक रिडक्शन परीक्षण द्वारा 8 वर्गों में बाँटा गया है।
6. **रानीखेत रोग से विभेदक निदान** : रक्त समूहन रानीखेत रोग का विशिष्ट गुण है, परंतु आई.बी. विषाणु का नहीं। आई. बी. विषाणु 37 डिग्री सेल्सियस पर 1 प्रतिशत ट्रिप्सिन में ऊष्मायित करने पर केवल कुक्कुट की लोहितकोशिका समूहन का गुण प्राप्त कर सकता है।

# कुक्कुटों में हैजा रोग

डा० सुधांशु शेखर
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

कुक्कुट हैजा तीव्र तथा संक्रामक रोग है, जिसमें मृत्युदर काफी अधिक होती है। कभी–कभी यह रोग अनुतीव्र या चिरकारी रूप से भी होता है।

**कारण**

यह रोग पास्चुरैला मल्टोसिडा नामक द्विध्रुवीय ग्रैम अग्राही तथा गतिहीन जीवाणु द्वारा होता है। यह 7.2 से 7.8 पी एच पर 57 डिग्री सेल्सियस तापमान में संवर्धित किया जा सकता है। कालोनी की बनावट के आधार पर चिकनी तथा अल्पपारदर्शी कालोनियां उग्र किस्म की द्योतक हैं, जबकि खुरदरी और नीलापन लिए हुई कालोनियां कम उग्र होती हैं। कैप्सूल में पाये जाने वाले प्रतिजनों के आधार पर इन्हें A, B तथा D किस्मों में बांटा जा सकता है।

**परपोषी**

यह रोग कुक्कुटों, हंस, टर्की, गिनी फाउल, कबूतर, फीजेन्ट तथा कुछ जंगली पक्षियों में भी होता है। 15 सप्ताह से कम उम्र के कुक्कुट रोग के अधिक सुग्राह्य होते हैं। रोगकारक जीवाणुओं को नासिका एवं नेत्रश्लेष्मला में बिन्दुपात करने से रोग उत्पन्न हो जाता है।

चूहे, खरगोश तथा कबूतरों में त्वचा या मांसपेशियों में इंजेक्शन द्वारा भी पूतिजीवरक्तता रूप का रोग उत्पन्न किया जा सकता है।

**लक्षण**

रोग प्रारंभिक अवस्था में तीव्र होता है, परन्तु बाद में अनुतीव्र तथा चिरकारी रूप में भी होता है। रोगी पक्षी सुस्त हो जाते हैं, खाना–पीना छोड़कर बैठे रहते हैं। श्लेष्मकलाएं, कलगी तथा गलचर्म नीलापन धारण कर लेते हैं। नाक तथा चोंच से स्राव निकलता है। ऊँचा ज्वर होता है तथा बाद में हरे पीले दस्त होते हैं। इस रूप में पूतिजीवरक्तता भी पाई जाती है।

चिरकारी रोग स्थानीय भागों, जैसे कोटरों, गलचर्म, जोडों, पादगद्दी आदि में संक्रमण तथा सूजन उत्पन्न करता है। कभी–कभी कान प्रभावित होने से मन्यास्तंभ भी देखा जाता है।

**विक्षतियाँ**

अतितीव्र रोग में कोई विशेष क्षत नहीं मिलते, अधिकांश शरीर के अंगों में शिराक्ताधिक्य मिलता है। हृदय के ऊपर, यकृत, ग्रंथिल जठर, पेषणी तथा आंतों की सीरमीकला पर रुधिरांक या बड़े रक्तस्राव के धब्बे मिलते हैं। यकृत् के क्षत विशिष्ट व्याधिज्ञापक होते हैं। रोग के कारण यकृत् कुछ बड़ा हो जाता है तथा उसमें परिगलन द्वारा सफेद दाग दिखाई देते हैं। डिम्बग्रंथियों में टूटे हुए पीतक तथा रक्ताधिक्य पाया जाता है।

फेफड़ों में अनुतीव्र रोग में फाइब्रिनी निमोनिया तथा सीरोफाइब्रिनी हृदयावरण शोथ मिलता है। चिरकारी रोग में पीला बदबूदार, पीतक के समान स्राव प्रभावित भागों में मिलता है।

**सूक्ष्मदर्शी विकृतियां :**

1. रक्त के लेप को अभिरंजित करने पर जाँच में तीव्र या अतितीव्र रोग के द्विध्रुवीय जीवाणु मिलते हैं।
2. रक्त लेपों तथा अंगों में जीवाणुओं का मिलना।
3. हृदय के रक्त या अन्य अंगों से जीवाणुओं का संवर्धन करना। सड़े पक्षियों की अस्थिमज्जा संवर्ध्दन के लिए उपयुक्त रहती है। संवर्धन के लिए रक्त ऐगार, गोमांस ऐगार आदि उपयुक्त होते हैं। ओस की बूँद जैसी कालोनियां 24 घंटे में दिखाई दे सकती हैं।
4. रक्त या अन्य प्रभावित अंगों का निलंबन कबूतर, गौरैया आदि में संरोपित करने पर वे 24 घंटे में मर जाते हैं तथा उनके रक्त में द्विध्रुवीय जीवाणु मिलते हैं। सफेद चूहों या खरगोश में भी 0.2 मि.ली. निलंबन अंतःपर्युदर्या इंजेक्शन देने पर भी उनकी 24 से 46 घंटे में मृत्यु हो जाती है।

**रोकथाम एवं उपचार**

इसकी रोकथाम रोगी तथा रोगवाहक पक्षियों का इलाज, बुझे चूने का क्षेत्र तथा घरों में छिड़काव, फर्श तथा उपकरणों का 1 प्रतिशत फार्मेलिन या 1 : 5000 मरकरी क्लोराइड या 2–3 प्रतिशत फीनोल द्वारा विसंक्रमण एवं मृत पक्षियों को जलाकर की जाती है।

○○○○

# कुक्कुटों में एवियन इन्फ्लूएंजा (बर्ड फ्लू) रोग

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

मुर्गीपालन एक ऐसा व्यवसाय है जिसे किसी भी स्थान पर और किसी भी जलवायु में शुरु किया जा सकता है। अन्य पशुओं की अपेक्षा मुर्गीपालन में खर्च बहुत कम आता है और यह अंडा एवं मांस उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मुर्गीपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुधारने का एक उत्तम साधन है। यह एक कम निवेश वाली प्रणाली है। मुर्गीपालन न केवल प्रचुर मात्रा में रोजगार बल्कि शिक्षित बेरोजगार युवाओं को स्वरोजगार भी प्रदान करता है। आज मुर्गीपालन एक दृढ़ उद्योग का रूप ले चुका है। वैज्ञानिकों द्वारा किये जा रहे अनुसंधानों से विकसित नीवनतम प्रौद्योगिकियों को अपनाने से इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है। आधुनिक तकनीक से मुर्गी पालन कर ग्रामीण परिवारों में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ–साथ अतिरिक्त आय भी अर्जित की जा सकती है। मुर्गियों में भी अन्य पशुओं की तरह अनेक बीमारियां लगती है जिससे मुर्गीपालकों को काफी नुकसान उठाना पड़ता है। मुर्गियों को बीमारियों से बचाने के लिए बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। चूंकि मुर्गी का उपयोग कई चरणों में होता है इसलिए मुर्गीपालक को मुर्गी की बीमारी से उसकी मृत्यु तक की समस्या का सामना तो करना ही पड़ता है, साथ ही आर्थिक बोझ को भी वहन करना पड़ता है। अतः मुर्गियों को विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों से बचाने के लिए मुर्गीपालकों को सदैव सतर्क रहना चाहिए। मुर्गियों में बर्ड फ्लू रोग इन्हीं संक्रामक रोगों में से एक अति महत्वपूर्ण रोग है। यह मुर्गियों का एक तीव्र विषाणु जनित छूत का रोग होता है। यह एक अत्यंत घातक एवं संक्रामक रोग है। मुर्गियों में इस बीमारी की पहचान जल्द से जल्द करनी चाहिए। इसके लिए मुर्गीपालकों को बर्ड फ्लू के लक्षणों की जानकारी होनी चाहिए। इस अंक में इस रोग पर विस्तार से विवरण दिया जा रहा है। आशा है इस जानकारी से मुर्गीपालक अपने बहुमूल्य मुर्गियों को इस रोग से बचा सकेंगे।

बर्ड फ्लू (एवियन इन्फ्लूएंजा) पक्षी प्रजातियों का एक अतिसंक्रामक विषाणुजनित रोग है। इस रोग का सर्वप्रथम वर्णन सन् 1878 में इटली में पैरनसिटो ने किया था। एवियन इन्फ्लूएँजा विषाणु लगभग सभी वाणिज्यिक, घरेलू तथा वन्य पक्षी प्रजातियों के लिए संक्रामक है। यह रोग मुख्य रूप से मुर्गियों में होता है परंतु टर्की भी इस रोग से काफी हद तक प्रभावित होते हैं। गिनीमुर्ग, बटेर एवं तीतर संक्रमण और नैदानिक रोग के सुग्राही होते हैं। लेकिन इन प्रजातियों के पक्षियों को यह बीमारी कम प्रभावित करती है। जलपक्षियों की अनेक प्रजातियाँ विशेशकर बत्तख, कलहंस और राजहंस विशाणु के प्राकृतिक पोशद होते हैं। वानरों, शूकरों, अश्वों, गोपशुओं, बिल्लियों, सीलों तथा व्हेलों में इसका संक्रमण प्रतिवेदित है। इस रोग के नैदानिक लक्षण जल पक्षियों में अलाक्षणिक से मुर्गियों और टर्कियों में जठरांत्र, श्वसन और तंत्रिका लक्षण के साथ तीव्र एवं घातक होता है।

**रोगकारक :**

इन्फ्लूएंजा एक प्रकार का आर.एन.ए. विषाणु होता है जो आर्थोमिक्सोविरिडी परिवार का सदस्य है। आंतरिक नाभिकीय प्रोटीन की प्रतिजनिक विशेशता के आधार पर यह विषाणु तीन प्रकार का होता है : 'ए', 'बी' तथा 'सी'। यह विषाणु अपनी आकृति में परिवर्तन करता रहता है जिससे यह शरीर की प्रतिरोधी क्षमता से अपने को बचाए रखता है तथा अपनी वृद्धि करता रहता है। बर्ड फ्लू का कारक 'ए' प्रकार विषाणु होता है जिसका आकार 80–120 नैनोमीटर होता है। इस विषाणु की आकृति में परिवर्तन के कारण इस रोग का सफल टीका अभी तक नहीं बनाया जा सका है। बहुप्रतिजनिक कारकों के आधार पर यह विशाणु रक्तसमूहन ('एच') और न्यूरामिनिडेज ('एन') उप प्रकारों में पाया जाता है। वर्तमान में, 16 'एच' एवं 9 'एन' उप प्रकारों की पहचान की गई है। मुर्गियों में 'एच' 5 तथा 'एच' 7 उप प्रकार का संक्रमण गंभीर नैदानिक रोग उत्पन्न करता है। एवियन इनफ्लूएंजा 'ए' विषाणु के विभिन्न उप प्रकारों में से 'एच'–5, 'एन'–1 उप प्रकार सबसे अधिक घातक माना गया है। मुर्गियों में इस विषाणु से मृत्युदर 100 प्रतिशत तक होती है। इस

उस प्रकार की एक अन्य विशेषता यह भी है कि यह एक से दूसरे पक्षी तक तथा एक से दूसरे फार्म में बहुत तेजी से फैलता है। यह विषाणु प्रभावित पक्षियों के नाक तथा मल–मूत्र विसर्जन के द्वारा काफी अधिक संख्या में निकलता रहता है जो अन्य स्वस्थ पक्षियों में संक्रमण का मुख्य स्रोत होता है।

**संचरण और वाहक :**

यह विषाणु संक्रमित पक्षियाँ, श्वसन नाल, नेत्र श्लेश्मला तथा विष्ठा के माध्यम से उत्सर्जित होता है, अतः संचरण के संभावित माध्यम के अन्तर्गत संक्रमित तथा सुग्राही पक्षियों के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क और वायुबिन्दुक या दूषित सामग्रियों से सम्पर्क द्वारा अप्रत्यक्ष सम्पर्क शामिल है। चुँकि संक्रमित पक्षियाँ अपने विष्ठा में अधिक मात्रा में विषाणु का उत्सर्जन करते हैं इसलिए विष्ठाद्वार से संक्रमित दूषित कुछ भी, जैसे– पक्षी, स्तनपायी जीव, आहार, जल, उपकरण, आपूर्ति, पिंजरा, कपड़ा, वितरक वाहन, कीट आदि के द्वारा सहजता से संक्रमण का प्रसार होता है। इस प्रकार व्यक्तियों, कर्मियों तथा साझा उपकरणों द्वारा विषाणु सहजता से एक से दूसरे क्षेत्रों में पहुँच जाता है। प्रकृति में बर्ड फ्लू विषाणु के प्रमुख वाहक प्रवासी वन्य पक्षियाँ हैं, जिनमें कलहंस और बत्तख आदि प्रमुख है। प्रवासी जल पक्षियों में वन्य बत्तखों की भूमिका अहम मानी गई है।

**लक्षण :**

बर्ड फ्लू के नैदानिक लक्षण परिवर्तनशील होता है जो विषाणु की उग्रता, रोगी की प्रजाति, आयु, सगामी जीवाणु रोग तथा पर्यावरण से बहुत प्रभावित होता है। मुर्गियों में रोगजनकता एक प्रकोप के दौरान भिन्न हो सकता है। रोग की छूत से प्रभावित पक्षी उनींदे और सुस्त दिखाई देते हैं और जल्द ही वे चलते–फिरते समय लड़खड़ाने लगते हैं और अन्त में उन्हें लकवा मार जाता है। मुर्गियों में अचानक मृत्युदर बढ़ जाती है, दस्त होने लगता है, सांस लेने में कठिनाई होती है, मुँह व नाक से लार बहता है, छींक व खांसी होती है। उनकी कलंगी ओर गले के लोलक का रंग गहरा नीला हो जाता है और वह काफी फूल जाता है एवं पिलपिला हो जाता है। मुर्गी का सिर व गर्दन मुड़ जाता है। चेहरा व गर्दन, आँखों के चारो तरफ सूजन व रंग नीला हो जाता है। टांगों में जोड़ों के आस–पास अक्सर सूजन आ जाती है और वहाँ से रक्तस्राव होने के साथ नीले रंग का धब्बा पड़ जाता है। रोग की शुरुआत के बाद अंतिम दिये हुए अण्डों में अक्सर आवरण नहीं होता है। रोगी पक्षी बहुत कम ही ठीक होते हैं। नैदानिक लक्षणों के उद्‌भव होने के 2 दिनों के पश्चात् मृत्यु हो जाती है। अति तीव्र व तीव्र रोग के समग्र मामलों में मृत्युदर लगभग 100 प्रतिशत तक प्रतिवेदित है। इस रोग की मियाद 2–7 दिनों की होती है।

**शव परीक्षण विक्षतियाँ :**

अतितीव्र प्रकार के रोगों से मरने वाले पक्षियों के अधिकांश मामलों में स्थूल विक्षतियाँ नहीं दिखाई पड़ती है। तीव्र रोग में अधिक विविध विक्षतियाँ दिखती हैं। मुर्गियों में अस्त–व्यस्त पंख, कलंगी और गलचर्म में निलिमा तथा सिर सूजे होते हैं। कलंगी एवं गलचर्म गहरे लाल रंग से नीला धंसा हुआ परिगलनीय क्षेत्र में परिवर्तित हो जाता है। रोग की प्रगति के साथ–साथ अग्न्याशय, जिगर, तिल्ली एवं फेफड़े में पीत परिगलनीय केन्द्र लक्षित होता है। ग्रंथिल जठर, उदर की वसा, सीरमी सतह, पर्युदर्या तथा उरोस्थि के भीतरी सतह पर रूधिरांक और रक्तस्राव होते हैं। पर्युदर्या गुहा में प्रायः टूटे अण्डे की जर्दी भरी रहती है। कुछ प्रभावित पक्षियों में सूजे वृक्क और श्वासप्रणाली में अवरोध भी देखे जाते है

**निदान :**

चुँकि ऊतकविकृति परितर्वन रोग के निदान के लिए निश्चयात्मक नहीं होता है इसलिए पुष्टि के लिए सम्पूर्ण रक्त,

श्वासप्रणाल और अवस्कर की फूरेरियों, फेफड़ों, वायु कोष्ठकों, विवर निःस्राव, यकृत और तिल्ली की क्षतियों से विषाणु का विलगन तथा गुणों का अध्ययन आवश्यक होता है। एक बार जब विषाणु विलगित हो जाता है तो इसकी विशिष्ट पहचान अगार जेल विसरण, रक्तसमूहन संदमन, न्यूरामिनिडेज संदमन और विषाणु उदासीनीकरण परीक्षणों द्वारा की जाती है। विभेदात्मक निदान के लिए जीवाणुजनित सेप्टीसिमिया से अन्तर के लिए जीवाणु विज्ञानी जाँच की जाती है।

**प्रयोगशाला परीक्षण हेतु आवश्यक नमूने :**

जीवित नैदानिक रूप से संक्रमित तथा हाल में मृत हुए पक्षियों से नमूने एकत्र करने चाहिए। जीवित पक्षी से, अवस्करगुहा और श्वसनी फूरेरी, ताजा मल, बीट, तथा सीरम एकत्र करना चाहिए। मृत पक्षियों से पाचन तंत्र के ऊतकों (जठर ग्रन्थिल, अग्न्याशय, आंत, उंडुक टांसिल) तथा श्वसन तंत्र के ऊतकों (श्वसनी, फेफड़ा, श्वासनली) के नमूने एकत्र करने चाहिए। ताजा ऊतक एवं फूरेरियों को परिवहन माध्यम में रखकर शीत कृत करने की आवश्यकता होती है तथा इसके बाद हिमीकृत जेल पैक के साथ अग्रेशित की जाती है।

बर्ड फ्लू विषाणु प्रतिजन की उपस्थिति की पुष्टि अगार जेल प्रतिरक्षा विसरण परीक्षण में मैट्रिक्स प्रतिजन या न्यूक्लियोकैप्सिड प्रतिजन की उपस्थिति दर्शाकर की जाती है। इस परीक्षण में ज्ञात धनात्मक सीरम का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा प्रतिरक्षा प्रतिदीप्ति, प्रतिरक्षा ऊतक रसायन, विषाणु विलगन, रक्त समूहन रोधन, इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी, न्यूरामिनिडेज रोधन जाँच का भी प्रयोग किया जाता है। विषाणु उपस्थिति ज्ञात करने हेतु कई एलाइसा तकनीकी भी उपलब्ध है और बाजार में संवेदनशील और विशिष्ट एलाइजा किट उपलब्ध है। विषाणु की उपस्थिति की पुष्टि विशिष्ट नाभिकीय प्रोटीन प्राइमर का प्रयोग कर पीसीआर, रियल टाइम पीसीआर व जीन अनुक्रमण विधि द्वारा किया जा सकता है।

विषाणु प्रतिपिण्ड की पहचान हेतु पक्षी झुण्ड तथा आसपास की पक्षी झुण्डों का सीरमी अध्ययन : रक्त समूहन रोधन, एलाइसा, अगार जेल विसरण, अवक्षेपण, समूह विशिष्ट, न्यूरामिनिडेज रोधन जाँच आदि प्रयोग किए जाते हैं।

इसके अलावा पक्षियों से विलगित विषाणु की रोगजनकता निर्धारित करने के लिए कुक्कुट रोगजनकता परीक्षण, कोशिका सम्वर्धन परीक्षण, आण्विक पैथोटाइपिंग जाँच किए जाते हैं।

**उपचार :**

बर्ड फ्लू विषाणु संक्रमण के लिए कोई व्यावहारिक विशिष्ट उपचार उपलब्ध नहीं है। मानव इन्फ्लूएंजा संक्रमण के प्रतिशेधोपचार में एमन्टाडीन और रिमन्टाडीन हाइड्रोक्लोराइड प्रभावी होते हैं। बटेर, टर्की और मुर्गी में संक्रमण के विरूद्ध एमन्टाडीन को प्रभावी पाया गया है।

**रोकथाम और नियंत्रण :**

जैव सुरक्षा एक सस्ता व प्रभावशाली उपाय है, जिसके अपनाने से मुर्गियों को इस भयंकर बीमारी से बचाया जा सकता है। जैव सुरक्षा का मूल सिद्धांत यह है कि विषाणु मुर्गी फार्म में घुसने न पाएं तथा फार्म के अन्दर बीमारी के विषाणु अगर उपस्थित हैं तो उनको बिल्कुल समाप्त कर दिया जाए। इसके साथ–साथ मुर्गी फार्म के आसपास रोगाणुओं की संख्या कम की जाए।

(क) मुर्गी फार्म एकान्त जगह में होना चाहिए। फार्म को एकान्त जगह में बनाने से जैव सुरक्षा बढ़ जाती है। साथ ही साथ इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए कि फार्म के आस–पास पानी के स्रोत, जैसे–तालाब इत्यादि न हों।

(ख) मुर्गी फार्म में साफ–सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। फार्म को हमेशा साफ–सुथरा रखना चाहिए। फार्म की बनावट ऐसी हो जिसमें प्रतिदिन सफाई करने व विसंक्रमण करने में कठिनाई न हो। फार्म के आस–पास 6 फुट के क्षेत्र को बहुत साफ

सुथरा रखना चाहिए जिसमें किसी प्रकार की वनस्पति या घास न हों तथा मुर्गियों के मलमूत्र, पंख या अन्य सड़न पैदा करने वाले पदार्थ नहीं होने चाहिए। फार्म में हवा का पर्याप्त संचार होना चाहिए। बिछावन को निरन्तर उलट–पलट करते रहना चाहिए। बिछावन में नमी के स्तर को कम रखना चाहिए। पुराने इस्तेमाल किए हुए बिछावन को दूर अलग स्थान पर गड्ढे में गाड़ देना चाहिए।

मुर्गी फार्म में कार्य करने वाले पशु चिकित्सक, प्रबन्धक व अन्य कर्मचारियों को हमेशा एप्रेन, फेश मास्क, दस्ताने, गमबूट इत्यादि पहनना चाहिए तथा इनको नियमित रूप से जीवाणु रहित करते रहना चाहिए। फार्म में कार्य करनेवाले व्यक्तियों को केवल वही कपड़े पहनकर कार्य करना चाहिए जिसे वे अपने कार्य के दौरान प्रतिदिन पहनते हैं तथा इसी प्रकार कार्य समाप्ति पर कार्य करते समय पहने गये कपड़ों को उतारकर वहीं रख देना चाहिए। फार्म में कार्य करते समय पहनने वाले कपड़ों को निरन्तर डिटर्जेन्ट से धोना चाहिए। कपड़ों व जूतों के बदलने की व्यवस्था फार्म के प्रवेश द्वार पर बने एक कमरे में होनी चाहिए। फार्म में कार्य करने वाले व्यक्तियों को कार्य प्रारंभ करने से पूर्व तथा कार्य समाप्ति के बाद अपने हाथ–पैर साबुन या डिटर्जेन्ट से धोने चाहिए।

(ग) मुर्गी फार्म में प्रवेश पर रोक लगाना चाहिए। मुर्गी फार्म बनाते समय इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि वन्य पक्षी, चूहे व अन्य पशु इस फार्म में घुसने न पाएं। फार्म में प्रवेश पर विशेष ध्यान देना चाहिए। फार्म के सामने 4–5 फुट लम्बे फुटबाथ का होना अनिवार्य है। फार्म में किसी भी आगन्तुक या वाहन को प्रवेश न करने दिया जाए तथा यदि वाहन को प्रवेश करवाना जरूरी हो तो वाहन को पूरी तरह विसंक्रमण करने के बाद ही प्रवेश की अनुमति देनी चाहिए। फार्म के प्रवेशद्वार पर नहाने व हाथ–पैर धोने की व्यवस्था होनी चाहिए। इसके लिए पर्याप्त मात्रा में विसंक्रामक का होना जरूरी है। प्रजनन फार्मों में कार्य करने वाले व्यक्तियों को अन्य किसी मुर्गी फार्म में प्रवेश नहीं करना चाहिए। फार्म में कार्य करने वाले व्यक्तियों को अपने घर में मुर्गीपालन नहीं करना चाहिए। फार्म में कार्य करने वाले व्यक्तियों को मुर्गी के मेलों, प्रदर्शनियों में नहीं जाना चाहिए क्योंकि इससे मुर्गियों में बीमारियों के फैलने का डर लगा रहता है। पाली गई मुर्गियों को लड़ाई प्रतियोगिता के लिए नहीं प्रयोग करना चाहिए।

(घ) मुर्गी, बत्तख या शूकर एक साथ एक जगह नहीं पालने चाहिए क्योंकि बत्तख व शूकर को बर्ड फ्लू विषाणु का सशक्त वाहक माना गया है जिससे मुर्गियों में बीमारी आने का खतरा बना रहता है। मुर्गियों को वन्य पक्षियों के साथ घुलने–मिलने नहीं देना चाहिए। फार्म के एक बाड़े में एक ही आयु की मुर्गियां पालनी चाहिए तथा एक साथ अन्दर व एक साथ बाहर वाली पद्धति अपनानी चाहिए क्योंकि एक साथ विभिन्न आयु की मुर्गियों को पालने से कम आयु के चूजों में बीमारी का ज्यादा खतरा बना रहता है। नये चूजे खरीदते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वे स्वस्थ मुर्गियों से पैदा हुए हों। फार्म से हैचरी के लिए अण्डे ले जाने के लिए निर्वर्त्य अण्डे की ट्रे का प्रयोग करना चाहिए तथा इसको वापस फार्म में नहीं लाना चाहिए। फार्म में इस्तेमाल होने वाले उपकरण या अन्य सामग्री किसी अन्य फार्म से उधार नहीं लेनी चाहिए। अगर ऐसा करना जरूरी हो तब इनको पूरी तरह विसंक्रमित करने के बाद ही प्रयोग करना चाहिए।

(ङ) मुर्गियों के दाने की जैव सुरक्षा का बहुत महत्व है। दाने का भण्डारण करते समय इसे वन्य पक्षियों, चूहों व अन्य पशुओं की पहुँच से दूर रखना चाहिए। दाने में नमी को कम रखने के लिए भण्डारण उच्च स्तर का होना चाहिए। मुर्गी दाने की समय–समय पर जाँच करवाते रहना चाहिए जिससे यह पता चल सके कि इसमें बीमारी के कीटाणु या जहरीले पदार्थ विद्यमान तो नहीं है। जैव सुरक्षा की दृष्टि से मुर्गी दाने का संतुलित होना बहुत जरूरी है। मुर्गियों की रोगरोधक क्षमता बनाए रखने के लिए मुर्गी दाने में विटामिन खासकर विटामिन ई तथा सेलेनियम की उचित मात्रा का होना बहुत महत्वपूर्ण है। अतः इसकी निरन्तर जाँच करवानी चाहिए। मुर्गियों के लिए पीने का पानी स्वच्छ होना चाहिए। इसके लिए पीने के पानी का निरंतर जाँच करवानी चाहिए तथा पानी को विसंक्रमित करने के लिए इसमें कीटाणुनाशकों का प्रयोग करते रहना चाहिए।

मुर्गी के दाने व पानी के बर्तनों को निरन्तर साफ करते रहना चाहिए। तथा इनकी सफाई के लिए कीटाणुनाशकों का इस्तेमाल करना चाहिए।

(च) मर्गियों में बर्ड फ्लू की बीमारी का तुरंत पता लगाना चाहिए। यदि किसी विशेष मुर्गी फार्म में बर्ड फ्लू के लक्षण दिखाई दे तो ऐसी स्थिति में मुर्गीपालक को निम्नलिखित कुछ प्रमुख बातों का पालन करना चाहिए :–

बर्ड फ्लू के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत इसकी सूचना एक पशु–चिकित्सक को देनी चाहिए। इस बीमारी की जाँच करवाने के लिए निकटतम पशु–चिकित्सक की सहायता से जीवित व मृत मुर्गी से नमूने एकत्र कर तुरंत भोपाल स्थित उच्च सुरक्षा पशु रोग नैदानिक प्रयोगशाला में भिजवाना चाहिए। संदिग्ध मुर्गियों को छू लेने के बाद अपने हाथ अच्छी प्रकार साबुन से धो लेने चाहिए। संदिग्ध मुर्गियों का शव परीक्षण खुली जगह में नहीं करना चाहिए। ऐसी संदिग्ध या ग्रसित मुर्गियों के साथ सम्पर्क वाले व्यक्तियों को विशेष प्रकार के कपड़े पहनने चाहिए। प्रयोगशाला से फार्म में जाने वाले प्रत्येक वाहन को पूर्ण रूप से विसंक्रमित करना अनिवार्य होना चाहिए। अगर ऐसी मुर्गियों को फार्म में स्थिति प्रयोगशाला में ले जाना हो तो प्लास्टिक के बैग में ही ले जाएं तथा जीवित मुर्गियों को डिब्बे में रखकर ही प्रयोगशाला में ले जाएं व ऐसे डिब्बे को वापस फार्म में न लाएं। अगर इस विषाणु की पुष्टि हो जाती है, तब मुर्गी के मल–मूत्र को पूर्ण रूप से से हटा देना चाहिए तथा इसे विशेष प्रकार से बने गड्ढे में दबा देना चाहिए।

**टीकाकरण :**

बर्ड फ्लू के नियंत्रण एवं समाप्ति के लिए टीका एक बहुमूल्य हथियार होता है। केवल टीका से सफल उन्मूलन सम्भव नहीं है, लेकिन टीकाकरण के साथ पूर्ण निस्तारण और पर्याप्त निगरानी से कम समय में उन्मूलन सम्भावित है। पक्षियों का नीतिगत टीकाकरण के साथ उपयुक्त निगरानी होने से उत्सर्जित विषाणु की मात्रा कम होगी और मानवों का विषाणु के सम्पर्क कम होगा। यदि टीका का प्रयोग करना हो तो इसका उत्पादन ओ.आ.ई.ई. के दिशानिर्देशों के अनुसार होना चाहिए। वर्तमान में पूरे विश्व में प्रायः निष्क्रियकृत टीका प्रयोग किया जाता है।

○○○○

# कुक्कुटों में कॉक्सीडियोसिस रोग

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

कॉक्सीडियोसिस पक्षी प्रजातियों का एक गंभीर प्रोटोजोआ जनित रोग है। यह रोग किसी भी उम्र के पक्षियों में हो सकता है। परन्तु इस रोग का प्रकोप 3–8 सप्ताह की आयु के पक्षियों में अधिक होता है। इस रोग का संक्रमण कभी–कभी अण्डा देने वाली मुर्गियों में भी हो जाता है, जिससे अण्डों का उत्पादन काफी कम हो जाता है। इस रोग का इन्क्युवेशन पीरियड, उद्‌भवनकाल (रोग के शरीर में प्रवेश के समय से लेकर लक्षण स्पष्ट होने का समय) 4 से 6 दिनों का होता है। इस रोग का प्रकोप होने पर 6–10 प्रतिशत पक्षियों की मत्यु हो जाती है तथा संक्रमण के बाद बचे पक्षियों में उत्पादन एवं वृद्धि दर में काफी कमी होने के कारण मुर्गीपालक को काफी आर्थिक क्षति होती है। कॉक्सीडियोसिस रोग का प्रकोप उन कुक्कुटशाला में अत्यधिक देखा गया है, जहाँ कुक्कुट का प्रबंधन अच्छी तरह नही किया जाता है।

**रोग का कारक :**

रोग का प्रमुख कारक कॉक्सीडिया/आइमेरिया नामक प्रोटोजुआ है। इनकी करीब नौ (9) प्रजातियाँ होती है। ये प्रजातियाँ आंतो के अलग–अलग भागों को प्रभावित करती है। आइमेरिया के विभिन्न की पहचान उनके युग्मकपुटियों की बनावट एवं आकार बीजाणुजनन के लिए समय, आंतो के अलग–अलग भागों में रोग का प्रभाव तथा विक्षतियों में परजीवी की स्थिति आदि के आधार पर की जाती है। अधिकांश आइमेरिया ऑत के विशेष भाग में ही रहते है परंतु आइमेरिया मिभाटी ऑत के एक स्थान से दूसरे स्थान तक सरकता रहता है।

कुछ कॉक्सीडिया पक्षियों के आँत के उपकला कोशिका में विभाजन करते रहते है जिसके फलस्वरूप इन परिजीवियों के विरूद्व जाति विशिष्ट रोग रोधक्षमता पैदा हो जाती है। परन्तु कभी कभी अन्योन्य रोधक्षमता भी देखी जाती है, इसलिए इन परजीवी का कम संख्या में आँत में रहना लाभदायक भी होता है।

| कॉक्सीडिया की प्रजातियाँ | आँत के विशिष्ट भाग में प्रभाव | बीजाणुजनन का समय (घण्टे में) |
|---|---|---|
| आइमेरिया टेनेला | अंधोत्र (सीकम) | 18 |
| आइमेरिया एसरर्वुलाइना | डीयोडेनल लूप | 17 |
| आइमेरिया निकाटिक्स | मध्य आँत | 18 |
| आइमेरिया मैक्सिमा | मध्य आँत | 30 |
| आइमेरिया मिभाटी | डीयोडेनल लुप से मलाषय एवं सीकम | 12 |
| आइमेरिया प्रीकाक्स | अग्र आँत | 12 |
| आइमेरिया हैगोनाई | अग्र आँत | 18 |
| आइमेरिया माइटिस | अग्र आँत | 18 |
| आइमेरिया ब्रूनेटाई | आँत के निचले हिस्से | 18 |

इनमें आइमेरिया टेनेला, आइमेरिया निकाट्रक्स, आइमेरिया मैक्सिमा, आइमेरिया एसरर्वुलाइना से अत्यधिक आर्थिक क्षति होती है।

**संचरण :**

यह रोग अंधोत्र एवं ऑत दो रूपों में पाया जाता है। अंधोत्र प्रभावित होने पर यह परजीवी अंधोत्र की दीवारों में एवं ऑत प्रभावित होने पर ऑत के संलग्न कोष्ठ की दीवार में विकसित होते हैं। विकसित होने के बाद ये परजीवी दस्त के साथ उत्सर्जित होते है तथा बिछावन, आहार, पानी तथा मिट्टी इन परजीवियों से संदूषित हो जाते है। युग्मकपुटियों (विष्ठा में उत्सर्जित परजीवी) के लगातार उर्त्सजन एवं अंतर्ग्रहण से संक्रमण हो जाने की संभावना रहती है। पक्षियों को संक्रमण, पक्षी द्वारा अंतर्ग्रहण युग्मकपुटियों की संख्या एवं पक्षियों के रोग रोधी क्षमता पर निर्भर करती है। आमतौर पर इसके संक्रमण से पक्षियों को बचाना कठिन होता है। परन्तु कभी–कभी कम मात्रा में संक्रमण होने पर यह लाभकारी भी होता है क्योंकि इसके बाद इन पक्षियों में भारी संक्रमण के प्रतिरोध क्षमता आ जाती है।

**संक्रमण चक्र / जीवन चक :**

आइमेरिया का एक निश्चित जीवन चक होता है। आइमेरिया के जीवन चक में कोई परपोषी की आवश्यकता नही होती लेकिन जीवन चक के कुछ चरण का विकास पक्षियों के शरीर से बाहर होता है। बीजाणुधारी युग्मकपुटियां जव काफी संख्या में किसी पक्षी द्वारा खाई जाती है, तो पाचन किण्वक के द्वारा बीजाणुधारी युग्मकपुटियां की दीवार विघटित होती है एवं स्पोरोजाइट स्वतंत्र हो जाता है। स्वतंत्र स्पोरोजाइट ऑत की कोशिका पर हमला करते है एवं गोलाकर पिण्ड जिसमें नामिक होता है के रूप में विकसित होता है जिसे ट्रोफोजोइट कहते है। ट्रोफोजोइट धीरे–धीरे बढ़कर बहुत बड़े और गोल हो जाते है जिसमें कई मीजरोजाइट पाये जाते है। इस बड़े पिण्ड को प्रथम पीढ़ी का शाइजंट कहते है। शाइजंट टूटकर मीरोजाइट को स्वतंत्र कर देता है। ये मीजरोजाइट हँसिया के आकार का होता है, प्रत्येक मीरोजाइट नई उपकला कोशिका पर हमला कर देता है। मीरोजाइट, ट्रोफोजोइट की तरह विकास करके शाइजंट बनाता है जिसे द्वितीय पीठी का शाइजंट कहते है जिससे मीरोजाइट स्वतंत्र होता है यह प्रक्रिया दो से तीन बार होती है। इसके बाद कुछ मीरोजाइट नर कोशिका में विकसित होता है जिसे नर पिंड (माइक्रसे गेमिटोसाइट) कहते है तथा कुछ मीरोजाइट मादा कोशिका में विकसित होता है जिसे मादा पिंड (मेगागेमिटोसाइट) कहते है। हँसिया के आकार का होता है नर पिंड (माइक्रसे गेमिटोसाइट) के अंदर बडी संख्या में लघुयंग्मक होते है जो माइक्रोगेमिटोसाइट में प्रवेश कर निषेचित करते है और वह अंडें के समान मोटे कवच वाली, अंडाकार युग्मकपुटी में बदल जाता है। एक युग्मकपुटी खाने पर परपोषी पक्षी में डेढ़ लाख नये युग्मकपुटी बनते है, जो डेढ़ लाख कोशिकाओं को तोड़ कर बिठ्ठा द्वारा बाहर निकलते है। इन युग्मकपुटीयों में नमी की अवस्था में बीजाणु बनते है। ये युग्मकपुटियां वातावरण में 200 दिन से 1 वर्ष तक जीवित रहती है।

**पक्षियों में संक्रमण में सहायक कारक :**

1. प्रबंधन की खराबी जैसे नम एवं गंदा विछावन, भीड़– भाड़ वाला आवास, परिचारक के गंदे कपडे, हाथ एवं पैर इत्यादि।
2. जंगली़ पक्षियों, मक्खियों, चूहों और कीट पतंगो के माध्यम से भी रोग फैलता है।
3. पक्षियों में रोग प्रतिरोधक क्षमता नष्ट करने वाली बिमारियों जैसे आई॰वी॰डी, सी॰आइ॰ए॰, मैरेक्स के संक्रमण होने पर।
4. वयस्क मुर्गियों में यह रोग लक्षण रहित अवस्था में होता है एवं रोगजनित पुटिया उत्सर्जित करते है, जिससे वृद्धिशील मुर्गी में बीमारी हो जाती है।
5. संक्रमण के बाद बचे हुए पक्षियों द्वारा उत्सर्जित युग्मक पुटिया द्वारा आवास, विछावन, दाने को दूषित कर ये स्वस्थ पक्षियों में रोग फैलाते है।

**लक्षण :**

**वृद्धिशील पक्षियों एवं वयस्क पक्षियों में लक्षण :**

- प्रभावित पक्षियाँ काफी सुस्त दिखाई देती है तथा खाना पीना बन्द कर देती है।
- प्रभावित पक्षियों को एक स्थान पर इकठ्ठे हो जाते है सिर को धड़ के नीचे या पंखों को नीचे कर, पीछे की ओर झुक करके खड़े रहते है।
- संक्रमण के चौथे या छठे दिन विछावन पर रक्त युक्त दस्त पाए जाते है।
- वृद्धिशील पक्षियों के चोंच, पैर फीका पीला हो जाता है।
- पक्षियों के कलंगी एवं गलधनी भी फीका पीला हो जाता है।
- संक्रमण के बाद बचे पक्षियों के शरीर को वृद्धि दर कम हो जाती है एवं अण्ड़े देने वाली मुर्गियों के अण्डे देने की क्षमता में भी काफी कम हो जाती है।

**निम्नलिखित औषधि का उपयोग नियंत्रण में इस्तेमाल की जाती है :–**

| | **औषधि का नाम** | **नियंत्रण के लिए औषधि की मात्रा (मि०ग्रा०/किलो ग्राम दाने में)** |
|---|---|---|
| 1. | एम्प्रोलियम | 125–250 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 2. | क्लोपिडोल | 125–250 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 3. | फ्यूराजोलिडोन | 55 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 4. | लासलोसिड | 75–125 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 5. | मदूरामामाइसिन | 5 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 6. | मोनेन्सिन | 100–120 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 7. | सैलिनोमाइसिन | 50–70 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 8. | एम्प्रोलियम+सल्फाक्यूनॉक्सालिन+ईथोपावेट | 80605 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 9. | एम्प्रोलियम+ईथेपावेट | 200–400–20–32 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |
| 10. | निकारवाजिन | 100–250 मिली०ग्रा०/किलो ग्रा० दाने में |

**उपचार हेतु औषधि :**

**अंधोत्र कॉक्सडियोसिस (सीकल कॉक्सडियोसिस)**

एमप्रोलियम 30 ग्रा० 25 लीटर पानी में मिलाकर 5–7 दिन तक

**आंत कॉक्सडियोसिस : (इंटेस्टाइन कॉक्सडियोसिस)**

सल्फाक्यूनॉक्सालिन सोडियम – 50 मिली० औषधि को 15 लीटर पानी में मिलाकर निम्नलिखित विधि दें। 3 दिन तक औषधि युक्त पानी उसके बाद 2 दिन तक बिना औषधि युक्त पानी, पुनः 2 दिन तक बिना औषधि युक्त पानी एवं 3 दिन तक औषधि युक्त पानी का प्रयोग (2–3–3–2–3) मिश्रित कॉक्सडियोसिस : एमप्रोलियम, सल्फाक्यूनॉक्सालिन का उपयोग काफी कारगर होता है।

एंटीकॉक्सीडियल औषधि के साथ विटामिन ए एवं विटामिन के का उपयोग करने से मुर्गिया जल्दी स्वस्थ होती है।

इनके अलावा होम्योपैथिक दवाई मर्क्स – 200 सी०सी० भी काफी कारगर है। इसकी मात्रा प्रति सौ पक्षी के लिए 10 मि०ली० दवाई का उपयोग पानी में पाँच से सात दिनों तक प्रयोग किया जाता है।

**टीकाकरण :**

टीकारण कॉक्सीडिया नियंत्रण का एक अतिमहत्वपूर्ण विकल्प है। कॉक्सीडिया वैक्सीन का विकाश प्रतिरोधी औषधि की समस्या को खत्म करने के लिए किया गया है। वैक्सीन के अवशेष का प्रभाव मांस एवं अण्ड़े में नही होता है जिससे मुर्गी पालक को काफी लााभ होता है। प्रथम औद्योगिक वैक्सीन ''कॉक्सीमेक'' का प्रयोग संयुक्त रात्य अमेरिका में 1953 में हुआ, जिनमें सिर्फ आइमेरिया टेनेला की युग्मकपुटियों / अंडक थी जिसके कारण दूसरे प्रजाति के कारण होने वाले कॉक्सडियोसिस इसका असार कारगर नही था प्रभावशाली वैक्सीन निर्माण के लिए काफी सूत्रों का प्रयोग किया जा रहा है जिसके फलस्वरूप अनेक प्रकार के वैक्सीन कॉक्सीमेक, वी०, सी०, डी० तथा इम्युनोकॉक्स का उपयोग किया जा रहा है लेकिन वैक्सीन रोगजनक होने के कारण इसका उपयोग सीमित हो गया। दूर्बलाकश्त सजीव वैक्सीन ''पाराकॉक्स'' का निर्माण हुआ इसमें बहुत सारी कॉक्सीडिया के प्रजातियों का मिश्रण था तथा इसकी रोगजनक क्षमता भी काफी कम थी। बहुत सारी प्रजातियाँ के मिश्रण होने के कारण इसका उपयोग भी सीमित हो गया है। हाल में सवयुनिट वैक्सीन का विकास वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है इसमें लाइका प्रोटीन का उपयोग होने के कारण टीका रोगजनक नही है तथा यह अंधंत्र एवं आंत दोनो ही प्रकार के कॉक्सडियोसिस में कारगर है।
मंहगा होने एवं स्वचालन कुक्कुटशाला में नही कॉक्सीडिया वैक्सीन का प्रयोग लोकप्रिय नही हो सका है। आजकल कॉक्सीडिया नियत्रंण के अन्य विकल्प पर शोध किया जा रहा है जिमें प्रमुख रूप से वानस्पतिक औषधि पक्षियों के खाद्यान में परिवर्तन, प्रो–वायेटीक्स का उपयोग इत्यादि ।

**रोग की रोकथाम :**

1. कुक्कुटशाला धूपदार, हवादार तथा नमी रहित होनी चाहिए।
2. कुक्कटों को रखने से पूर्व सदैव कुक्कुटशाला तथा समान जैसे फीड़र, ड्रीकर आदि को अच्छी तरह से साफ कर लेनी चाहिए।
3. बिछावन में नमी होनी चाहिए एवं बिछावन को समय–समय पर पलटते रहना चाहिए।
4. वयस्क एवं अल्पायु कुक्कुटों को एक साथ नही रखना चाहिए।
5. आहार में विटामिन ''ए'' की भरपूर मात्रा में होनी चाहिए।
6. जगह के अनुरूप से ही कुक्कुटों को रखना चखहिए।
7. संभव हो तो कुक्कुटों को तार की जाली पर रखना चाहिए।
8. संकमित पक्षियों को अलग कर देना चाहिए।
9. कॉक्सडियो स्टेट या सायडल दवा का प्रयोग कम्पनी के निर्देशानुसार करनी चाहिए।
10. संक्रमण होने पर यथाशीघ्र विशेषज्ञ के परामर्शानुसार औषधि का प्रयोग करना चाहिए।
11. जैविक सुरक्षा का प्रभावशाली उपयोग करना चाहिए।

○○○○

# कुक्कुटों में गोल कृमि का प्रकोप

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

कुक्कुट में मनुष्य की तरह लम्बे गोल कृमि आँतों में मिलते है जिनमे कुछ गोल कृमि (निमेटोड) कुक्कुट के स्वास्थ्य को बहुत अधिक प्रभावित करती है। जबकि अन्य गोल कृमि (निमेटोड) अगर कम संख्या में हो तो वे ज्यादा प्रभावित नहीं करती है। बर्धनशील पक्षी में कृमि का ज्यादा प्रकोप होने से पक्षी की मृत्यु हो जाती हैं। वयस्क पक्षी में प्रकोप होने पर शारीरिक वजन एवं अण्डे के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिससे कुक्कुट पालक को अत्याधिक आर्थिक क्षति हो जाती है। यद्यपि आधुनिक कुक्कुटशाला में इनका प्रकोप कम होता है परन्तु घर के पिछवाड़े में पाले हुए या गाँव में स्वतंत्र विचरण करने वाले कुक्कुट में कृमि काफी ज्यादा पाया जाता है। कुछ कुक्कुट के गोल कृमि (निमेटोड) का जीवन चक्र अप्रत्यक्ष होता है इसलिये कृमि के परिपक्वन के लिए माध्यमिक परपोषी की आवश्यकता होती है लेकिन अन्य कृमि का जीवन चक्र प्रत्यक्ष होता है।

**तालिका : कुक्कुट में विविध प्रकार के गोल कृमि**

| जाति | माध्यमिक परपोषी | अभिरुचि का स्थल |
|---|---|---|
| एकुरिया स्पाइरेलिस | बीटल, ग्रासहॉपरस | प्रोवेंटीकुल्स |
| एकुरिया हमुलोसा | बीटल, ग्रासहॉपरस | गिजार्ड |
| एस्केरीडीया गेल्लई | नहीं | छोटी आंत |
| कैपिल्लारिया अन्नुलटा | अर्थवर्म | क्रॉप |
| कैपिल्लारिया कॉनटोराटा | नहीं | क्रॉप |
| डीसफेरिंग स्पाइरेलिस | बग्स | प्रोवेंटीकुल्स |
| गोंग्लोनेम इन्लुविकोला | जानकारी नहीं | क्रॉप |
| हेटराकिस गल्लिनेरियम | नहीं | सिकम |
| ओक्स्यपिरुरा मंसोनी | कॉकरोच | आंख |
| स्ट्रांगलोइदडेस एवियम | नहीं | छोटी आंत |
| सिनगेमस ट्रेकिया | नहीं | ट्रेकिया |
| टेट्रामेरेस अमेरिकाना | कॉकरोच | प्रोवेंटीकुल्स |
| ट्रायकोस्ट्रोंगयिलुस टेनुईस | नहीं, ग्रासहॉपरस | सिकम |

**एस्केरीडीया गेल्लई :** यह कुक्कुट में बहुत ही ज्यादा पाये जाने बाला गोल कृमि (निमेटोड) है। यह कृमि आहार नाली का प्रधान परजीवी है जो की आठ से दस सप्ताह की उम्र बाद बाली कुक्कुट में पाया जाता है। यह कृमि 6–10 से०मी० लम्बे तथा 1 से 2 मि०ली० चौड़े होते है। कृमि का आगे एवं पीछे का भाग नुकिला होता है। ये कृमिया ग्रहिणी में गुच्छे के रूप में पाये जाते है। इनके अंडे मोटे चमकीले आवरण वाले होते है। कृमि का ज्यादा प्रकोप होने से अधिकांश पक्षियों की मृत्यु हो जाती है एवं बचने वाले पक्षियों का शारीरिक वजन एवं अण्डे के उत्पादन काफी कम हो जाती हैं। जिससे लगभग 301.9 मिलियन

रूपये की वार्षिक क्षति होती है अंडे एवं मांस उत्पादन में कमी होने के करण हो रही है। कुक्कुट में कुपोषन इस रोग का एक महत्वपूर्ण पूर्वव्यवस्था करक है। उचित एवं सन्तुलित आहार पर पलने बाले कुक्कुटो में कुछ मात्रा में रोग से प्रतिरोध होने ही क्षमता देखी गयी है। ज्यादा मात्रा में प्रोटीन, विटामिन–ए, एवं वी–कॉम्प्लेक्स युक्त आहार लेने से रोग के प्रारम्भ होने एवं गंभीरता कम जाती है।

**रोगजनकता :** यदि बर्धनशील पक्षी (ब्रॉयलर) 20 से 30 कृमि तथा वयस्क पक्षी में 40 से 50 में कृमि हो तो शारीरिक वजन एवं अण्डे के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है।

**जीवन चक्र :** एस्केरीडीया गेल्लई का जीवन चक्र प्रत्यक्ष होता है इसलिये कृमि के परिपक्वन के लिए माध्यमिक परपोषी की आवश्यकता नहीं होती है। एक दिन में पाँच से छह सौ तक बिस्ठा से निकल सकते है। ये अण्डे 10 दिन में अन्य अवस्थाओं से हो कर लार्वा अवस्था में विकसित होते है। जल एवं खाद्य पदार्थों के माद्यम से कुक्कुट आँत में पहूँच कर लार्वा 50 दिनों वयस्क हो जाते है। कुक्कुट शाला में पक्षियों की सघनता, नमी तथा साफ सफाई में कमी होने पर भी संक्रमण प्रसार में सहायता मिलती है। ये परिस्तिथियो में कृमि के अण्डे भी जीवित रखने में सहायक होते है।

**रोग के लक्षण :**

- रोग के शुरुआती अवस्था में पक्षियों की वृद्धि दर कम हो जाती है तथा पक्षियों में दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है।
- पक्षियों में पतले दस्त हो जाते है।
- रोग के गंभीर अबस्था में कलगी एवं गलधानी आभाहीन हो जाते है।
- पक्षिया निस्तेज हो जाती है तथा उनके पंख चमक हिन हो जाते है।
- ऐसे पक्षिया अधिक दाना खाती है लेकिन उनका वजन नहीं बढ़ता है।
- रक्त–अल्पता होने के करण उनका चोंच एवं शेंक फिका हो जाता है।
- अण्डे के उत्पादन भी काफी गिरावट आ जाती है।

**रोग का निदान :**

1. रोग का लक्षण देख कर।
2. मल में परजीवियो को देख कर।
3. मल की जाँच करने पर कृमि के अण्डे जो की मोटे चमकीले आवरण वाले होते है दिखाई पड़ते है।
4. शव परिक्षण कर, परिक्षण के दौरान छोटी आँत में परजीविया मिलते है।

**रोग से बचाव :**

अधिकांश वैज्ञानिक ढंग से चलने बाले कुक्कुटशाला में गोल कृमि का प्रकोप कम होता है या नहीं होती है या पिंजरे पद्धति से पालन होने पर इन कृमि का प्रकोप नहीं होता है। निम्न–लिखित उपायों को अपना कर रोग के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

1. कुक्कुट शाला को सुखा रखना चाहिए।
2. कुक्कुट शाला में जगह के अनुपात में पक्षियों के रखना चाहिए।
3. माध्यमिक परपोषी से कुक्कुट का सम्पर्क कम कर।
4. समय–समय पर कुक्कुट शाला में इनसेक्टी सयाडल दवाईयो कर प्रयोग कर।
5. कुछ महीनों के अन्तराल पर मल की जाँच कर।
6. कृमि–नाषक औषधियो को उपयोग कर।

**उपचार :** निम्न–लिखित कृमिनाशक औषधियों में किन्ही एक का प्रयोग कर पक्षियों का उपचार किया जा सकता है।

| औषधि का नाम | औषधि की मात्रा प्रति 100 पक्षी | प्रयोग की विधि | पक्षी की आयु |
|---|---|---|---|
| पाइपराजिन 25% | 20 ग्राम | 4 लीटर पानी में | < 12 सप्ताह |
| पाइपराजिन 25% | 40 ग्राम | 4 लीटर पानी में | > 12 सप्ताह |
| पाइपराजिन हेक्सा हाइड्रेट | 92 ग्राम | 6 लीटर पानी में | < 12 सप्ताह |
| पाइपराजिन हेक्सा हाइड्रेट | 34 ग्राम | 6 लीटर पानी में | > 12 सप्ताह |
| लिवामिजोल 30% | 20 ग्राम | 4 लीटर पानी में | 8–16 सप्ताह |
| थयाबेंडाजोल–33% | 50–100 मि०ली० ग्राम प्रति किलो शारीरिक वजन | | |
| फेनबेंडाजोल 25% | 5 मि०ली० ग्राम प्रति किलो शारीरिक वजन | | |
| फिनोथायजिन | 0.5 ग्राम प्रति पक्षी | | |

**कृमि नाषक औषधि का प्रयोग :**

- संभव हो सके तो औषधि को 1 बजे से 5 बजे के बीच में पिलानी चाहिए।
- एक महीने के बाद औषधि को पुनः पिलानी चाहिए।
- जिस दिन औषधि को पिलाये उस रात को कुक्कुटशाला में प्रकाश ना दे, और सुबह सूर्य उदय से पूर्व बिछावन पर झारू लगाकर मल से निष्कासित कृमियों को इकट्ठा कर के कुक्कुटशाला से दूर ले जाकर मिट्टी खोदकर दबा दें।
- परजीवी का अत्यधिक प्रकोप होने पर औषधि की मात्रा बढ़ाई जा सकती है एवं 21 दिन के अन्तराल में पुनः औषधि पिलानी चाहिए।
- **हेटराकिस गल्लिनेरियम :** यह कम महत्वपूर्ण छोटे गोल कृमि है, जो की अन्धोत्र में पाये जाते है। ये कृमि हिस्टोमोनास मेलियाग्रीडीस प्रोटोजोआ के भी संक्रमण वाहक होते है जो कि टर्की में ब्लैक हेड डिजीज उत्पन्न करते है। इनका जीवन चक्र प्रत्यक्ष होता है कृमि के अन्डे मल द्वारा बाहर आकर लगभग 2 सप्ताह में लार्वा में विकसित हो जाते है। लार्वा वाले अण्डे कुक्कुट द्वारा खाने से संक्रमण हो जाता है। भारी संक्रमण होने से पक्षियों में सुस्ती,दस्त एवं कमजोरी हो जाती है। उपरोक्त कृमि–नाषक औषधियों में किन्ही एक का प्रयोग कर पक्षियों का उपचार किया जा सकता है।

- **सिनगेमस ट्रेकिया :** इसे गैप वार्म्स, रेड वार्म्स, वायर वार्म्स आदि नामो से जाना जाता है। नर वार्म्स स्थायी रूप से मादा वार्म्स के कोउपला से जुड़े रहते है। मादा वार्म्स लाल रंग की होती है। नर एवं मादा वार्म्स के अग्र भाग कप की तरह होता है। यह वर्म मुख्य रूप से ट्रेकिआ में पाया जाता है कभी–कभी ब्रांकाई में देखा जाता है। वृद्धिशील पक्षियों में इनका प्रकोप काफी होता है एवं संक्रमित पक्षियों में जरकी रेसपाईरेसन होता है एवं पक्षियों की मृत्यु साँस रुक जाने से होती है।
- **उपचार :** थयाबेंडाजोल 0.5% दाने में मिलकर 1 से 3 सप्ताह तक दे या बेरियम अन्तिमोंयल टारटर्रेट 1 पार्ट 8 इसकोयार फीट का प्रयोग करे।

**कुक्कुट में गोल कृमि / राउंड वार्म्स का नियंत्रण :**

- कुक्कुटशाला ऊँचे एवं नमी रहित जगहों पर बनानी चाहिए।
- लिटर / बिछावन सदा सुखा होना चाहिए।
- अलग उम्र के पक्षियों को अलग पिंजरे में रखनी चाहिए।
- वृद्धिशील पक्षियों को माध्यमिक परपोषी से कुक्कुट का सम्पर्क में नहीं आनी चाहिए।
- समय–समय पर कुक्कुटशाला में इनसेक्टी सयाडल दवाईयो का प्रयोग कर।
- कुछ महीनों के अन्तराल पर मल की जाँच कर।
- कृमि–नाषक औषधियो को उपयोग कर।

○○○○

# कुक्कुटों में गठिया रोग

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

आज मुर्गियों में अधिक उत्पादकता हेतु जेनेटिक इंजीनियरिंग तकनीक का प्रयोग किया जा रहा है तथा उत्पादक कारकों के अनुसार उन्हें चयनित किया जा रहा है। इसके परिणाम स्वरुप उपापचय अनियमितताओं में वृद्धि हो रही है। मुर्गियों में गठिया भी उपापचय अनियमितता के कारण होने वाला एक रोग है जिसमें यूरिक अमल अथवा यूरेट असाधारण रूप से शरीर में विभिन्न अंगों के मुलायम ऊतकों में एकत्र होने लगता है।

**मुर्गियों में गठिया रोग के दो प्रकार होते हैं।**

1. अंतरंग गठिया
2. संधि गठिया

जहाँ अंतरंग गठिया एक तीव्र प्रकार का रोग है, वहीं संधि गठिया एक चिरकालिक रोग है। संधि गठिया की अपेक्षा अंतरंग गठिया मुर्गियों में सामान्य तौर पर ज्यादा होता है। इन दोनों ही अवस्थाओं में सुई जैसे यूरेट के क्रिस्टल शरीर के विभिन्न अंगों में जमा हो जाते हैं, जिन्हें तोफी कहते हैं। इस रोग से ब्रॉयलर और लेयर्स सामान रूप से प्रभावित होते हैं परन्तु यह रोग तेजी से बढ़ते हुए ब्रॉयलर चूजों में अधिक होता है। इस रोग का आपतन गर्मियों के मौसम में अधिक होता है।

**रोगजनन :**

जानवरों में प्रोटीन उपापचय में यूरिया अंतिम निम्नीकरण उत्पाद होता है। जबकि पक्षियों में यूरिक अमल प्रोटीन उपापचय का अंतिम उत्पाद होता है। यूरिक अमल मुख्यतः यकृत में बनता है तथा इसका उत्सर्जन गुर्दे द्वारा होता है। यूरिक अम्ल ज्यादा घुलनसील नहीं होता है इसलिए रक्त में यूरिक अमल की अधिकता से यह ऊतकों में जमने लगता है। यूरिक अम्ल हानिकारक नहीं होता है परन्तु इसके जमे हुए क्रिस्टल्स ऊतकों को नुकसान पहुँचा सकते है। जब भी गुर्दे क्षतिग्रसत होते हैं तब यूरिक अमल का उत्सर्जन रुक जाता है तथा वह रक्त व शरीर के मुलायम उतकों में जमा होने लगता है। एक स्वस्थ मुर्गी के रक्त में यूरिक अमल की मात्रा 5.7 मि०ग्रा० / 100 मि०ली० होती है जबकि गठिया रोग में इसकी मात्रा बढ़कर 44 मि०ग्रा० / 100 मि०ली० तक पहुँच जाती है।

**रोग के कारण :**

मुर्गियों में गठिया रोग के मुख्यतः तीन कारण होते है –

1. **पोषण सम्बन्धी कारण :**

- पानी की कमी– शरीर में पानी की कमी से यूरिक अमल की मात्रा रक्त में अधिक होने से गुर्दों में उसकी सान्द्रता बढ़ जाती है. मुर्गियों में पानी की कमी के प्रमुख कारण है– कम संख्या में पानी के बर्त्तन, मुर्गियों की अधिक संख्या, पानी के निकास की अधिक ऊँचाई, कठोर पानी का उपयोग, टीकाकरण के कारण लम्बे समय तक पानी न देना, अधिक गर्मी पड़ना, आदि हैं।
- प्रोटीन की अधिकता– खुराक में 30 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन होने से यूरिक अम्ल अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है जो गुर्दों को नुकसान पहुंचा सकता है।
- नमक की अधिकता– दाने में नमक की मात्रा अधिक होना या अधिक मात्रा में फिशमील (मच्छली का चूर्ण) खिलाने से गठिया हो सकता है। 1 किलोग्राम दाने में नमक 3 ग्राम से अधिक नहीं होना चाहिए।

- खुराक में कैल्शियम की अधिक मात्रा व फास्फरोस की कमी से भी मुर्गियों में गठिया हो सकता है. विटामिन 'डी' की अधिक मात्रा से शरीर में कैल्शियम का अवशोषण बढ़ता है जिससे यूरेट क्रिस्टल्स अधिक मात्रा में बनते उतकों पर जमा होने लगते हैं।
- लम्बे समय से विटामिन 'ए' की कमी से ट्यूबलर एपीथिलियम को क्षति पहुँचाती है जिसके कारण यूरिक अमल का उत्सर्जन नहीं हो पाता।
- सोडियम बाईकार्बोनेड का अधिक मात्रा में प्रयोग से गुर्दों में पथरी बनने व गठिया होने की संभावना बढ़ जाती है।

**2. गठिया के संक्रमणजनक कारण :**

- वियन नेफ्राइटिस सिंड्रोम
- इन्फेक्शस ब्रोंकाइटिस
- बेबी चिक नेफ्रोपैथी
- आई.बी.डी. विषाणु का नेफ्रोट्रोपिक कारक से मुर्गियों के गुर्दे खराब हो जाते हैं जिसके कारण मुर्गियों में गठिया रोग हो सकता है।

**3. टॉक्सिक कारण :**

- जेंटामाईसिन, सल्फोनामाइड, नाइट्रोफयूरासोन जैसी एंटीबायोटिक दवाओं का अधिक मात्रा में प्रयोग करने से गुर्दों को क्षति पहुँचती है।
- माइकोटोक्सिन भी गुर्दों को क्षति पहुँचते हैं।
- दाने में यूरिया की मिलावट होना।
- फ्रीनोल व क्रीसोल जैसे जीवाणुनाशकों का अधिक मात्रा में प्रयोग।
- कॉपर सल्फेट का पीने के पानी में उपयोग से गठिया हो सकता है।

इन कारणों के अतिरिक्त शेड में अत्यधिक नमी व अधिक ठण्ड से भी गठिया होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

**गठिया के लक्षण :**

**अंतरंग गठिया में**

- मुर्गियां सुस्त हो जाती हैं।
- मुर्गियों में निर्जलीकरण (पानी की कमी) हो जाती है।
- उनके पंख तितर–बितर हो जाते हैं।
- उनका वजन घटने लगता है।
- कभी–कभी हरे रंग के दस्त भी हो जाते है।
- गुदाद्वार नम बना रहता है।
- सफेद चाक जैसे क्रिस्टल्स यकृत, हृदय, गुर्दे, वायुकोष व खाल के नीचे जमा हो जाते हैं।

**संधि गठिया में :**

- जोड़ सूज जाते हैं।
- चाक जैसा पदार्थ जोड़ो के चारों ओर जमा हो जाता है।
- सामान्यतः पंखों और टांगो के जोड़ प्रभावित होते हैं।
- जोड़ छुने में गरम व मुलायम होते हैं।
- जोड़ों में दर्द के कारण मुर्गी चल फिर नहीं सकती व भूख से मर जाती है।
- शिफ्टिंग लेग लेमनेस।

**गठिया का उपचार :**

- गठिया होने पर मुर्गियों को पानी अधिक मात्रा में देना चाहिए।
- दाने में प्रोटीन, नमक व सोडियम बाई कार्बोनेट की मात्रा कम कर देनी चाहिए।
- विटामिन 'ए' को 10000 आई.यू. / मुर्गी के दर से 3 दिनों तक देना चाहिए।
- मॉलिब्डेनम को 400 मि०ग्रा० प्रति मुर्गी के दर से देना चाहिए।
- अमोनियम सलफेट को 5 ग्राम आहार में मिलाकर देना चाहिए।
- अमोनियम क्लोराइड को 10 ग्राम आहार में मिलाकर देना चाहिए।
- 0.3 ग्राम अस्प्रिन को पानी में मिलाकर देना चाहिए।
- 15–50 मि०ग्रा० सिरका को प्रति 100 मुर्गियों के हिसाब से पीने के पानी में मिलाकर 5 दिनों तक देना चाहिए।
- टिनचर आयोडीन को जोड़ो पर लगाने से लाभ मिलता है।
- तीव्र प्रकार के रोग में पोटैशियम क्लोराइड को 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में उपयोग कर सकते हैं।
- गठिया से होने वाली मृत्युदर को कम करने हेतु मुर्गियों को पीसी हुई मक्का कम से कम 3 दिनों तक ओर शीरा 1 ग्राम / लीटर पानी में 3–5 दिनों तक देना चाहिए।

**गठिया से बचाव :**

- मुर्गियों को अधिक मात्रा में पानी देना चाहिए।
- मुर्गियों की उम्र व ब्रीड के अनुसार मानक से ज्यादा प्रोटीन नहीं देना चाहिए।
- आई.बी.डी. का टीका नियमित समय से लगवाना चाहिए।
- खुराक में कैल्शियम व फास्फरोस की सही मात्रा देनी चाहिए।
- दाने को सुखी जगह पर ही रखें व उसमें माईकोटोक्सिन की जाँच समय समय पर करते रहना चाहिए।
- खुराक में विटामिन 'ए' वी. कम्पलेक्स, 'डी.' एवं 'के' की उचित मात्रा निर्धारित करते रहना चाहिए।
- गुर्दों को नुकसान पहुँचाने वाली दवाओं का सावधानी पूर्वक प्रयोग करना चाहिए।
- शेड के अन्दर नमी अधिक ना हो इसका ध्यान रखना चाहिए।
- मुर्गियों के मूत्र की अम्लीयता बढ़ाने के लिए अमोनियम सलफेट या अमोनियम क्लोराइड का प्रयोग करना चाहिए।
- कॉपर सलफेट को पानी मिलाकर नहीं देना चाहिए।

# कुक्कुटों में रोग फैलने के कारण, नियंत्रण एवं टीकाकरण कार्यक्रम

डा० सुधांशु शेखर
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

मनुष्य, जंगली पक्षी, विभिन्न आयु के प्रजातियों में पक्षी अण्डों के माध्यम से, बीमार पक्षी, आहार, अन्य स्रोत रोगों का नियंत्रण कुक्कुट पालन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कुक्कुट में रोग अधिक तीव्रता से एक साथ सभी कुक्कुटों में फैलता है तथा अधिक कुक्कुटों की हानि रोग होने से हो सकती है। अतः कुक्कुट उत्पादन में रोग नियंत्रण सबसे अधिक जरूरी है।

यद्यपि टीकाकरण कुक्कुटों में रोग नियंत्रण का सबसे अच्छा उपाय है। टीकाकरण द्वारा हम कुक्कुटों को उन रोगों से बचाते हैं जिनमें मुर्गियों की मृत्यु अत्यन्त शीघ्र हो जाती है और जो जीवाणु या विषाणुओं के कारण फैलते हैं। कुक्कुटों में टीकाकरण एक दिन का चूजा होने पर ही आरम्भ हो जाता है तथा जो निश्चित समय रोग विशेषज्ञ के लिए नियत किया गया है उस पर ही टीकाकरण होना चाहिए अन्यथा रोग प्रतिरोधकता प्राप्त होने में कठिनाई उत्पन्न हो जायेगी। टीकाकरण के अतिरिक्त कुछ अन्य तरीके भी विभिन्न रोगों से बचाव में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जैसे :–

1. बीमार कुक्कुट को स्वस्थ से अलग रखना चाहिए।
2. प्रतिदिन कुक्कुटों का निरीक्षण करना चाहिए जिससे शीघ्रता से रोगी कुक्कुटों को पहचाना जा सके और उनका बचाव हो सके।
3. कुक्कुटों के रख–रखाव की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
4. कुक्कुटशाला में अत्यधिक चूजे/मुर्गियाँ नहीं रखनी चाहिए।
5. सन्तुलित आहार प्रत्येक कुक्कुट को मिलना चाहिए।
6. मृत कुक्कुट को तुरन्त अलग कर मृत्यु के कारण का पता लगाकर अतिशीघ्र सम्बन्धित उपचार होना चाहिए।
7. कुक्कुट आवास को समय–समय पर विसंक्रमित करना चाहिए।
8. कुक्कुटशाला में बाहरी व्यक्ति, पशु, पक्षी तथा कीटों का प्रवेश रोकना चाहिए।
9. कुक्कुटशाला में प्रकाश, हवा तथा शुद्ध जल की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए।
10. कुक्कुटशाला में गन्दगी नहीं होने देना चाहिए।

**तालिका 1 : पैरेन्ट फ्लॉक में टीकाकरण कार्यक्रम**

| पक्षी की आयु | रोग निरोधक टीका | मात्रा एवं देने का स्थान |
|---|---|---|
| एक दिन | मैरेक्स रोग का टीका | 0.2 मिली/त्वचा के नीचे। |
| प्रथम सप्ताह | रानीखेत का टीका, आर०डी०एफ०, एफ० स्ट्रेन एन०डी०एफ०, लैसोटा, क्लोन–30 | एक बूंद आँख या नासिक में बूंद विधि द्वारा। |
| 12वें दिन | गमबोरो रोग का टीका आई०बी०डी० 228 ई | एक बूंद, आँख में बूंद विधि द्वारा। |
| 7वें दिन | आई०बी०एच०/एस०पी०एच० का टीका | 0.2 मिली/त्वचा के नीचे। |
| 21वें दिन | संक्रामक ब्रोंकाइटिस का टीका | एक बूंद, आँख बूंद द्वारा। |

| | | |
|---|---|---|
| 35–40वें दिन | गमबोरो टीके की पुनरावृत्ति<br>आई०बी०डी० 228 ई० या इण्टरमीडिएट | पीने के पानी में। |
| 6 सप्ताह | चेचक का टीका (फाउल पाक्स) | 0.2 मिली / मांस में। |
| 7 सप्ताह | रानीखेत के टीके की पुनरावृत्ति | पीने के पानी में। |
| 6–10 सप्ताह | आर 2 बी टीका | 0.5 मिली / मांस में या<br>त्वचा के नीचे। |
| 12–14 सप्ताह | चेचक के टीके की पुनरावृत्ति | 0.2 मिली / मांस में। |
| 13–14 सप्ताह | आई०बी० के टीके की पुनरावृत्ति | पीने के पानी में। |
| 18–20 सप्ताह<br>(लेयर पैरेन्ट्स में) | एन०डी० किल्ड टीका या<br>एन०डी०आई०बी०, आई०बी०डी०<br>संयुक्त टीका | 1 मिली / सीने के मांस में। |
| 20–24 सप्ताह<br>(ब्रायलर पैरेन्ट्स में) | एन०डी० किल्ड टीका या<br>एन०डी०एफ० टीके की पुनरावृत्ति | 1 मिली / सीने के मांस में। |
| इसके पश्चात्<br>3 महीने के बाद<br>(पैरेन्ट फ्लॉक में) | लैसोट / क्लोन–30 / आर०डी०एफ०,<br>एम०डी०एफ० टीके की पुनरावृत्ति | पीने के पानी में। |

**तालिका 2 : अण्डे देने वाली मुर्गीयों (लेयर) के लिए टीकाकरण :**

| **टीके का नाम** | **पक्षी की उम्र** | **मात्रा** | **टीकाकरण की विधि** |
|---|---|---|---|
| मेरेक्स वैक्सीन | एक दिन | 0.2 मि.ली. | गर्दन की चमड़ी के नीचे |
| आर.डी.एफ. स्ट्रेन | एक या पांच दिन | 2 बूंद | 1–1 बूंद आंख एवं नाक में |
| आई.बी.डी. इण्टरमीडिएट स्ट्रेन | 14 दिन | 2 बूंद | उक्त |
| आर. डी.एफ. | 28 दिन | 2 बूंद | उक्त |
| आर. बी. डी. इण्टरमीडिअ स्ट्रेन | 35 दिन | 2 बूंद | उक्त |
| फाउल पॉक्स | 42 दिन | 1 बूंद | मुर्गियों के चर्म में देना है |
| आर. डी. आर. 2 बी | 8–10 सप्ताह | 0.5 मि.ली. | मांसपेशी में |

**तालिका 3 : माँस वाली मुर्गियों (ब्रॉयलर) के लिए टीकाकरण :**

| **टीके का नाम** | **पक्षी की उम्र** | **मात्रा** | **टीकाकरण की विधि** |
|---|---|---|---|
| आर. डी. एफ. स्ट्रेन | एक या पांच दिन | 2 बूंद दिन | 1–1 बूंद आंख एवं नाक में |
| आई. बी. डी. इण्टरमीडिएट स्ट्रेन | 14 दिन | 2 बूंद | उक्त |
| आर. डी. एफ. | 28 दिन | 2 बूंद | उक्त |
| आई. बी. डी. इण्टरमीडिएट स्ट्रेन | 35 दिन | 2 बूंद | उक्त |

**मुर्गियों में टीकाकरण सम्बंधित एवं सावधानियाँ**

मुर्गियों में टीकाकरण का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। विषाणुओं द्वारा फैलने वाली बीमारियों जैसे कि रानीखेत बीमारी, मैरेक्स बीमारी, मुर्गियों की चेचक तथा गम्बोरो बीमारियों में इसका महत्व बहुत अधिक है। यह बहुत जरूरी है कि किसान मुर्गियों की इन बीमारियों में टीकाकरण के उपयुक्त समय, विधि, मात्रा तथा खुराक के बारे में जानें तथा उसका सही से उपयोग करें जिससे इन बीमारियों से उनकी मुर्गियों का सही रूप से पूर्णतया बचाव हो सके।

मुर्गियों में इन खतरनाक बीमारियों से बचाव के लिए टीकाकरण से सम्बंधित निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए:—

(1) कुक्कुट पालक को टीकाकरण का उपयुक्त समय, विधि तथा खुराक के बारे में पशु चिकित्सा अधिकारी से जानकारी लेना चाहिए।

(2) टीके बारे में सही जानकारियाँ जैसे उनका स्रोत, बैच नं० एवं नाम आदि नोट करना चाहिये।

(3) टीका और उसका घोल बनाने में इस्तेमाल होने वाले पदार्थ को रेफ्रीजरेटर में रखना चाहिये। रेफ्रीजरेटर न होने की स्थिति में टीके को फ्लास्क में बर्फ डालकर रखा जा सकता है।

(4) टीके को निर्माता कम्पनी के निर्देशानुसार प्रयोग करना चाहिए।

(5) टीकाकरण बीमार मुगियों में नहीं करना चाहिए।

(6) टीकाकरण करने पर कुछ प्रतिक्रिया या तनाव हो सकता है। इससे बचने के लिए टीकाकरण के तीन दिन पहले तथा तीन दिन बाद एक मल्टीविटामिन का घोल पिलाना चाहिये।

(7) टीके के घोल को 1—2 घंटे के अन्दर इस्तेमाल कर लेना चाहिए।

(8) टीकाकरण के साथ मुर्गियों को एन्टीबायोटिक्स नहीं देना चाहिए।

○○○○

# कुक्कुट में संक्रामक रोगों से बचाव के उपाय

**डा० सुधांशु शेखर**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

मुर्गियों में भी अन्य पशुओं की तरह अनेक बीमारियां लगती है। मुर्गियों में संक्रामक रोग फैलने से अत्यधिक हानि होती है। इसका महामारी रूप अति भयानक होता है। ऐसे रोग जो एक मुर्गी से दूसरे मुर्गी में पहुँचते है, संक्रामक रोग कहलाते हैं। जब ऐसे रोग स्वस्थ मुर्गी को रोगी मुर्गी से सीधे सम्पर्क में आने से लगते हैं तब इन्हें छूत रोग कहते हैं। संक्रामक तथा संसर्गी रोग इतने भयानक होते हैं कि त्वरित चिकित्सा के अभाव में अनेक मुर्गीयाँ देखते–देखते मर जाती है। इससे मुर्गीपालक एवं राष्ट्र की अपार क्षति होती है। मुर्गियों को बीमारियों से बचाने के लिए बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। चूंकि मुर्गी का उपयोग कई चरणों में होता है इसलिए मुर्गीपालक को मुर्गी की बीमारी से उसकी मृत्यु तक की समस्या का सामना तो करना ही पड़ता है, साथ ही आर्थिक बोझ को भी वहन करना पड़ता है। अतः मुर्गियों को विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों से बचाने के लिए मुर्गीपालकों को सदैव सतर्क रहना चाहिए।

**रोग फैलने के कारण :**

1. उत्तेजक कारण : विशिष्ट रोग, जो जीवाणु, विषाणु, प्रोटोजोआ जैसे सूक्ष्म जीवों के बिना उत्पन्न नहीं होते है, बीमारी के उत्तेजक कारक कहलाते हैं।
2. पुरःप्रवर्तक कारक : रोग उत्पादक ऐसे निम्न कारक हैं– दूषित आहार, अनुचित प्रजनन, अस्वस्थ निवास, गंदा पानी, अधिक मुर्गीयों को एक साथ पर रखना, दूषित प्रबंध।

   "रोग से बचाव, उपचार की अपेक्षा अधिक अच्छा होता है", इस सूक्ति से अधिकाँश लोग परिचित है। इस सूक्ति में रोगों से बचाव या निरोध के महत्व का सार है। जहाँ पर अधिक संख्या में मुर्गियों को रखा जाता है, अधिक उत्पादन व आमदनी के लिए रोगों से बचाव अधिक महत्वपूर्ण होता है। कारण, संक्रामक रोगों के प्रकोप से बहुत अधिक मृत्युदर और उत्पादनों में कमी होती है। अतः समय से पहले इसके बचाव व रोकथाम के उपाय करना चाहिए जिससे मुर्गियों की मृत्युदर घटाकर और उत्पादन बढ़ाकर लाभ प्राप्त किया जा सके।

**संक्रामक रोग से बचने का उपाय :**

संक्रामक रोगों से बचाव के उपायों को मुख्यतः दो वर्गों में रखा जा सकता है –

(क) रोगों से बचाव के सामान्य उपाय।

(ख) रोगों से बचाव के विशेष उपाय।

(क) रोगों से बचाव के सामान्य उपाय : इन उपायों के अन्तर्गत मुर्गियों के समान्य प्रबंध, आवास, आहार, खान–पान की विधियाँ, सफाई आदि बातें आती हैं। मुर्गियों की उत्तम प्रकार की प्रबंध व्यवस्था के अन्तर्गत रखकर रोगों से बचाव के साथ–साथ उनके उत्पादन में भी वृद्धि की जा सकती है।

यह अत्यधिक आवश्यक है कि अन्य उपायों के साथ–साथ एक से दूसरे स्थान से आने–जाने वाले सभी व्यक्तियों, मुर्गियों, आवागमन के साधन इत्यादि पर रोक लगा देनी चाहिए। रोग की रोकथाम के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि मुर्गीशालाएँ, मनुष्यों के आवास गृह, बस्तियों से अलग, खुले और ऊँचे स्थान पर होने चाहिए। इसके आसपास कहीं पानी एकत्र न होता हो। उत्तम मुर्गीशालाओं में हवा व प्रकाश के लिए समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

**संक्रामक रोगों से बचाव के सम्बन्ध में कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए। इनमें से निम्नलिखित उल्लेखनीय है :—**

1. मुर्गीशालाओं की फर्श में किसी प्रकार के छिद्र नहीं होने चाहिए। ताकि उसमें कोई गंदगी, छूत, चीचड़े आदि रोग फैलाने का कारण न बन जाए।
2. कूड़ा—करकट मुर्गीशाला से दूर एकत्र किया जाना चाहिए। मुर्गीशाला के आसपास तथा नालियों के किनारे बुझा हुआ चूना डलवाना चाहिए।
3. खाने पीने के बर्त्तनों को प्रतिदिन अच्छी तरह साफ करना चाहिए।
4. मुर्गीयों के पीने के लिए साफ जल की व्यवस्था होनी चाहिए। पानी स्वच्छ, परजीवी रहित, सुरक्षित और पर्याप्त दिया जाए।
5. वर्ष में एक बार मुर्गीशाला की चूने से पुताई अवश्य होनी चाहिए।
6. दर्शकों को मुर्गीशाला में आने के लिए प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए।
7. पक्षियों की आयु, आकार, जाति, उद्देश्य व संख्या के अनुसार पर्याप्त स्थान देना चाहिए।
8. पालन गृह व लेअर गृह में लगभग 15 मीटर की दूरी रखी जाए एवं दो लेअर गृह के बीच कम से कम 15 मीटर दूरी रखी जाए।
9. पुराने बिछावन का कभी दोबारा प्रयोग न करें और न ही घर के पास एकत्र करें।
10. नियमित रूप से कृमिनाशक का प्रयोग करना चाहिए।
11. गृहों व बिछावन से नमी को दूर रखना चाहिए। बिछावन को रोजाना उल्टा—पुल्टा करें और आवश्यकतानुसार इसमे बुझा चूना व सुपर फॉस्फेट मिलाते रहें।
12. सभी उग्र पक्षियों को तनाव से मुक्त रखें।
13. किसी नई हेचरी से परीक्षण के तौर पर चूजे न खरीदें।
14. निश्चित कर लें कि खरीदे गये चूजे बीमारी मुक्त स्टॉक व हेचरी से हों।
15. चूजे को आगमन पर सही शुरूआत दें। आगमन पर पानी में एन्टीबायोटिक, इलेक्ट्रॉल व शुगर मिलाकर दें।

क. **मुर्गीयों का आहार** : मुर्गियों की वृद्धि, उनसे मिलने वाले उत्पादों और रोगों की रोकथाम के लिए अन्य बातों के साथ यह भी बहुत महत्वपूर्ण है कि मुर्गियों को संतुलित आहार दिया जाए ताकि न केवल उसके स्वयं के शरीर की आवश्यकता की पूर्ति हो सके, अपितु उत्पादन से सम्बन्धित तत्वों की भी कमी न रहे। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि आहार में सब आवश्यक तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो तथा आहार की कीमत अधिक न हो। मुर्गी पालन में कुल लागत का 70 प्रतिशत व्यय आहार पर होता है। यदि सन्तुलित आहार न हो तो आहार सम्बन्धी अनेक रोग होंगे। असंतुलित आहार शारीरिक विकास में गतिरोध पैदा करता है, उत्पादन में कमी लाता है, मुर्गी को अनेक रोगों से ग्रसित होने में सहायक होता है। मुर्गी को स्वस्थ, निरोग रखने के लिए एवं सामान्य विकास एवं उत्पादन पाने के लिए तथा इस व्यवसाय से वांछित आर्थिक लाभ पाने के लिए यह आवश्यक है कि मुर्गी आहार में वे सम्पूर्ण तत्व उचित अनुपात में हो जिनकी मुर्गी को आवश्यकता होती है। आहार तत्व का पूर्णरूपेण विश्लेषण कर उनके गुण/अवगुण को तथा कीमत को ध्यान में रखकर आहार मिश्रण में उसका प्रयोग किया जाना चाहिए। आहार, आयु, जाति, नस्ल व संख्या के अनुसार पर्याप्त संतुलित और एफ्लाटॉक्सीन मुक्त होना चाहिए। काक्सीडियोस्टेट को आहार में 16 सप्ताह तक नियमित रूप से मिलाकर देना चाहिए।

ख. **मुर्गियों का यातायात** : मुर्गियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक स्थानान्तरण के समय बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। ऐसी अवस्था में मुर्गियों में रोग प्रतिरोधी क्षमता का ह्रास होता है। थकावट और उचित खानपान न मिलने से रोग का प्रभाव देखा जाता है। ऐसे मुर्गियों को पूरी तरह आराम व अच्छा खानपान आवश्यक है। मुर्गियों के स्थानान्तरण के पश्चात् उनको

दूसरे मुर्गियों के झुण्ड में मिलाने से पूर्व संगरोध में रखना चाहिए।

ग. **अलगाव व पृथक्करण** : यदि मुर्गियों में बीमारी के लक्षण दिखाई देने लगते है, तो उन्हें ही बाकी के समूह से अलग कर देना चाहिए। यही अलगाव कहलाता है।

1. **रोगी मुर्गियों को** : रोगी मुर्गियों को स्वस्थ मुर्गियों से तुरंत अलग कर देना चाहिए तथा अलग रखकर उनके देखभाल का समुचित प्रबंध करना चाहिए। रोगी मुर्गियों के खाने–पीने का बर्त्तन, दाना और सेवक इत्यादि को अलग रखना चाहिए। स्वस्थ मुर्गियों के संसर्ग में कुछ भी नहीं करना चाहिए। रोगी मुर्गियों को सर्दी, गर्मी और बरसात से बचाव करना चाहिए। रोगी मुर्गीशाला के दरवाजे पर फिनाइल, डेटाल आदि का घोल रखना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति रोगी मुर्गियों को देखने जाए तो उसे अपने जूते के तलवे, छड़ी का निचला भाग आदि उस घोल में डूबाकर जाना और आना चाहिए। इससे रोगाणु एक जगह से दूसरी जगह नहीं फैल सकेगा। पशु चिकित्सक द्वारा परीक्षण करवाकर उचित चिकित्सा करवानी चाहिए। जब तक पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं हो जाता तब तक उसे अलग ही रखना चाहिए।
2. **संदेहात्मक मुर्गियों को** : मुर्गियों में रोग का संदेह होने पर उन्हें स्वस्थ मुर्गियों से अलग कर देना चाहिए। इसके खाने पीने का प्रबंध अलग से करना चाहिए तथा अच्छी देखाभाल करनी चाहिए।
3. **स्वस्थ मुर्गीयों को** : सभी स्वस्थ मुर्गीयों को रोगी मुर्गियों से अलग कर कहीं दूसरी जगह रखना चाहिए। इन मुर्गीयों पर कड़ी निगरानी रखते हुए सुबह–शाम देखना चाहिए।

क. **संगरोध** : संगरोध का देश और राज्यों में बाहर से आने वाले नये मुर्गियों द्वारा रोगों के प्रकोपों से बचाव मे बहुत अधिक महत्व है। आधुनिक समय में यातायात के साधनों में तेज रफ्तार के कारण मुर्गियों के आवागमन में बहुत कम समय लगता है। साथ ही मुर्गी उत्पादक पदार्थ भी विश्व भर में एक से दूसरे देश भेजे जाते हैं। सदैव स्वस्थ व फुर्तीले चूजों को ही खरीदें। खरीदते समय इस बात की पूर्ण जाँच कर ले कि वे किसी छुत अथवा वंशागत रोग से ग्रस्त तो नहीं। चुजे सदैव राजकीय कुक्कुट फार्मो से ही खरीदने चाहिए। मुर्गियों और उनके उत्पादनों, दोनों के ही द्वारा नये–नये रोग फैलने का डर रहता है। इस प्रकार के रोगों से बचाव के लिए संगरोधन का बहुत महत्व है। बाहर से खरीदी गयी मुर्गीयों तथा चूजों को 2 सप्ताह तक अलग रखना चाहिए, ताकि उनमें कोई रोग हो तो उसके लक्षण प्रकट हो जावें। इन्हीं उपायों के फलस्वरूप कई देश बहुत से रोगों से बचे हुए हैं। अतः जब कोई बाहरी मुर्गी किसी नये झुण्ड में मिलाया जाता है तो उसे संगरोधन के लिए परीक्षण किये जाते हैं। जहाँ तक संभव हो ये समस्त परीक्षण मुर्गियों को खरीदने से पहले करना चाहिए। इनका पुनः परीक्षण संगरोध काल में किया जाना चाहिए। लक्षण न प्रकट होने पर उन्हें अपनी मुर्गियों में मिला लेना चाहिए। रोगी मुर्गियों की चिकित्सा के लिए पशु चिकित्सक से सलाह अवश्य लें।

ख. **स्वच्छता** : प्रभावकारी स्वच्छता द्वारा वातावरण से बहुत से रोग कारकों को निकालकर रोगों से बचा जा सकता है। यद्यपि इसमें अधिक परिश्रम और धन खर्च होता है, परंतु मुर्गी प्रजनकों को इसका लाभ भी मिलता है। उत्तम प्रकार की मुर्गीशालाओं, प्रकाश प्रबन्ध, रोशनदानों की व्यवस्था, स्वच्छ पानी की आपूर्ति और दूषणरहित भोजन प्रदान करना, फार्म के कूड़ा–करकट को ठीक से फिकवाना, उत्तम प्रबन्ध व्यवस्था के अंग है। इस सभी को प्रभावकारी ढंग से लागू करने से रोगों का प्रभाव कम होता है। इससे आर्थिक हानियाँ भी कम होती है। फार्म में प्रमुख प्रवेश द्वार पर 'पद–स्नान' की व्यवस्था होनी चाहिए। इसमें सदैव रोगाणुनाशक औषधियाँ डालनी चाहिए। इससे रोगों का प्रवेश रूकता है। मुर्गियों के फार्मों में काम करने वाले सेवकों के लिए रहने की व्यवस्था फार्म परिसर में होनी चाहिए। इससे बाहर से रोगों के आने पर रोक लगती है।

ग. **मुर्गीशाला की सफाई और विसंक्रमण** : मुर्गीशाला एवं आस–पास की सफाई मुर्गियों को स्वस्थ रखने की सबसे पहली आवश्यकता है। गंदे बाड़े में रोगाणुओं की संक्रमण से अनेक प्रकार की संक्रामक रूग्णताएँ उत्पन्न होने की संभावना रहती है,

जबकि स्वच्छ और साफ परिवेश मे रखी गयी मुर्गियाँ इनसे बचे रहते हैं। अस्वच्छ वातावरण में बाह्य परजीवी उत्पन्न होकर स्वयं अथवा रोगाणुवाहक बनकर विभिन्न रोगों को फैलाते हैं।

(1) **मुर्गियों का स्थान :** मुर्गीयों के रहने का स्थान प्रतिदिन भली–भाँति साफ होना चाहिए। कहीं भी गंदगी नहीं रहनी चाहिए। घर–आँगन को कीटाणुनाशक रासायन जैसे फिनाईल, ब्लीचिंग पाउडर, डेटाल, चूना आदि से धोकर साफ एवं शुद्ध करना चाहिए। दीवारों को चूना या मिट्टी से पोतवा देना चाहिए। चूने में कार्बोलिक एसिड भी मिलाया जा सकता है।

(2) **मुर्गियों का बिछावन इत्यादि :** मुर्गियों का कूड़ा–करकट, बिछावनी आदि सुबह में साफ कर देना चाहिए और इधर उधर नहीं फेकना चाहिए। बल्कि कहीं दूर एक जगह गड्ढा बनाकर डाल देना चाहिए और आग लगाकर जला देना चाहिए।

(3) **खाने–पीने का बर्तन :** खाने–पीने का बर्तन गर्म पानी में कीटाणुनाशक दवा मिलाकर रगड़–रगड़ कर साफ करना चाहिए। रोगाणुओं को नष्ट करने के लिए रासायनों के अलावा सूर्य की किरण, अग्नि और खौलता हुआ पानी भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

(ख) **रोगों से बचाव के विशेष उपाय :** रोगों से बचाव के लिए कुछ विशेष प्रकार के उपाय आवश्यक होते है जिससे कुछ विशिष्ट रोगों के बचाव किया जा सकता है।

**मुर्गीयों में टीकाकरण :** हमारे देश की जलवायु उष्म एवं नम है जिसके कारण रोगाणुओं का प्रकोप अधिक होता है। मुर्गियों में संक्रमक रोग होते हैं तथा आर्थिक दृष्टि से काफी हानि पहुँचाते हैं। इन रोगों का उपचार बहुत खर्चीला होता है। संक्रामक रोगों के बचाव हेतु स्वस्थ मुर्गियों में टीका लगवा लेना एक उत्तम व्यवस्था है। यदि समय से टीकाकरण कर दिया जाए तो इन बीमारियों से जो आर्थिक हानि होती है उससे बचा जा सकता है। रोग फैलने के पूर्व स्वस्थ मुर्गीयों में जिस रोग के फैलने की आशंका है, उस रोग का टीका लगवा लेने से मुर्गीयों के अंदर 15–20 दिनों के अन्दर प्रभावी प्रतिरक्षा उत्पन्न हो जाती है जिससे आगे उस रोग की संभावना नहीं रहती है। यदि किसी कारण उसी रोग का आक्रमण हो भी जाता है तो रोग बहुत सुक्ष्म प्रकार का होता है जिसे आसानी से उपचारित किया जा सकता अथवा रोग स्वतः ठीक हो जाता है। आजकल महामारी से बचाव के टीके प्रत्येक प्रदेश मे पशुपालन विभाग द्वारा सरकार की ओर से लगाये जाते हैं। सरकार की ओर से मुफ्त में या कुछ शुल्क लेकर टीका लगाने की व्यवस्था है। इसलिए हर मुर्गी पालकों को चाहिए कि समीप के चिकित्सक / पशुधन प्रसार अधिकारी को सूचना देकर बचाव के टीके उचित समय पर लगवा लेने चाहिए। जहाँ तक संभव हो एक गाँव या क्षेत्र के सभी कुक्कुट पालकों को एक साथ टीकाकरण करवाने का प्रबंध करना चाहिए। इससे टीकाकरण की लागत में कमी आती है। ऐसा करने से आगे मुर्गीयों में संक्रामक रोग फैलने का भय नहीं रहता है एवं धन की हानि से बचा जा सकता है।

**तालिका : मुर्गियों में लगने वाले कुछ प्रमुख टीके एवं उनका विवरण**

| आयु | बीमारी | टीका | देने की विधि | मात्रा | विवरण |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 दिन | मेरेक्स | एच०वी०टी० | त्वचा के नीचे अधोत्वचीय | 2 बूंद | लेयर एवं ब्रॉयलर |
| 5–7 दिन | रानीखेत | एफ० स्ट्रेन लासोटा स्ट्रन | नाक में या मुँह में | 2 बूंद | लेयर एवं ब्रॉयलर |
| 14–15 दिन | गम्बोरो रोग | गम्बोरो जीवित टीका | मुँह में या पीने वाले पानी में | 2 बूंद | लेयर एवं ब्रॉयलर |
| 3–4 सप्ताह | रानीखेत | एफ० / लासोटा स्ट्रेन | नाक / मुँह में | 2 बूंद | ब्रॉयलर |

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 4–5 सप्ताह | मुर्गी चेचक | फाउस पॉक्स बी०एम०/पीजन पॉक्स टीका | परो की जड़ में | फुरेरी | लेयर में |
| 6–8 सप्ताह | रानीखेत | आर०बी० स्ट्रेन (मुक्तेश्वर) | अंतः मांसपेशीय | 0.5 मि०ली० | लेयर में |
| 7–8 सप्ताह | गम्बोरो रोग | जीवित टीका | मुँह में या पीने के पानी में | 2 बूंद | लेयर में |
| 13–14 सप्ताह | संक्रामक श्वसनशोथ | आई०बी०एम० अनुकूलित | मुँह में या पीने के पानी में | 2 बूंद | लेयर में |
| 14–15 सप्ताह | मुर्गी चेचक | बी०एम० स्ट्रेन | मांसपेशी में चुभोकर | – | लेयर में |
| 15–16 सप्ताह | अण्डपतन रोग | ई०डी०एस० 76 मृत टीका | मांसपेशी में चुभोकर | – | लेयर में |
| 17–18 सप्ताह | रानीखेत | आर०बी० स्ट्रेन | अंतः मांसपेशी | 0.5 मि०ली० | लेयर में |

1. **वन्य पशुओं का नियंत्रण :** कई जंगली पशु जैसे लोमड़ी, सियार, कुत्ते इत्यादि कई रोगाणुओं के आगार होते है। इस प्रकार के रोगों की रोकथाम के लिए इन पशुओं का नाश करना आवश्यक होता है।
2. **लक्षणहीन संक्रामक रोगों का निदान :** कई चिरकारी रोग लक्षणहीन होते हैं। इनका प्रभावकारी विधियों से नियमित रूप से निदान होना चाहिए।
3. **रोग से मरे हुए मुर्गियों के शव और बिछाली आदि का उचित प्रबंध :** संक्रामक रोगों की रोकथाम एवं अन्य मुर्गियों में उनके फैलाव को रोकने के लिए मुर्गियों के शव का समुचित ढंग से व्ययन करना आवश्यक होता है। मुर्गियों के स्वास्थ्य के साथ–साथ जन स्वास्थ्य एवं वातावरण प्रदूषण बचाने के लिए भी यह महत्वपूर्ण होता है। रोग के संदूषणजन्य एवं जनस्वास्थ्य के लिए खतरा होने का संदेह हो तो चिकित्सक की सलाह लेकर शव व्ययन हेतु नगरपालिका से मिलकर उचित कदम उठाना चाहिए। जो भी मुर्गियाँ संक्रामक रोग से मरे तो उसके शव को खुले मैदान, चारागाह, नदी, तालाब आदि में नहीं फेंकना चाहिए, अन्यथा रोगाणु अत्यंत तेजी से चारों ओर फैलकर, नए मुर्गियों को संक्रमित करके रोग के फैलाव में सहायक होते है तथा एक बहुत बड़े क्षेत्र मे रोग फैल सकता है। मृत मुर्गियों से एवं संबंधित पदार्थ जैसे– बिछाली मल–मूत्र आदि को या तो आग मे जला देना चाहिए अथवा गहरा गड्ढा खोदकर उसके ऊपर या नीचे 20–30 सेमी. चूने की तह बिछाकर शव को डालकर उस पर मिट्टी का तेल या फिनाइल छिड़कने के उपरांत उस पर चूना, नमक या कपड़ा धोने का सोडा या कास्टिक सोडा डाल देने के पश्चात् अच्छी तरह मिट्टी, पत्थर या काँटेदार झाड़ियों से दबा देना चाहिए। ऐसा न करने पर मांसभक्षी शव को निकालकर रोग के फैलाव में सहायक होते है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि खोदे गए गड्ढों से रिसाव किसी पानी के स्रोत की ओर न हो। गड्ढों की गहराई लगभग दो मीटर तथा लम्बाई व चौड़ाई मुर्गियों की संख्या के अनुसार बनानी चाहिए।
4. **संक्रामक रोगों की अधिसूचना :** जब किसी संक्रामक रोग का प्रकोप हो तो यह सूचना जन संचार माध्यमों, जैसे रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्रों आदि द्वारा समस्त देश में देनी चाहिए। संदिग्ध रोगों की अधिसूचना तुरंत समीप के पशु–चिकित्सा अधिकारी अथवा पशु औषधालय के प्रभारी, पशुधन प्रसार अधिकारी को अथवा विकास प्रखण्ड या थाने में इसकी मौखिक अथवा लिखित रूप में सूचना देनी चाहिए। रोग की सूचना मिलते ही टीका के उपलब्धता के अनुसार पशु पालन विभाग की ओर से तत्काल टीकाकरण की व्यवस्था की जाती है। इन जगहों से संक्रामक रोग की रोकथाम एवं उपचार का प्रबंध शीघ्रातिशीघ्र किया जाता है।

**विसंक्रमण :** संक्रामक रोगों से बचाव के लिए अनेकों विंसक्रामकों का उपयोग किया जाता है। विसंक्रमण पराबैंगनी किरणों, उष्मा, रासायनों जैसे कि सोडा बाइकार्बोनेट, मरक्यूरिक क्लोराइड, ब्लीचिंग पाउडर, कॉपर सल्फेट, फिनायल, सोडियम कार्बोनेट, चूना, गैसों जैसे कि सल्फर डाइऑक्साइड, फार्मल्डीहाइड, आदि का उपयोग किया जाता है। जिन स्थानों पर रोगी मुर्गियों के स्राव गिरते हों वहाँ भली–भाँति विसंक्रमण करना चाहिए।

○○○○

# आधुनिक बत्तख पालन

**डा० चंचिला कुमारी**
विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

कुक्कुट पालन के समान बत्तख पालन भी हमारे देश में काफी पुराना, एक गरीब किसान के रोजगार का साधन और पशु प्रोटीन के तौर पर खाने में लाये जाने वाले एक व्यवसाय के रूप में माना जाता है, मगर बत्तख पालन केवल गांव एवं देहात के लोगो तक ही सीमित है क्योंकि बत्तख पालन एक पूर्ण व्यवसाय के रूप में अभी तक उभर कर नहीं आ सका है।

हमारे देश में अण्डे का उत्पादन तालिका में मुर्गियों के पश्चात् बत्तख का ही स्थान है। बत्तख के अण्डों की संख्या देश में उत्पादित सम्पूर्ण अण्डों का लगभग 5 प्रतिशत है। वर्तमान में हमारे देश के पूर्वी तथा दक्षिणी क्षेत्रों में गरीब किसान समुदाय बत्तख पालन को लगभग एक पूर्ण व्यवसाय के रूप में अपना रहा है क्योंकि इन क्षेत्रों में काफी संख्या में दलदल एवं जल बाहुल्य क्षेत्र है जिसको बत्तख प्राकृतिक तौर पर पसन्द करती है। परन्तु अभी भी ये बत्तख पालक अधिकतर देशी नस्ल की बत्तख पालते हैं जो प्राकृतिक विधि द्वारा आहार ग्रहण करती हैं और जिनकी अण्डा देने की क्षमता 130 से 140 अण्डा प्रति वर्ष प्रति बत्तख होती है जो कि अच्छी नस्ल या विदेशी नस्ल की तुलना में बहुत कम है (300 / वर्ष / बत्तख)।

यद्यपि बत्तख को कुक्कुट पालन की तुलना में अण्डा या मांस उत्पादन के लिये पालना एक लाभकारी और किफायती व्यवसाय है फिर भी बत्तख पालन की ओर किसानों का ध्यान बहुत कम गया है और इस व्यवसाय का स्तर लगभग स्थिर रहा है। इसके बाद भी हमारे देश के कुल राष्ट्रीय उत्पादन में बत्तख पालन का योगदान प्रतिवर्ष लगभग चार करोड़ रुपये रहा है। मगर इस बारे में किसानों की यह धारणा गलत है कि बत्तख बिना तालाब के, बिना नहीं पाले जा सकते। उत्तम नस्ल के बत्तख कुक्कुट की तरह भी पाले जा सकते हैं, इस पर काफी शोध कार्य केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भुवनेश्वर तथा केन्द्रीय बत्तख प्रजनन फार्म (भारत सरकार), हेसारघटा, बेंगलूर द्वारा किया जा रहा है। इन संस्थानों द्वारा विकसित प्रौद्योगिकी अपना कर कृषक भाई इस क्षेत्र में भी अपना व्यवसाय शुरू कर सकते हैं।

बत्तखों के कुछ विशेष गुण, जिनके कारण बत्तख पालन को कुक्कुट पालन से अधिक लाभकारी व्यवसाय माना जाता है, इस प्रकार हैं :—

1. बत्तख मुर्गियों की अपेक्षा 40 से 50 अण्डे अधिक देती है।
2. बत्तख के अण्डे 15 से 20 ग्राम अधिक बड़े होते हैं।
3. बत्तखों को कुक्कुटों की अपेक्षा कम ध्यान देना पड़ता है। साधारणतया बत्तख रात्रि के समय में बत्तख घर में रखे जाते हैं और दिन निकलते ही उन्हें अहाते में घर, के पीछे या खेत में खुले छोड़ दिया जता है। अतः बत्तख पालन में खर्च कम आता है।
4. बत्तखें खेतों में चरना पसन्द करते हैं इस कारण काफी हद तक वह अपना खाद्य खेतों से ग्रहण करते हैं उदाहरण के तौर पर खरपतवार कीड़े—मकोड़े, छोटी मछली, कवक (फंजाई), शैवाल (एल्गी), जल में उगने वाली घास, घोंघे इत्यादि। अतः बत्तख के लिये आहार का व्यय कम हो जाता है।
5. बत्तखों में अण्डा उत्पादन की क्षमता दूसरे साल भी बनी रहती है जिससे रिप्लेसमेन्ट स्टॉक का खर्चा बहुत कम हो जाता है जो कुक्कुट में नहीं है। अतः किसान दो साल तक लगातार अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।
6. हमारे देश में ऐसे कई क्षेत्र हैं जहाँ साल भर अधिकतकर नमी रहती है तथा कुक्कुट पालन व्यवसाय ठीक एवं लाभप्रद तरीके से नहीं अपनाया जा सकता, वहाँ बत्तख पालन ही एक ऐसा व्यवसाय है जो किसान एक रोजगार के तौर पर अपना सकते हैं।

7. बत्तखों में कैनाबलिज्म जैसा व्यवहार नहीं पाया जाता है जोकि कुक्कुट में एक प्रमुख समस्या है। इस समस्या से कुक्कुट में मृत्यु दर बढ़ जाती है जो बत्तखों में नहीं है।

8. बत्तख लगभग 95 प्रतिशत अण्डा प्रातः 9 बजे तक दे देती है जिस कारण किसान आसानी से अण्डों को एकत्र कर सकते हैं।

9. बत्तख काफी समझदार होती है जिस कारण उसको बड़ी आसानी से प्रशिक्षण दिया जा सकता है जैसे कि उनको बत्तखघर से बाहर खेत तालाब पर किस तरह जाना चाहिए।

10. बत्तख के अण्डों का छिलका काफी मोटा होता है जिससे अण्डे के स्थानान्तरण में टूट—फूट का भय कम होता है। इससे लाभ में वृद्धि होती है जोकि कुक्कुट के अण्डों में नहीं है।

11. बत्तखों में कुक्कुट की अपेक्षा रोगों से लड़ने की क्षमता अधिक होती है। अतः इनमें मृत्युदर और रोग कुक्कुट की अपेक्षा कम होते हैं।

12. बत्तख के अण्डे और मांस हमारे देश के उच्च वर्ग और बड़े वर्ग और बड़े होटलों द्वारा उपयोग किये जाते हैं।

    कुक्कुट की भांति बत्तख में भी अण्डे देने वाली और मांस वाली ब्रॉयलर बत्तख अलग—अलग नस्ल की होती हैं। अण्डे देने वाली नस्ल इंडियन रनर और कैम्पबेल प्रमुख हैं। ब्रॉयलर या मांस के लिये पाली जाने वाली बत्तखों में प्रमुख हैं—पेकिन, मस्कोवी, आरफीगंटन एवं एलिसवरी।

**कैम्पबेल की तीन उपजाति हैं —**

(1) खाकी (2) सफेद (3) काला

इन तीनों उपजातियों में खाकी कैम्पबेल अण्डे देने में सबसे प्रमुख हैं। एक खाकी कैम्पबेल साल में 300 से अधिक अण्डे दे देती है। इंडियन रनर साल में 250 तक अण्डे देती है। अण्डे देने वाली बत्तख 20—22 सप्ताह में अण्डे देना शुरू कर देती है।

बॉयलर बत्तख में मस्कोवी सबसे अच्छी और तेजी से बढ़ने वाली बत्तख मानी जाती है। इनका शारीरिक भार 4.5 से 6.5 किलोग्राम 16 सप्ताह तक हो जाता है। पेकिन (सफेद) और एलिसवरी 8 सप्ताह से 4 से 4.5 किलोग्राम तक हो जाती है, जबकि आरफीगंटन लगभग 30 किलोग्राम तक बढ़ पाती है।

इनके छोटे बच्चे को डकलिंग, पर बत्तख को ड्रेक और मादा को डक कहा जाता है। डकलिंग की ब्रूडिंग ठीक कुक्कुट के बच्चों की भांति ही की जाती है। यद्यपि, बत्तखों की आवास व्यवस्था भी कुक्कुट के आवास की तरह ही होती है, परन्तु पिंजड़ा पद्धति इनमें प्रचलित नहीं है। इनके पानी के बर्त्तन गहरे और चौड़े होते हैं ताकि बत्तख पानी पीते समय अपना सिर आँख तक डुबो सके। यह इनका प्राकृतिक स्वभाव है अन्यथा इनकी आँखों के चारों ओर की खाल सूखने लगती है और सख्त पपड़ी सी जमने लगने लगती है जो आगे चल कर आँखों को अन्धा बना देती है।

बत्तखों में रोग प्रतिरोधक क्षमता मुर्गियों की अपेक्षा अधिक होती है। इनमें श्वांस रोग, फेफड़ों में टयूबरकुलोसिस तथा पॉक्स सामान्यतः नहीं होता। बत्तखों में दो खास रोग होते हैं (1) वाइरल हेपेटाइटिस, (2) डक प्लेग। वाइरल हेपेटाइटिस 2 से 3 सप्ताह के बच्चों को प्रभावित करता है जबकि डक प्लेग किसी भी आयु वर्ग में फेल सकता है।

अतः इन तथ्यों से यह निष्कर्ष उभर कर आता है कि बत्तख पालन हमारे क्षेत्र के विकास और देश में अण्डे और मांस की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

○○○○

# आधुनिक टर्की पालन

**रुपेश रंजन**
तकनीकी पदाधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

टर्की मुख्यतः मांस के लिए पाली जाती है और यह अधिकांशतः पश्चिमी देशों–विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका तथा यूनाइटेड किंगडम में अत्यधिक प्रसिद्ध है। इसका सफेद मांस कम चर्बी तथा स्वादिष्टता के कारण अत्यधिक पसंद किया जाता है तथा विशेषकर क्रिसमस एवं नव वर्ष के त्योहारों पर इसकी मांग अधिक होती है। भारत में टर्की पालन का कार्य अभी प्रारंभिक अवस्था में है और देश में विशेषकर विभिन्न प्रकार के आहार एवं रोजगार उपलब्ध कराने के लिए इसे कुक्कुट पालकों में लोकप्रिय बनाने की अवश्यकता है। टर्की पालन का कार्य परिवार अथवा युवाओं के लिए एक परियोजना हो सकती है। यह लघु तथा सीमांत किसानों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का एक सशक्त माध्यम हो सकता है क्योंकि इन पक्षियों को घर, उपकरणों एवं प्रबन्धन पर अत्पतम व्यय करके खुले अथवा अर्द्ध सघन पद्धति से पाल जा सकता है।

टर्की को पालना कठिन कार्य है। टर्की पालन प्रारंभ करने के बाद थोड़ा सा ध्यान देने की आवश्यकता है। कभी–कभी ये दाना खाना तथा पानी पीना धीरे–धीरे सीखती है। टर्की को मुर्गी तथा अन्य कुक्कुटों से अलग रखना चाहिए जिससे उन्हें बीमारियों से बचाया जा सके। ब्रूडिंग के कुछ सप्ताह के दौरान टर्की को गर्म तथा सूखे वातावरण में रखना अत्यन्त आवश्यक है। यदि अच्छे स्टॉक से टर्की पालन का कार्य प्रारंभ किया गया है और आहार, आवास तथा प्रबंधन की उचित व्यवस्था की गई है तो कोई भी व्यक्ति सफलतापूर्वक यह कार्य कर सकता है।

वन्य टर्की से अनेक पालतू टकी प्रजातियों को विकसित किया गया है। उनमें लॉर्ज ह्वाइट (इन्हें ब्रॉड वेस्टेड ह्वाइट भी कहा जाता है) आदि प्रमुख हैं। आजकल उपरोक्त तीनों प्रजातियों में से केवल लॉज ह्वाइट प्रजाति ही व्यवसायिक उद्देश्य के लिए प्रसिद्ध है। इनमें से ब्रॉड ब्रेस्टेड ब्रोन्ज प्रजाति अच्छी वृद्धि दर, पुष्टिकरण, मांसलता तथा आहार रूपान्तरण के लिए बहुत प्रसिद्ध है। फिर भी इसके डार्क पिन पृच्छ होने के कारण संसाधित प्रदर्शन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह एक प्रमुख कारण है, जिसकी वजह से ब्रोन्ज का स्थान लॉर्ज ह्वाइट प्रजाति ले चुकी है।

टर्की का विपणन 16 सप्ताह की उम्र पर किया जाता है। वयस्क अवस्था में इसकी मादा का शरीर भार प्रायः 8 कि०ग्रा० तथा नर का लगभग 12 कि०ग्रा० हो जाता है। स्थानीय बाजार की मांग के आधार पर आरंभिक अवस्था में ही स्लाटर करने पर छोटे बच्चे का रोस्टर बनाया जा सकता है।

ब्रूडर आवास, पूर्ण–संचार युक्त अच्छा बना होना चाहिए। भवन का फर्श अच्छा होनाा चाहिए जिससे उसे आसानी से साफ और रोगाणुरहित किया जा सके। इसके लिए सीमेंट से बना फर्श सर्वोत्तम होता है। टर्की को सामान्यतया परिसर अथवा सघन बिछाली पद्धति में पाला जाता है। अनुसंधान कार्य के लिए छोटे समूहों के अलावा पिंजरा पद्धति अन्य मामलों में लोकप्रिय नहीं है। सघन बिछाली पद्धति के लाभों की तुलना परिसर पद्धति से करने पर स्पष्ट होता है कि सघन बिछाली पद्धति से परभक्षियों तथा प्रतिकूल मौसम से उत्तम सुरक्षा, जमीन की कम लागत, कम मजदूरी, रोगों से बचाव (जमीन से उत्पन्न होने वाले रोग परजीवी आदि) तथा प्रबन्धन में सुविधा का लाभ अधिक होता है।

यदि टर्की चूजों (पोल्ट) को जीवित रखना हो और उनसे अच्छी गुणवत्ता के उत्पाद प्राप्त करना हों तो सेने (ब्रूडिंग) के समय ही उन्हें पर्याप्त मात्रा में मूलभूत आवश्यकताएं उपलब्ध कराना चाहिए। मूलभूत आवश्यकताओं के अन्तर्गत ताजी हवा, स्वच्छ पानी, उपयुक्त आहार, अच्छा बिछावन तथा मुर्गी का प्रबन्धन करान अति आवश्यक है। यदि चूजों को सेने की विभिन्न पद्धतियों से सही ढंग से सेया गया है तो इन मूलभूत आश्वयकताओं का उपयोग नये हैच के चूजों के लिए किया जा सकता है।

सर्दी और बसंत के महीने में चूजों को अपने जीवन के प्रथम 6 सप्ताह तक और गर्मी के महीने में प्रथम 4 सप्ताह तक गर्मी की

आवश्यकता होती है। इस प्रकार चूजों के लिए प्रथम 8 सप्ताह तक सोने की अवधि निर्धारित करना सुरक्षित होगा क्योंकि इस आयु के टर्की चूजों को वर्ष में किसी भी प्रकार के आवास में स्थानांतरित किया जा सकता है और ऐसे में उनको ठण्डा लगने का जोखिम नहीं रहता है।

एक दिवसीय टर्की चूजों को सेने के लिए अनेक प्रकार के ब्रूडर उपलब्ध हैं जिनसे चूजों को उपयुक्त ढंग से सेया जाता है। ब्रूडर में गर्मी के स्रोत के रूप में बिजली, गैस, तेल, लकड़ी अथवा कोयले का प्रयोग किया जा सकता है। ब्रूडिंग चूजों को गैस तथा बिजली से सेना सबसे अच्छा होता है। मुर्गियों के लिए उपयुक्त अधिकांश ब्रूडिंग पद्धतियों का टर्की के चूजों के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। यद्यपि यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि टर्की अधिक भार वाली नस्ल की हो तो बड़े कमरे की आवश्यकता होती है जिससे कि दूसरे सप्ताह के दौरान वृद्धि के समय फर्श स्थान कम न हो।

**स्थान की आवश्यकता**

कैनाबॉलिज्म से बचाने के लिए पर्याप्त फर्श स्थान उपलब्ध कराना आवश्यक है। फर्श स्थान की आवश्यकता विभिन्न तथ्यों जैसे– आवासीय पद्धति (ब्रूडर हाउस, अर्द्ध–सघन अथवा सघन) पक्षी की आयु तथा आकार (बड़े अथवा छोटे आकार के) आदि पर निर्भर करती है। सर्वाधिक उत्पादन प्राप्त करने की लिए उन्हें कभी भी अधिक भीड़ में नहीं रखना चाहिए। सघन बिछाली पद्धति में टर्की चूजों को प्रथम 3, 4 सप्ताह के दौरान एक वर्ग फुट/चूजा तथा इस आयु के बाद 8 सप्ताह तक 1.5 वर्ग फुट फर्श स्थान की आवश्यकता होती है, जो उनकी देहिकीय वृद्धि के लिए पर्याप्त होता है। इस प्रकार 4 सप्ताह की आयु के 100 चूजों को रखने के लिए 10 वर्ग फुट का एक कम्पार्टमेंट उपयुक्त होता है तथा उसके बाद उन्हें 8 सप्ताह तक के ब्रूडिंग के लिए 10x15 वर्ग फुट के कम्पार्टमेंट में स्थानान्तरित किया जा सकता है। वे जैसे–जैसे बढ़ते जाते हैं उनके फर्श स्थान में उसी अनुपात में वृद्धि की जाती है। आठ से बारह सप्ताह की आयु तक के चूजों के लिए 2 वर्ग फुट/चूजा तथा उसके बाद सोलह सप्ताह की आयु तक के चूजों के लिए 2.5 वर्ग फुट/टर्की फर्श स्थान की आवश्यकता होती है। सोलह सप्ताह की आयु केक बादि उने लिए 3–5 वर्ग फुट/टर्की फर्श स्थान आवश्यक होता है।

छोटे प्रकार की टर्की के लिए फर्श स्थान कम किया जाता है। टर्की को कम से कम फर्श स्थान में भी पाला जा सकता है बशर्ते कि पक्षियों की डिबीकिंग हुई हो तथा न्यूनतम श्वसन संक्रमण के जोखिम का ध्यान रखते हुए यांत्रिक रूप से बात–संचार की पर्याप्त व्यवसाी की गई हो। परिसर पद्धति में फर्श स्थान को लगभग एक तिहाई तक कम किया जा सकता है यदि धूप और वर्षा से बचाने के लिए पक्षियों को कुछ आश्रय उपलबध कराया गया हो।

टर्की का प्रबन्धन की प्रायः मुर्गियों की ही तरह होता है, फिर भी पक्षी के आकार के अनुरूप प्रयुक्त फर्श–स्थान, दाना–पानी के बर्त्तनों के स्तर उपलबध कराना चाहिए। ब्रूडिंग के दौरान विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। व्यवहार के अनुसार टर्की चूजों को मुर्गियों के चूजों की अपेक्षा दुगुना सीान उपलब्ध करना चाहिए। टर्की के चूजों की भाँति अत्म निर्भर नहीं होते हैं, इसलिए उन्हें सर्वप्रथमक खिलाने के लिए खुशामद या जबरदस्ती करनी पड़ती है। टर्की प्रायः घबराने वाले स्वभाव के पक्षी होते हैं इसलिए उनके साथ अधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है।

**दाने व पानी के बर्त्तनों का प्रबन्ध**

उस अवस्था में जब चूजे अपने आप से खाने पीने में असमर्थ हों तब एक या दो दिन के लिए टर्की चूजों को दिन में 2–3 बार हाथ से दाना खिलाना आवश्यक होता है। सात दिन से 3 सप्ताह तक की आयु के चूजों के लिए छोटे आकार के फीडर का प्रयोग कर सकते हैं। तीन सप्ताह की आयु तक के चूजों के लिए प्रति चूजा दो रेखीय इंच वाले फीडर स्थान उपलब्ध कराना चाहिए। इस आयु के बाद विपणन (बाजार में जाने योग्य) तक वर्द्धनशील चूजों को 4 इंच गहरे तथा 3 रेखीय इंच स्थान वाले बड़े आकार के फीडर का

प्रयोग सर्वोत्तम साबित हुआ है। इसे या तो लटका दिया जाता है अथवा स्टैंड पर फिक्स कर दिया जाता है।

प्रायः चूजों को शुरू में शीशे या प्लास्टिक फाउन्टेन से अथवा स्वचालित तरीके से पानी प्रदान किया जाता है। चूजों को पर्याप्त मात्रा में स्वच्छ पानी उपलब्ध कराना चाहिए। चूजों के लिए प्लास्टिक के फाउंटेन टाइप के तथा स्वचालित पानी के बर्त्तन (वाटरर) का प्रयोग किया जा सकता है। एक दिन से 3 सप्ताह तक की आयु के प्रति 100 चूजों के लिए 5 से 10 लीटर के तीन फाउंटेन की आवश्यकता पड़ती है। 3 सप्ताह से विपणन की आयु तक के प्रति 100 चूजों के लिए 20 लीटर क्षमता वाले दो फाउंटेन की जरूरत पड़ती है। छोटे समूह के लिए उनकी संख्या के आधार पर फाउंटेन का आकार निर्धारित किया जाता है। पानी के बर्त्तनों में पानी का स्तर चूजों के वक्ष के स्तर तक होना चाहिए, जिससे उनको पानी ग्रहण करने में सुगमता होगी। सही ढंग से दाना–पानी ग्रहण करने के लिए बिछावन की सतह को प्रतिदिन सही (उलट–पुलट) करना आवश्यक होता है।

### एक दिवसीय टर्की चूजों के लिए प्रबन्ध

हैच के अनुमानित दिन अथवा चूजों की डिलीवरी से पूर्व ही एक दिवसीय चूजों के लिए तैयारियाँ शुरू कर देनी चाहिए। ब्रूडर हाउस तथा ब्रूडिंग के दौरान उसमें प्रयोग किये जाने वाले सभी सामानों/उपकरणों की ठीक ढंग से सफाई करनी चाहिए। यदि ब्रूडर हाउस का प्रयोग पहले मुर्गियों अथवा टर्की के लिए किया जा चुका है तो एक दिवसीय चूजों को रखने के पहले ब्रूडर हाउस तथा उसके सामानों/उपकरणों की बहुत ही सावधानीपूर्वक सफाई तथा विसंक्रमित करना अत्यन्त आवश्यक है। ब्रूडर घरों को विसंक्रमित करने के लिए फिनाइल अथवा क्वाटरनी अमोनियम कम्पाउन्ड्स का प्रयोग किया जा सकता है। इन विसंक्रमकों में से किसी का भी प्रयोग करने के बाद ब्रूडर हाउस को लगभग दो सप्ताह तक सूखने तथा उसके अन्दर की हवा को बाहर निकलने के लिए खाली छोड़ देना चाहिए, उसके बाद ही उसमें नए चूजों को रखना चाहिए।

ब्रूडर घर की सफाई, विसंक्रमित तथा सुखाने के बाद उसके फर्श पर 3 से 4 इंच मोटाई की बिछावन सामग्री फैला देनी चाहिए। बिछावन सामग्री का चयन करते समय इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाये कि बिछावन सामग्री मोटी तथा सूखी हो और धूल तथा नमी रहित हो। बिछावन सामग्री कई प्रकार की होती है, इनमें जो कम खर्चीली हो, अधिकांशतः उसी का प्रयोग किया जाता है। बिछावन सामग्रियों में समान्यतः लकड़ी का छीलन, लकड़ी का बुरादा, धान की भूसी तथा कागज के कतरन आदि होते हैं। धान की भूसी को टर्की के लिए बिछावन सामग्री के रूप में इस्तेमाल करने से बचना चाहिए क्योंकि टर्की के बच्चे अत्यधिक पेटू (अधिक खाने वाले) होने के कारण धान की भूसी को निगल जाते हैं। यह धान की भूसी उनकी भोजन नलिका (ग्रास नली) में अटक जाती है, जिससे उनकी मृत्यु हो जाती है। बिछावन को कागज से पूरी तरह से ढक कर रखना चाहिए जिससे चूजे उसे खा न सकें। पैर की समस्याओं को रोकने के लिए खुरदरे अथवा पनालीदार कागज का प्रयोग करना चाहिए तथा इस कागज को सात दिन के बाद निकाल देना चाहिए। ब्रूडर घर को कोनों को छोटे तार की जाली अथवा ठोस सामग्री से गोल करना अच्छा होता है, इससे चूजों को कोनों में जमा होने से सहायता मिलती है।

ब्रूडर घर में तार की जाली का फर्श प्रयोग करने से ब्रूडर घर के आकार में कमी की जा सकती है। प्रथम चार सप्ताह के दौरान 16 गेज के तार से 1/2 इंच की बनी जाली का फर्श के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इसके बाद 16 गेज के तार से 3/4 इंच की बनी जाली का प्रयोग किया जा सकता है। हल्के भार के तार होने के कारण ये शीघ्र ही घिस जायेंगे। तारयुक्त फर्श ब्रूडरों को एक के ऊपर एक करे कई तलों में रखा जा सकता है। प्रथम 3–4 सप्ताह तक की आयु के 59–60 चूजों को रखने के लिए 3' x 6' x 1.5' फीट आकार का एक तल का ब्रूडर उपयुक्त होता है। इस आयु के बाद इसमें केवल 25–30 ग्रोविंग चूजे ही रखे जा सकते हैं। यदि तारयुक्त फर्श ब्रूडरों का प्रयोग किया जा रहा हो तो उसे पहले सात दिन तक खुरदरे अथवा पनालीदार कागज से ढंकना आवश्यक है। इससे तापमान को बनाये रखने में सहायता मिलती है और तार की जाली में चूजों के पैर फंसने से उनकी मृत्यु का खतरा भी नहीं रहता और वे आसानी से चल–फिर सकते हैं।

होवर के नीचे जहाँ गर्मी, भोजन और पानी उपलब्ध है, चूजों को रखने के लिए होवर के चारों ओर ब्रूडर गार्ड अथवा ब्रूडर रिंग का प्रयोग करना चाहिए। इन गार्डों को वहाँ तब तक रखना चाहिए जब तक कि चूजें उस नए वातावरण से परिचित न हो जाएं। ब्रूडर गार्ड चूजों को ऊर्जा स्रोत से अलग होने से भी बचाता है। ब्रूडर गार्ड 14 से 18 इंच की ऊँचाई के पनालीदार कार्ड बोर्ड अथवा धातु की चादर के बने होने चाहिए। ब्रूडर गार्ड यदि धातु की चादर के बनाये जाते हैं तो इसमें पैनल लगाकर एक दूसरे को जोड़ा जा सकता है ताकि वे ब्रूडिंग क्षेत्र को चारों ओर से घेर सकें। प्रारम्भ में ब्रूडर गार्ड को गर्मी के स्रोत से 2 से 3 फुट की दूरी पर रखना चाहिए, जिसे बाद में धीरे–धीरे बढ़ाकर 3–4 फुट कर देना चाहिए। गार्ड को ब्रूडिंग के दसवें दिन के बाद हटा देना चाहिए। दाने और पानी के बर्त्तनों तथा गार्ड के बीच में 6 से 12 इंच की दूरी बनाये रखना चाहिए। इस खाली स्थान से चूजे दाना और पानी के बर्त्तनों के चारो ओर आसानी से घूमा सकेंगे। ब्रूडर को सभी प्रकार से तैयार रखना चाहिए और चूजों के आने से दो दिन पूर्व ब्रूडर को चला देना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित हो सके कि बिजली के सभी स्विच संतोषजनक ढंग से कार्य कर रहे हैं और इससे ब्रूडिंग क्षेत्र गर्म हो रहा है। चूजों को ब्रूडर में रखने से ठीक पहले दाने और पानी के बर्त्तनों को भरकर सही स्थान पर लगा देना चाहिए।

टर्की के बच्चों को मुर्गियों की अपेक्षा अधिक गर्मी की आवश्यकता होती है तथा प्रथम सप्ताह ब्रूडिंग के दौरान इनरके लिए 95 डिग्री फा० तपापमान बनाए रखना चाहिए। इस आयु के पश्चात ब्रूडर के अंदर के तापमान को प्रति सप्ताह लगभग 5 डिग्री फा० तब तक कम करते रहना चाहिए जब तक कि तापमान 70 डिग्री अथवा 75 डिग्री फा० तक न पहुँच जाये अथवा वायुमंडलीय तापमान के अनुकूल न हो जाये। सर्दी की ऋतु में ब्रूडिंग के दौरान कृत्रिम गर्मी को छठे सप्ताह तथा ग्रीष्म ऋतु में ब्रूडिंग के दौरान चौथे सप्ताह बंद कर देना चाहिए। ब्रूडर के अन्दर उपयुक्त तापमान है अथवा नहीं इसका पता इस बात से लगाया जा सकता है कि एक सप्ताह में अथवा इससे आगे ब्रूडर में चूजे स्वतंत्र रूप से घूम–फिर रहे हैं कि नहीं। ब्रूडर घर में समय रोशनी का प्रबन्ध रखना चाहिए अन्यथा अंधेरे में टर्की के चूजों के डर कर एक कोने में सिमट कर मरने की सम्भावना बढ़ जाती है।

## आहार

टर्की को आहार देना मुख्य तथ्य है, क्योंकि उत्पादन लागत का 70 प्रतिशत भाग इनके आहार पर ही व्यय हो जाता है। वर्तमान में टर्की के लिए मुर्गियों की तरह संतुलित आहार बाजार में आसानी से उपलब्ध नहीं है, अनुभवशील किसान इसे एन०आर०सी० विशिष्टताओं के अनुरूप आसानी से तैयार कर लेते हैं अथवा कुक्कुट पोषण विशेषज्ञों के परामर्श से तैयार करते हैं। यद्यपि टर्की के आहार में मिलाने वाले आहार अवयव वही हैं जो मुर्गी के राशन में होते हैं, परन्तु टर्की–आहार मुर्गी–आहार से भिन्न होता है। टर्की आहार में प्रोटीन, खनिज तथा विटामिन की अधिक मात्रा होती है, जो टर्की की वृद्धि में सहायक होते हैं। इसलिए टर्की–राशन मुर्गी–राशन की अपेक्षा महंगा होता है। दोनों लिंगों में ऊर्जा तथा प्रोटीन की आवश्यकता अलग–अलग होने के कारण उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए उनको हैच निकालते समय अलग–अलग कर लियार जाता है और अलग–अलग ही पाला जाता है। आहार ग्रहण करने के मामले में टर्की के चूजे मुर्गी के चूजों की अपेक्षा अधिक परेशान करते हैं। हैच निकालने के तुरन्त बाद उनको खिलाना अच्छा होता है। यदि तुरन्त उनको आहार और पानी आसानी से नहीं मिलता है तो चूजों में भुखमरी और निजर्लीकरण जाता है। चूजों को जल्दी से खाने में मदद के लिए पहले आहार को एग फिलर लेट्स, चिक बॉक्स लिड, पेपर प्लेट्स, प्लास्टिक की छोटी ट्रे अथवा बॉक्स कवर पर रखना चाहिए। जब चूजे आयें तो उनके सामने आहार का बर्त्तन रख देना चाहिए। जब एक या दो चूजे आहार खाना प्रारंभ कर देते हैं तो उनको देखकर और चूजे खाने की ओर आकर्षित होते हैं। आहार को खराब होने से बचाने के लिए आहार के बर्त्तन को उसकी ऊँचाई का 1/3 भाग ही आहार से भरना चाहिए।

लगभग 6 सप्ताह की आयु तक की टर्की के लिए स्टार्टर आहर में 28 प्रतिशत प्रोटीन से आहार कार्यक्रम शुरू किया जाता हैं। छः से आठ सप्ताह की आयु के चूजों के लिए ग्रोवर आहार में 26 प्रतिशत प्रोटीन मिलाकर देना चाहिए तथा 16 सप्ताह की आयु तक की टर्की को 22 प्रतिशत प्रोटीन युक्त आहार (दूसरा ग्रोवर आहार) देना चाहिए। सोलह सप्ताह से ऊपर विपणन की आयु तक 16

प्रतिशत प्रोटीन युक्त फिनिशर आहार देना चाहिए।

**तालिका 1 : वर्द्धनशील चूजों के लिए फीडिंग कार्यक्रम**

| चूजों की आयु (सप्ताह ) | आहार का प्रकार | प्रोटीन प्रतिशत (कि०ग्रा० कैलोरी) | ऊर्जा |
|---|---|---|---|
| 0 – 6 | स्टार्टर आहार | 28 | 2800 |
| 6 – 8 | ग्रोवर–पहला आहार | 26 | 2800 |
| 8 – 16 | ग्रोवर–दूसरा आहार | 22 | 3000 |
| 16 –विपणन | फिनिशर आहार | 16 | 3500 |

**नियमित चिकित्सा**

सधारणतः छोटे टर्की समूहों के साथ रोगों से होने वाले नुकसान की समस्या नहीं है, फिर भी कभी–कभी कुछ नुकसान हो जाता है। व्यवसायिक उद्यमियों के पक्षी समूहों में कहीं–कहीं 3 से 4 प्रतिशत मृत्यु–दर देखी गई है। टर्की मुर्गियों अपेक्षा कुछ रोगों में अधिक प्रतिरोधी है। इनमें मैरेक्स तथा ब्रोंकाइटिस बीमारी बहुत ही कम देखने को मिलती है। रानीखेत रोग, पक्षी चेचक तथा कॉक्सीडियोसिस बीमारी कहीं–कहीं थोड़ी बहुत दिखाई पड़ जाती है। चूजों को अच्छे साफ–सुथरे स्थान से खरीदना चाहिए तथा उनको पर्याप्त रूप में टीका लगा होना चाहिए तथा ऐसे स्थान पर सफाई के सर्वोत्तम नियमों का अनुपालन हो रहा हो। पक्षियों को औषधि देने के बजाय बेहतर प्रबन्धन से रोगों की रोकथाम के उपाय पर विशेष बल देना चाहिए।

टर्की चूजों के स्वास्थ्य की स्थिति का पता लगाने हेतु टर्की समूह की जाँच प्रतिदिन करना तथा आवश्यकतानुसार स्वास्थ्य प्रबन्ध करना चाहिए। अगर कोई विशेष स्वास्थ्य समस्या नहीं है तो भी बीमारियों से बचाव तथा अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने हेतु नियमित चिकित्सा करना उचित रहता है।

अगर टर्की समूह में कोई बड़ी बीमारी आ जाती है तो बिना देर किये रोग के लक्ष्णों का पता लगाकर उसका निदान करना चाहिए क्योंकि टर्की अत्यधिक संवेदनशील पक्षी है और रोग की चिकित्सा में देर करने से अन्य स्वस्थ टर्की चूजों को प्रभावित होने की संभावना हो जाती हे। नियमित चिकित्सा निम्न कार्यक्रमानुसार आवश्यकता के अनुरूप करते रहना चाहिए।

| | |
|---|---|
| 1 – 5 दिन तक | एन्टाबायोटिक्स तथा इलैक्ट्रोलाइट्स |
| 6 – 12 दिन तक | मल्टी विटामिन्स तथा प्रोबायोटिक्स |
| 13 – 19 दिन तक | विटामिन बी कम्पलेक्स |
| 20 – 26 दिन तक | सेलेनियम के साथ विटामिन ई |
| 27 – 33 दिन तक | हीपेटोटॉनिक्स / लिवर टॉनिक |
| 34 – 40 दिन तक | कैल्शियम, फास्फोरस तथा विटामिन डी– 3 |

उपरोक्त दवाईयों की मात्रा निर्माता की संस्तुति के आधार पर प्रदान करना चाहिए।

**टीकाकरण**

प्रमुख वायरल रोगों (विषाणु जनित) से बचाव हेतु आमतौर पर टर्की में टीकाकरण किया जाता है। यह पाया गया है कि वर्तमान में भारतीय टर्की के समूहों को रानीखेत बीमारी तथा टर्की पॉक्स के जीवाणु संक्रमण से बचाना आवश्यक है क्योंकि दूसरी अन्य प्रमुख बीमारियाँ अभी तक भारतीय टर्की समूहों में नहीं पायी गयी हैं।

**तालिका 2 : टीकाकरण कार्यक्रम**

| आयु | टीका | मात्रा तथा विधि |
|---|---|---|
| एक अथवा पांचवे दिन | रानीखेत (आरडीएफ स्ट्रैन) | आंख और नाक में 1–1 बूंद |
| दूसरे सप्ताह | टर्की पॉक्स / फाउल पॉक्स | विंग वैब विधि से एक बूंद |
| चैथे सप्ताह | रानीखेत (आरडीएफ स्ट्रैन) | आंख और नाक में 1–1 बूंद |
| छठे सप्ताह | टर्की पॉक्स / फाउल पॉक्स | विंग वैब विधि से एक बूंद |
| आठवें सप्ताह | रानीखेत (आर 2 बी स्ट्रेन) | 0.5 मिली० मांसपेशी में |

प्रशीतन किये गये टीको को निर्माता द्वारा आपूर्ति किये गये तनुकारकों से फिर तैयार करना उचित रहता है। टीका निर्माता की संस्तुति के आधार पर ही मात्रा तथा अन्य दिशा निर्देशों का पालन करना चाहिए। टर्की पॉक्स संक्रमण से कुछ हद तक बचाव हेतु फाउल पॉक्स विषाणु टीका प्रयोग करना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि टर्की पालक उपचार एवं टीकाकरण से पूर्व किसी पशु–चिकित्सक से परामर्श अवश्य कर लें।

○○○○

# आधुनिक बटेर पालन

**मनीष कुमार**
तकनीकी पदाधिकारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

जापानी बटेर पालन मुर्गी पालन क्षेत्र में व्यवसायिक रूप में लाभदायक अण्डे और मांस उत्पादन की उत्तम क्षमता के कारण एक विकल्प के रूप में उभरा है। जापानी बटेर कोटरनिक्स कोटरनिक्स जापोनिका जाति से सम्बन्धित है, जिसे सर्वप्रथम 1595 में पालतू पाला गया तथा हमारे देश में पहली बार वर्ष 1974 में कुक्कुट अनुसंधान विभाग, इज्जतनगर (वर्तमान में केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान), बरेली द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र विकास परियोजना के संयुक्त तत्वावधान में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, यू०एस०ए० जर्मनी एवं कोरिया से लाया गया। केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान द्वारा किये गये अनुसंधान के फलस्वरूप हमारे देश के लिए कैरी उत्तम, कैरी उज्जवल, कैरी ब्राउन, कैरी श्वेता और कैरी पर्ल बटेर की प्रजातियाँ विकसित की गई हैं। पालतू जाति के जापानी बटेर को हमारे देश में लाया जाना किसानों के लिए स्वरोजगार के तौर पर काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। यह आहार में मांस एवं अण्डे के रूप में प्रयोग किये जाने के अतिरिक्त अपने अन्य विशेष गुणों के कारण भी व्यावसायिक तौर पर लाभदायक है :–

1. बटेर के लिए मुर्गी पालन की अपेक्षा कम स्थान की आवश्यकता होती है। छोटे आकार के कारण (व्यस्क शरीर भार 200–250 ग्राम) इसका संचालन आसान होता है, साथ ही दाने के खपत भी कम होती है। एक मुर्गी पालने के लिए निर्धारित स्थान में 5–6 बटेर रखे जा सकते हैं।
2. बटेर की शारीरिक बढ़वार तीव्र होती है तथा ये 5 सप्ताह में खाने योग्य हो जाते हैं तथा मादा बटेर 41–45 दिन के आयु से ही अण्डा देना आरम्भ कर देती है और 60वें दिन तक पूर्ण उत्पादन की अवस्था में आजती है। एक वर्ष में बटेर औसतन 280–300 अण्डे देती है।
3. बटेर के एक वर्ष में उसकी 5–6 पीढ़ियाँ प्राप्त की जा सकती हैं।

बटेर के अण्डे और मांस में संतुलित मात्रा में अमीनों अम्ल, विटामिन, वसा और खनिल लवण की अच्छी मात्रा होती है। बटेर के अण्डे का वजन 9–14 ग्राम के लगभग होता है। अण्डे का रंग चित्तीदार (बहुरंगीय एवं सफेद) होता है लेकिन सफेद रंग के भी अण्डे पाये जाते हैं। बटेर के अण्डे गुणवत्ता में मुर्गी के अण्डे से कम नहीं होते हैं।

**जापानी बटेर के अण्डे की गुणवत्ता/संगठन :**

| पानी | प्रोटीन | वसा | कार्बोहाइड्रेट | ऊर्जामान |
|---|---|---|---|---|
| 24 प्रतिशत | 13 प्रतिशत | 11 प्रतिशत | 1 प्रतिशत | 649 मि०जू०/ 100 ग्राम तरल |

बटेर से प्राप्त मांस में 20.54 प्रतिशत प्रोटीन, 3.85 प्रतिशत वसा लवण, 0.50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रट तथा 1.12 प्रतिशत खनिज लवण पाये जाते हैं। इसके साथ ही साथ बटेर के अण्डों में कोलेस्टेरोल की मात्रा सबसे कम 18.08 मि०ग्राम०/ग्राम योक में पायी जाती है जबकि कोलेस्टेरोल की मात्रा असील में (22.9), कड़कनाथ (22.01), आईआर–3 ब्रायलर (20.87), आईएलआई–80 (19.32), और गिनी फाउल में 18.77 मि०ग्राम० प्रति ग्राम मांस में पाया गया है।

4. मुर्गियों की अपेक्षा बटेरों में रोग कम होते हैं। इसी कारण इनकों किसी प्रकार की टीका नहीं लगाया जाता है क्योंकि अभी तक इनमें कोई विशेष बीमारी सामने नही आई है।

अपने कम वजन, कम जगह की आवश्यकता, शीघ्र एवं तीव्र बढ़वार, शीघ्र वयस्कता की प्राप्ति, अधिक अण्डे एवं मांस उत्पादन की क्षमता के कारण बटेर पालन जापान, सिंगापुर, हॉन्गकॉन्ग, फ्रांस, इंग्लैण्ड, इटली आदि देशें में व्यावसायिक तौर पर अधिक प्रचलित है। विश्व के विकासशील तथा अल्प विकसित देशों के लिए बटेर पशु प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन सकता है, अतः आवश्यकता इसके वैज्ञानिक ढंग से पालन की है।

**बटेर प्रजनन**

बटेर पालन अधिक लाभप्रद बनाने के लिए इनकी उचित प्रजनन व्यवस्था अपनाना आवश्यक है। उचित समय पर प्रजनन न होने से उत्पादन क्षमता में कमी आती है तथा बटेर की उत्पादकता उम्र भी कम हो जाती है। बटेर प्रजनन व्यवस्था के अन्तर्गत मुख्य रूप से बटेर का चयन एवं उपयुक्त प्रजनन विधि का अपनाना है।

बटेरों में चयन सामान्यतया सामूहिक वरण या फिर वैयक्तिक वरण विधि द्वारा किया जाता है। इसमें बटेर का चयन उसके उत्पादन (लक्षण–प्रारूप) के आधार पर किया जाता है। यह सर्वोत्तम विधि है एवं अनेक परिस्थितियों में सर्वाधिक तीव्र परिणाम देने वाली होती है। इसके लिए बटेर की व्यक्तिगत पहचान आवश्यक है। बटेर की व्यक्तिगत पहचान के लिए उनके पंखों में विशेष रूप से तैयार धातु की हल्की और पतली पंख पट्टी (विंग बैंड) लगाई जा सकती है। यह नवस्फुटित चूजे के किसी एक पंख की क्षिल्ली पर लगाई जाती है जिसपर पहले से ही नम्बर लिखे होते हैं।

**नर–मादा अनुपात**

बटेर से निशेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए नर और मादा का अनुपात 1:1 अथवा 1:2 होना चाहिए। यदि बटेरों को समूह में रखना हो तो केवल एक नर बटेर 3 से 4 मादा बटेर के लिए पर्याप्त होता है।

निषेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए 10 से 24 सप्ताह की आयु की बटेर उत्तम है। समूह में समागम कराये जाने की स्थिति में नर को हटाने के बाद भी मादा की निषेचित अण्डा देने की क्षमता 7–10 दिन रहती है लेकिन उत्तम निषेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए नर को हटाने के बाद केवल 3 दिन तक ही अण्डा एकत्र करना चाहिए।

**चूजों एवं वयस्क बटेरों की देखभाल**

बटेर के चूजों को पालने के लिए अच्छा ब्रूडर गृह तथा तापक्रम नियमित रखने की आवश्यकता होती है। शुरूआत में बटेर के चुजों को प्रथम दो सप्ताह बहुत ही नाजुक दौर से गुजरना पड़ता है क्योंकि एक दिन के चूजे का शारीरिक भार 6 से 7 ग्राम का होता है। यह चूजे स्ट्रेस के प्रति बहुत ग्राही होते हैं। शुरू के दो सप्ताह बटेरों की उचित तापमान व खान–पान अच्छा न होने पर मृत्युदर बढ़ सकती है। साथ ही साथ बढ़वार भी अच्छी नहीं होती है। बटेर में 0–3 सप्ताह ब्रूडिंग अवस्था, 4–5 सप्ताह बढ़वार अवस्था और 5 सप्ताह के बाद व्यस्क अवस्था होती है।

**चूजों के आने से पहले निम्न बातों का ध्यान रखेंः**

1. चूजों के आने क 10 दिन पहले ब्रूडर गृह, दाना, पानी के बर्तन व विछावन या बैटरी ब्रूडर गृह को जीवाणु रहित कर लेना चाहिए।
2. चूजों के आने के 24 घंटे पहले दाना व पानी के बर्त्तनों की व्यवस्था ब्रूडर गृह में कर लेनी चाहिए।

3. सस्ता तथा स्थानीय उपलब्ध विछावन, जो फफूंदी एवं विष रहित, धूलरहित तथा छोटे–छोटे टुकड़ों में हो, उपयोग में लायें।
4. बिछावन को 6–8 सेमी० मोटी पर्त में बिछाना चाहिए।
5. बिछावन या बैटरी ब्रूडर पिंजड़ों में कारूगेटेड पेपर बिछाना चाहिए। इससे चूजों के पैर नही फैलते हैं साथ ही साथ घूमना–फिरना सुगमतापूर्वक रहता है। कारूगेटेड पेपर को छठे दिन हटा देना चाहिये।
6. दाना व पानी के बर्त्तनों को क्रमबद्ध तरीके से रखें।
7. चिक गार्ड को होवर से 50 सेमी० दूर रखें।
8. चिक गार्ड को 6–7 दिनों में हटा देना चाहिए।
9. बटेर पालक को कोशिश करनी चाहिए कि चूजों को दिन के सुबह पाली में प्राप्त करें।
10. चूजों को ठण्डे समय में देखना चाहिए कि होवर में अच्छी तरह से फेले हुए हैं या नहीं।
11. चूजों को आने के तुरन्त बाद दवाई वाला पानी पिलाना चाहिए।
12. थर्मामीटर को होवर के नीचे कभी भी न लटकायें।
13. थर्मामीटर ब्रूडर गृह में सामान्य हवा में जमीन से 1 या 1.5 फीट की उँचाई पर ही रखे।
14. चूजों के आने के 24 घण्डे पहले ब्रूडर गृह का तापमान नियमित कर लें।

**ब्रूडिंग तापमान**

चूजा गृह में उचित तापमान होना अति आवश्यक है क्योंकि बटेर के चूजों को अत्यधिक गर्मी व सर्दी दोनों क लिए ही बहुत ग्राही है। 35–37 डिग्री सेन्टीग्रेड का तापक्रम अति उत्तम होता है। तापमान ब्रूडर व होवर से 4–5 सेमी० उपर 100 डिग्री फारेनहाइट होना चाहिए। बटेर के चूजों को तापक्रम व आर्द्रता की आवश्यकता निम्नलिखित होती है।

| उम्र (दिन) | तापमान | आर्द्रता |
|---|---|---|
| 1 से 3 दिन तक | 35 | 65 |
| 4 से 5 दिन तक | 34 | 65 |
| 6 | 33 | 65 |
| 7 | 33 | 60 |
| 14 | 29 | 60 |
| 21 | 24 | 60 |
| 28 | 21–23 | 55–60 |

**प्रकाश व्यवस्था**

ब्रूडर गृह में खिड़कियाँ व रोशनदान होना अति आवश्यक हैं जिससे एक समान रोशनी मिल सके। चूजों को शुरू के प्रथम दो सप्ताह 24 घण्टे प्रकाश व्यवस्था करनी चाहिए। यदि गर्मी पहुंचाने का स्रोत बिजली के आलावा अन्य हो तो 40 वाट / 10 मी० जमीन के एरिया के हिसाब से या 60 वाट एक टायर के बैटरी पिंजड़े में र्प्याप्त होता है। यदि चूजों को जल्दी वयस्क करना हो तो 24 घण्टे प्रकाश की व्यवस्था 5 सप्ताह तक करनी चाहिए।

**फर्श स्थान**

तेज बढ़वार वाले चूजों के लिए फर्श स्थान की समस्या आती है। बैटरी पिजड़ों में प्रत्येक चूजे के लिए 80 सेमी० होवर और 80 सेमी रन स्पेस 3 सप्ताह तक के बटेरों के लिए पर्याप्त होता है।

**उचित खानपान**

बटेर के चूजों को पूर्णतया संतुलित आहार देना चाहिए। साथ ही साथ अच्छी बढ़वार के लिए 6–8 प्रतिशत शीरा का घोल चूजों को 3–4 दिनों तक देना चाहिए।

**चूजों एवं व्यस्क बटेरों का संतुलित आहार बनाने के लिए निम्न मिश्रणों को मिलायें :**

| संघटक | | बटेर | स्टार्टर 0–3 सप्ताह | लेयर या ब्रीडर बटेर | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | I | II | III | IV |
| 1. | मक्का | 42.00 | 56.00 | 45.00 | 45.00 |
| 2. | चावल कनी | 15.00 | 20.00 | 10.00 | 25.00 |
| 3. | चावल घूटा | – | 12.00 | 6.00 | 10.00 |
| 4. | मूंगफली की खल | 15.00 | | 12.00 | – |
| 5. | गेहूँ का चोकर | | 12.00 | | 15.00 |
| 6. | सोयाबीन की खल | 15.00 | – | 10.00 | – |
| 7. | मछली का चूर्ण या मांस का चूर्ण | 10.00 | – | 10.00 | – |
| 8. | डाईकैल्शियम फास्फेट | 1.50 | – | 1.50 | – |
| 9. | चूना पत्थर/सीपी का चूरा | 1.00 | – | 5.00 | 5.00 |
| 10. | सादा नमक | 0.30 | – | 0.30 | – |
| 11. | विटामिन–खनिज लवण | 0.20 | – | 0.20 | – |
| | **कुल** | **100.00** | **100.00** | **100.00** | **100.00** |

**बिछावन पद्धति से चूजों को पालना**

बिछावन पद्धति द्वारा गर्मी में आसान तरीकों से चूजों की देखभाल अच्छी तरह की जा सकती है। प्रति चूजा पीने के पानी का स्थान 0.7 सेमी० रहने का स्थान 80–120 सेमी० तथा खाने का स्थान 1.5 सेमी० होना चाहिए। बटेर के चूजों को बिछावन पद्धति से रखने में बहुत सावधानी की जरूरत पड़ती है क्योंकि पाइलिंग या हार्डलिंग के अवसर अधिक होते हैं। इसलिए बटेर पालक सुनिश्चित करें कि प्रकाश व्यवस्था 24 घण्टे हो तथा आस–पास ज्यादा शोर–गुल न होता हो।

### बैटरी ब्रूडिंग

बैटरी ब्रूडर होवर का परिवर्तित रूप होता है जिसमें 5–7 मंजिलों के पिंजड़ों में चूजों को रखा जाता है। यह ½ x ½ सेमी० वायर मेश के बने होते हैं। एक बैटरी ब्रूडर 5–6 मंजिलां में बना होता है यह बैटरी ब्रूडर दो भागों में बंटे होते हैं तथा ल० x चौ० x उ० 180 x 80 x 28 सेमी० होती है। इनमें गर्मी पहुंचाने के लिए विद्युत के 5 प्वांइट होते हैं, जिनमें आवश्यकतानुसार बल्ब लगा लिए जाते हैं। यह काफी महंगी पद्धति है साथ ही साथ विद्युत की बहुत ज्यादा खपत होती है। उदाहरण के लिए एक बैटरी ब्रूडर 5 मंजिल में बना होता है। 5 विद्युत प्वांइट प्रति एक खाना को मिलाकर (5x5=25) प्वांइट हो गये तथा 100 वाट के 25 बल्ब लगेंगे जबकि गहन विछाली पद्धति के लिए एक 60 वाट का बल्ब 10–20 वर्ग फुट के लिए पर्याप्त होता है।

**बटेर के चूजों का ब्रूडर के अन्दर का व्यवहार कैसा हो :**

अत्यधिक गर्म

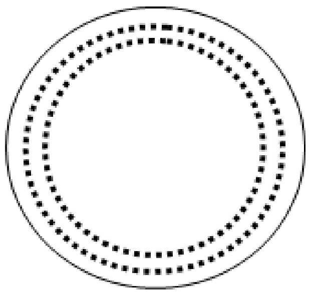

अत्यधिक ठण्डा

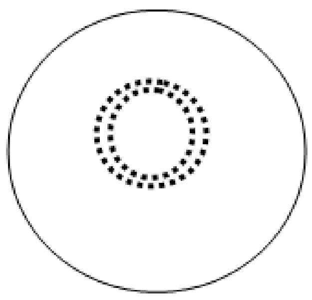

### आदर्श तापमान बटेर के चूजों के लिए

व्यस्क बटेरों को ही बाजार में विपणन के लिए भेजना चाहिए। बटेर चार सप्ताह के बाद बाजार में बेचने योग्य हो जाते हैं। बटेर मांस व अण्डों के उत्पादन के लिए एक बहुत अच्छा पक्षी है। इसका मांस लोगों को बहुत पसन्द है। संभवतः जितने भी पक्षी आर्थिक दृष्टि से पाले जाते हैंउनमें बटेर सबसे छोटा किन्तु तेज बढ़वार वाला पक्षी है। बटेरों को सुगमता पूर्वक पिंजड़ा पद्धति में या बिछाली पद्धति से रख सकते हैं जिससे खाने योग्य अण्डे व निषेचित अण्डे प्राप्त किये जा सकते हैं। अपने देश में बटेर मुख्यतया मांस उत्पादन के लिए रखे जाते हैं लेकिन जापान में 80 प्रतिशत से ज्यादा बटेर अण्डे उत्पादन के लिए रखे जाते हैं। हमारे देश में केरल एक ऐसा राज्य है जहाँ पर 60 प्रतिशत से ज्यादा बटेर अण्डे उत्पादन के लिए रखे जाते हैं।

### समूहिक पिंजरा पद्धति

वयस्क बटेरों को पालने के लिए पिंजड़ा बैट्री केज में रखते हैं यह उद्देश्य पर निर्भर करता है कि किस प्रकार के केज पर रखा जाये जैसे कि एकल पिंजड़े में एक नर व एक मादा रखते हैं लेकिन इस पद्धति में खर्चा ज्यादा है। इसलिए सामूहिक पिंजड़ा में रखना ज्यादा उचित होता है। व्यावसायिक दृष्टि से एक सामूहिक पिंजड़ा में 20–40 बटेर रख सकते हैं। एक सामूहिक पिंजड़ा 5–6 मंजिलों में बना सकते हैं तथा ल० x चौ० x उ० 120 x 60 x 25 सेमी० रखते हैं जिससे दैनिक कार्यों को आसान से किया जा सके। प्रति पक्षी 200–250 वर्ग सेमी० जगह पर्याप्त होती है। फिर जिस तरह के पक्षी हों उसी तरह की व्यवस्था करनी चाहिए। 12.5 से 3.0 लिनियर सेमी० प्रति पक्षी दाना और पानी स्थान देना चाहिए।

### बिछाली पद्धति

इस पद्धति में 5–6 बटेर रखी जा सकती हैं जितना कि हम एक अण्डा उत्पादन हेतु मुर्गी को स्थान देते हैं (200–250 वर्ग सेमी० प्रति पक्षी)। साधारणतया 102 सेमी०, 2.0 सेमी लिनियर पीने का पानी और 2.5 सेमी०, 3.0 सेमी० लिनियर खाने के स्थान प्रति

पक्षी उपलब्ध करवायें। 8–10 सेमी० मोटाई की बिछाली अच्छी होती है। बटेरों हेतु बिछाली का आरामदायक, सस्ती, धूलरहित, विषरहित होना आवश्यक है तथा आसपास जो सामग्री उपलब्ध हो, उसी को उपयोग में लाना चाहिए। थेड़े से स्थान में अधिक से अधिक बटेर इस पद्धति में पाली जाती है। देशी तरीके से 12 X12 वर्ग फीट के कमरे में 5–6 मंजिलों के बिछाली के आवास दीवारों के तीन तरफ आसानी से बनाये जा सकते हैं।

**लिंग–भेद कैसे करें**

बटेरों में लिंग की पहचान भी मुर्गी के चूजों की तरह एक दिन की आयु पर की जा सकती है परन्तु 3 सप्ताह की आयु पर पंखों के रंग से ही नर जिसमें गर्दन के नीचे के पंख लाल, भूरे, घूसर रंग तथा मादा की गर्दन के नीचे के पंख हल्के सुरमई रंग के होते हैं जिन पर काले रंग के धब्बे होते है। देखकर पृथक किये जा सकते हैं। युवा नर बटेरों की गुदा के उपरी किनारे पर गोलाकार ग्रन्थि (क्लोयकल गलैंड) होती है जोकि लैंगिक चुस्त नरों में ही पायी जाती है तथा युवा नर एक प्राकर का साबुन के झाग के सामान का फोम निकालते हैं। मादा बटेरों का शारीरिक भार 15–20 प्रतिशत नर के शारीरिक भार की तुलना में ज्यादा होता है।

**लेयिंग नेस्ट**

लेयिंग नेस्ट एक पक्षी व सामूहिक पक्षियों के लिए पिंजड़े बाक्स टाइप के बनाये जा सकते हैं। यदि एक लेयिंग नेस्ट बनाना है तो उसका साईज 15 X 20 X 20 सेमी० जबकि सामूहिक नेस्ट बॉक्स में प्रत्येक बॉक्स की लम्बाई 5 से 6 फीट के साथ 20 सेमी० गहरा, 20 सेमी० उचाई व 15 सेमी० चौड़ाई प्रति पक्षी के प्रवेश हेतु चाहिए। लेयिंग नेस्ट के पिछले हिस्से में जाली का भी प्रयोग किया जा सकता है। लेयिंग नेस्ट घर में बटेर प्रवेश करने के पहले उपलब्ध होन चाहिए। एक लेयिंग नेस्ट 5–6 बटेरों को पर्याप्त होता है जबकि एक सामूहिक लेयिंग नेस्ट 30–35 बटेरों के लिए पर्याप्त होता है। लेयिंग नेस्ट लकड़ी, मिट्टी व मोल्डिंग इस्पात से भी बनाये ज सकते है।

**प्रकाश व्यवस्था**

वयस्क बटेरों या अण्डा देने वाली बटेरों के लिए 16 घण्टे का प्रकाश तथा 8 घण्टे का अंधेरा ही ठीक रहता है। बटेरों को मोटा करने के लिए बाजार लेजने से 7–10 दिन पूर्व से 8 घण्टे रोशनी और 16 घण्टे अंधेरे में रखना चाहिए।

**अण्डा उत्पादन**

मुर्गियों से 75 प्रतिशत अण्डा उत्पादन सुबह के समय होता है जबकि बटेर अपने दैनिक अण्डा उत्पादन का 70 प्रतिशत अपराह्न 3–6 के मध्य देती है तथा शेष 20 प्रतिशत अंधेरे में देती है। अण्डों को टूटने से बचाने के लिए दिन में कम से कम 3 बार इकट्ठा करना चाहिए।

**पकड़ने में सावधानी बरतें**

साधारणतया अण्डा देने वाली बटेरों को छेड़े नहीं, जब तक कि इसकी आवश्यकता न हो। रोज–रोज पकड़ने तथा डिस्टर्ब करने से अण्डा देने की शुरुआत देर से होती है साथ ही साथ अण्डा उत्पादन गिर जाता है और मृत्युदर बढ़ जाती है।

**भोजन व पानी की व्यवस्था**

पूर्णतया संतुलित आहार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध करवायें। प्रचुर मात्रा में साफ सुथरा पीने योग्य जल उपलब्ध करवायें क्योंकि जल बहुत आवश्यक अवयव है। सभी प्रकार के तत्वों को उपलब्ध करवाने में संतुलित आहार बनाने की विधि सारणी में देखें।

### उत्तम उर्वरक क्षमता के लिए

बच्चे निकालने वाले अण्डों के उत्पादन के लिए नर तथा मादा 10–28 सप्ताह की आयु के बीच होने चाहिए। एक नर बटेर तीन या इससे कम मादाओं से मिलाना चाहिए। अण्डे नर तथा मादाओं के मिलाने के कम से कम चार दिन पश्चात् से बचाने या इकट्ठे करने चाहिए और नर अलग कर लेने के पश्चात् तीन दिन तक बचाये जा सकते हैं। पक्षियों को प्रजनन राशन देना चाहिए जोकि पूर्णतया संतुलित हो। बटेरों की चोंच तथा पैर के नाखून थोड़ा काट देना चाहिए ताकि एक दूसरे को जख्मी न कर पायें।

### टीकाकरण

बटेरों में अभी तक किसी भी प्रकार का टीका नहीं लगाना पड़ रहा है क्योंकि बटेर काफी रोग प्रतिरोधकता रखती है जबकि मुर्गियों में ऐसा कम पाया जाता है। कुछ हद तक एन्टीबायेटिक्स तथा एन्टीस्ट्रेस घेल देते हैं। अधिक बढ़वार के लिए 5 प्रतिशत केसीन (दूध को फाड़कर उसका सफेद भाग) सूखा करके बटेर के दाने में मिलाने से मृत्युदर कम होती है, साथ ही साथ बढ़वार भी बहुत अच्छी होती है।

### अन्य प्रबन्ध

बटेरों के लिए ज्यादा गर्मी और ज्यादा सर्दी दोनों ही मौसम हानिकारक होते है। ऐसी दशा में अण्डा उत्पादन कम हो जाता है या बटेर पतली झील्ली युक्त अण्डा देना शुरू कर देते हैं जिससे हानि अधिक होती है। ऐसी दशा में उचित तापमान देना चाहिए जोकि $55^{\circ}$–$75^{\circ}$ फा० (13–$24^{\circ}$ से०) के आस–पास होना चाहिए। साधारणतया बटेरों में किसी भी उम्र पर टीके नहीं लगाये जाते। अधिक अण्डा उत्पादन हेतू पशु चिकित्सक या मुर्गी विशेषज्ञ की संस्तुति के आधार पर विटामिन्स मिक्सचर जैसे विमराल, फैमीटोन, कैल्डीसोल इत्यादि देना चाहिए। यदि इन सभी उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर बटेर पालन किया जाये तो प्रत्येक पक्षी से प्रतिमाह 4–5 रु० या इससे भी अधिक कमाये जा सकते हैं। बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि आप किस स्थान पर विपणन करते हैं।

### अण्डा उत्पादन के लिए बटेर पालन

बटेर के चूजे खरीदते समय निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए :

1. कम से कम तीन दिवसीय चूजों को ही खरीदें इससे मृत्युदर कम होगी।
2. बटेर के चूजे हमेशा मिश्रित लिंग (नर तथा मादा) के ही बेचे जाते है।
3. यदि ब्रूडिंग सुविधा उपलघ नहीं है तो वयस्क मादा बटेर (कम से कम 4 सप्ताह की आयु के ) खरीदें।
4. स्वजातीय चूजों को बटेर के चूजों के साथ अधिक देर तक बिना दाना–पानी क नहीं लें जाना चाहिए।

### लगभग 4 सप्ताह की आयु पर बटेर को देखकर दोनों लिंगों की पहचान निम्न प्रकार से की जा सकती है :

**नर :** नर बटेर की पहचान उसके गले के उपरी भाग तथा सिने के निचलेभाग पर चॉकलेटी भूरे रंग के पृच्छ को देखकर आसानी से की जा सकती है।

**मादा :** मादा बटेर भी रंग में नर क समान होती है, किन्तु उनके गले, छाती के उपरी भाग पर पृच्छ लम्बे, बिन्दुदार तथा बहुत ही हल्के रंग के होते हैं। इनकी छाती पर पृच्छ काले धारीदार होते हैं।

### सेना (ब्रूडिंग)

बटेर के चूजों को विभिन्न प्रकार के व्यवसायिक बैटरी ब्रूडरों अथवा बॉक्सों में सफलतापूर्वक सेया (ब्रूड किया) जा सकता है।

**परिमाप**

मादा बटेरों की संख्या के आधार पर इसे तैयार किया जा सकता है। 20 मी० लम्बे, 2.0 मी० चौड़े तथा 0.5 मी० ऊँचाई के एक ब्रूडर बाक्स में 1 दिन से 3 सप्ताह के अधिकतम 200 मिश्रित लिंग के चूजों को सेया (ब्रूड किया) जा सकता है।

**समाग्री**

ब्रूडर के पाये के लिए 8.0 सेमी० x 5.0 सेमी० तथा अन्य सहायक फ्रेम के लिए 5.0 सेमी० x 3.0 सेमी० की लकड़ी का प्रयोग किया जा सकता है। किनारों की दीवार क लिए सादे एसवेस्ट्स की चादरों अथवा लकड़ी के तख्तें को प्रयोग किया जा सकता है। फर्श तथा उपरी ढक्कन के लिए 5.0 सेमी० पीवीसी की जाली (बीआरसी अथवा चूजा–जाली क प्रयोग से बचना चाहिए क्योंकि इसमें जंग लगने से चूजे घायल हो सकते हैं) का प्रयोग किया जा सकता है।

**उपकरण**

0–2 सप्ताह के चूजों के लिए 6 x 1.5 ली० आकार के पानी पीने का उथले बर्त्तन उपलब्ध कराना चाहिए। पानी पीने के बर्त्तन में चूजों के डूबकर मरने से बचाने के लिए बर्त्तन की तली में रंगीन काँच के संगमरमर भर देना चाहिए। जिसे देखकर चूजे पानी पीने के लिए आकर्षित हो। 2 सप्ताह बाद 4 x 3 ली० आकार के बिना संगमरमर भरे हुए ड्रिंकर उपलब्ध कराना चाहिए।

दाना देने के लिए कुछ दिनों तक पेपर की प्लेट अथवा गत्ते का प्रयोग करना चाहिए। बाद में दाने को खराब होने से बचाने के लिए उपरी सिरे पर बेलनाकार मुर्गी के लम्बे कलईदार (5 सेमी० x 5 सेमी०) दाने के बर्त्तन (फीडर) का प्रयोग करें।

- फर्श को खुरदरे सतह वाले कागज से ढकें तथा सतह पर लकड़ी का बुरादा फैलायें।
- चूजों के पहुँचने से पहले प्रचालन उपकरण तैयार रखें।
- प्रतिदिन साफ पानी तथा दाना दें।

चूजों को अच्छे ढंग से उठाएं तथा परेशानी से बचाएं चूजे बहुत जल्दी डर जाते है। चूजों को कम से कम 35° सें० (95° फा०) तापमान पर पालना प्रारम्भ करें और प्रत्येक सप्ताह लगभग 3° सें० (5° फा०) तापमान कम करें और उसके बाद 5 सप्ताह तक 60 वॉट के दो बल्ब जलायें और उसके बाद अपेक्षित तापमान के लिए 40वॉट के दो बल्ब पर्याप्त होंगे। तापमान 35° से० से अधिक नहीं होना चाहिए। उपर के ढक्कन अथवा दरवाजों को टाट की बोरियों से ढँकें, इससे तापमान को नियंत्रित तथा नियमन करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

**प्रकाश**

- पहले दो सप्ताह तक चूजों को 24 घण्टे प्रकाश में सेएं (ब्रूड करें) और उसके बाद प्रतिदिन 12 घण्टे तक प्रकाश में सेएं। यदि पहले ही परिपक्वता चाहते हैं तो चूजों को 6 सप्ताह तक 24 घण्टे प्रकाश में सोएं।
- कॉलोनी अथवा बैटरी पिंजरों में से 4 सप्ताह पर मादाओं को अलग करें तथा ब्रूडर बॉक्स में नर बटेरों को रहने दें और 5 सप्ताह बाद मांस के लिए उन्हें बेच दें।

**आहार**

बटेर स्टार्टर मैश (25 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन तथा 2900 उपा० उ० कि० कैलोरी / कि०ग्रा०) 0–3 सप्ताह
बटेर लेयर मैश (20 प्रतिशत कूड प्रोटीन तथा 2600 उपा० उ० कि० कैलोरी / कि०ग्रा०) 4 सप्ताह

**वयस्क बटेर के लिए आवास**

**बटेर शेड**

- बटेर लेयरों को बैटरी पिंजरों अथवा तार से बने फर्श वाले कालोनी पिंजरों मे आसानी से पाला जा सकता है।
- मुर्गियों के लिए डिजाइन किये गये पिंजरा घर बटेर लेयरों के लिए उपयुक्त होते हैं लेकिन कुक्कुट पालक को ध्यान देना होगा कि वायरमेश का साइज ½ x ½ सेमी० एस० डब्लू० जी० में ही होना चाहिए।
- बटेरों को सूर्य की सीधी रोशनी तथा सामने की सीधी हवा से अधिक से अधिक बचाइए।
- मुर्गियों की अपेक्षा बटेर अधिक गर्म वातावरण सहन कर सकते हैं वशर्ते कि उपयुक्त वायु संचार की सुविधा उपलबध हो।

**बैटरी कालेनी पिंजरा**

1. प्रत्येक पिंजरे में 8 से 10 लेयर बटेरों को पालने के लिए कई आकार के पिंजरों का प्रयोग किया जा सकता है।
2. 4 सप्ताह की आयु हो जाने पर लेयर बटेरों को ब्रूडर बाक्स से स्थानान्तरित कर देना चाहिए।
3. 20–25 ग्राम / दिन / लेयर से कम प्रतिदिन बटेर लेयर मैश न खिलायें।
4. मुर्गियों के लिए प्रयोग किया जाने वाला स्वचालित कप अथवा लम्बे पीवीसी पाइप को द्रोणिका के माध्यम से पानी उपलब्ध कराये।

**अण्डा उत्पादन**

1. आशाजनक अण्डा उत्पादन के लिए लेयर बटेरों को प्रतिदिन 17 घण्टे प्रकाश की आवश्यकता होती है। सूर्यास्त के बाद कम से कम 4 घण्टे तक विद्युत प्रकाश अथवा लैम्प जलाना चाहिए।
2. सामान्यतया बटेर 42 दिन की आयु के बाद अण्डा देना प्रारम्भ करती है।
3. बटेर अपराह्न 4.00 से 5.00 बजे के बीच सभी अण्डों को लगभग 75 प्रतिशत अण्डाा देती है और शेष अण्डे अंधेरे में देती है (मुर्गी अपने 75 प्रतिशत अण्डे प्रातःकाल देती है)।
4. बटेर अपने सर्वोच्च उत्पादन पर 93 प्रतिशत तक अण्डे दे सकती है तथा 16 माह की आयु तक 60 प्रतिशत अण्डा दती है। बटेर को अण्डा उत्पादन के लिए 18 माह से अधिक रखना लाभदायक नही होता है।

**300 पैरेन्ट बटेर (कर्टनिक्स जापानिका) एवं व्यावसायिक बटेर पालन का कार्यक्रम :**

**अनावर्तक व्यय**

गृह इत्यादि की व्यवस्था – रू0 35000.00

**आवर्तक व्यय**

| | | |
|---|---|---|
| (i) | 350 मादा बटेर + 75 नर बटेर 4 सप्ताह तक रु० 30 / बटेर की दर से | रु० 12750.00 |
| (ii) | आहार 7.00 कि०ग्राम प्रति पक्षी दर से 400 बटेर x 7 = 28 कुन्तल रु० 12 प्रति कि०ग्रा० की दर से | रु० 33600.00 |
| (iii) | औषधि व अन्य व्यय रु० 5 प्रति पक्षी की दर से | रु० 2000.00 |
| | **योग (अ)** | **रु० 48350.00** |

**व्यवसायिक चूजों के पालन–पोषण पर व्यय**

| | |
|---|---|
| • कुल अण्डा उत्पादन 250 अण्डा प्रति पक्षी की दर से 250 x 300 | 75000 अण्डे |
| • खाने के लिए बेचे गए अण्डे (40 प्रतिशत) | 30000 अण्डे |
| • हैचिंग क लिए अण्डे (60 प्रतिशत) | 45000 अण्डे |

**व्यवसायिक रूप से प्राप्त चूजे**

| | |
|---|---|
| • 50–60 प्रतिशत हैचिंग की दर से उपलब्ध | |
| • चूजे (50 प्रतिशत) 22500 चूजे | |
| • आहार व्यय 400 ग्राम प्रति चूजा की दर से | रु० 90000.00 |
| • कुल आहार 90 कुन्तल x 10.00 प्रति कि०ग्रा० | |
| • औषधि इत्यादि पर व्यय रू० 2 प्रति चूजा की दर से | रु० 45000.00 |
| • श्रमिक इत्यादि पर व्यय | रू0 1200 प्रति |
| • माह की दर से (पार्ट टाइम वर्कर होगा) | रु० 14400.00 |
| **योग (ब)** | **रु० 149400.00** |
| • वार्षिक कुल आवर्तक (अ+ब) व्यय (48350 + 149400) = | **रु० 197750.00** |

**वार्षिक प्राप्तियाँ :**

**उपलब्ध पक्ष विक्रय हेतु**

| | | |
|---|---|---|
| (i) | पैरेन्ट स्टॉक 350 विक्रय दर रु० 20 प्रति पक्षी की दर से | रु० 7000.00 |
| (ii) | अधिकतम व्यावसायिक मृत्यु दर 10 प्रतिशत घटाकर (वैसे अधिकतम मृत्यु दर 4–5 प्रतिशत होती है) उपलब्ध बटेर 20500 विक्रय दर रु० 16–25 प्रति पक्षी लेकिन गणना रु० 16 प्रति पक्षी की दर से | रु० 324000.00 |
| | **कुल योग** | **रु० 331000.00** |

**वार्षिक लाभ = (वार्षिक प्राप्तियाँ – वार्षिक आवर्तक लाभ)**

(331000–197750) = 133250

(उपरोक्त गणना सिर्फ एक अनुमान ही है लेकिन वास्तव में लाभ इससे कहीं अधिक होता है। बटेर पालक का स्वयं का अपना आवास होना चाहिए तभी उपरोक्त गणना का अर्थ यथार्थ में साबित होगा)

**रोग और रोग नियंत्रण**

लेयर बटेरों में प्रायः मुर्गियों में होने वाली सामान्य बीमारियाँ देखी गई हैं, जो निम्नलिखित हैं लेकिन निम्नलिखित बीमारियाँ कभी भी महामारी का रूप नहीं लेती हैं।

एवियन एनसेफलोमाइलिटिस, फाउल पॉक्स, न्यू कैसिल डिजीज, संक्रामक श्वसनी शोध (ब्रोकाइटिस), सालमोनेलोसिस, पाश्चुरेलोसिस, एस्चेरिलिया कोली एस्परसिलस एण्ड साउण्ड तथा फीता कृमि रोग।

अभी तक बटेरों में टीकाकरण का कोई कार्यक्रम नहीं देखा गया है। इसलिए यह आवश्यक है कि इन रोगों को नियंत्रित करने के लिए रोकथाम के उपाय अपनाने चाहिए।

**आहार (दाना) तथा आहार देना**

0–6 सप्ताह की आयु के बटेरों को पूरा आहार (दाना) दें। उसके बाद, लेयर मैश को 25 ग्रा०/बटेर/दिन से अधिक नहीं खिलाना चाहिए।

**बटेर स्टार्टर तथा लेयर मैश को निम्नलिखित संस्तुत आहार अवयवों को शामिल कर तैयार किया जा सकता है :**

| अव्यव | बटेर स्टार्टर मैश (प्रतिशत) | लेयर स्टार्टर मैश (प्रतिशत) |
|---|---|---|
| मक्का | 55.00 | 44.00 |
| टूटे चावल | | 10.00 |
| फिश मील | 10.25 | 7.00 |
| सोयाबीन मील | 33.00 | 26.00 |
| हड्डी का चूरा | 0.75 | 1.40 |
| गेहूँ का चोकर | 0.50 | 4.00 |
| घास | | 3.00 |
| चूने के पत्थर के टुकड़े | | 2.50 |
| ओइस्टर सेल के टुकड़े | | 2.00 |
| प्रीमिक्स 0.50 | 0.50 | |
| **योग** | **100.00** | **100.00** |
| कच्चा प्रोटीन | 24.5 | 20.5 |
| उपा० उ०/कि०कै०/कि०ग्रा० | 2927 | 2697 |

○○○○

# ग्रामीण परिवेश में अंडो का परिरक्षण, भंडारण एवं विपणन

डा० सुधांशु शेखर
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, जयनगर, कोडरमा (झारखण्ड)

अंडा आदि काल से ही मानव आहार का अति महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। पोषण की दृष्टी से दूध के बाद अंडा का स्थान है, अंडा प्रोटीन ,विटामिन और खनिज का एक बेहतरीन स्रोत है। अंडे खाने का प्रचलन दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है और शाकाहारी लोग भी अंडे को पोषक आहार के रूप में अपना रहे है। अंडा कम कीमत में सम्पूर्ण पोषक देने वाला खाद्य पदार्थ है। इतने कम कीमत में शायद ही किसी खाद्य पदार्थ से सम्पूर्ण पोषक मिल सकता है। ताजा अंडा जीवाणु रहित होता है और अपनी रचना के अनुरूप नुकसानदेह जीवाणुओ से सुरक्षा करने में सक्षम होता है। फिर भी कुछ ऐसे जीवाणु होता है जो अनुकूल परस्थिति मिलने पर अंडे के अन्दर प्रवेश कर जाते है, जिससे अंडा खराब होने लता है इसलिए कुछ उपाय ऐसे करने चाहिए जिससे कि अंडा कम से कम जीवाणु के सम्पर्क में आये एवं जीवाणु को अंडे में प्रवेश करने के लिए अनुकूल वातावरण न मिल पाये।

### अंडों का परिरक्षण

अंडों की गुणवत्ता बाहरी एवं अन्दरुनी दोनों कारकों द्वारा नियंत्रित होती है। बाहरी कारकों में अंडे का माप, आकार तथा उसके कवच(खोल) की स्थितियाँ है, जबकि अन्दरूनी कारकों में वायु कोशिका का माप, सफेदी तथा पीले भाग की स्थितियाँ सम्मिलित है। अंडे की गुणवत्ता का पता कैन्डलिंग प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा चटके हुए, अथवा अन्दर से असामान्य अंडों (जैसे रक्त के धब्बे अथवा माँस के टुकडे युक्त) का पता लगाया जा सकता है। अंडों का श्रेणी करण इनके माप, वजन, वायु कोशिका की गहराई, खोल, सफेदी तथा पीले भाग की दशा के आधार पर किया जा सकता है। अंडों की गुणवत्ता उच्चतम बनाए रखने के लिये हमें इनका गुणवत्ता नियंत्रण, मुर्गी बाडे से ही कर देना चाहिए। इसके कुछ महत्वपूर्ण चरण निम्न हैं :

1. **अंडों की प्राथमिक देख–रेख** : मुर्गी बाडे से अंडों को एकत्रित करने के लिए निम्न चरणो को अपनाना चाहिए :–

- अंडों को प्लास्टिक के पात्रों में एकत्र करना चाहिए। धातु के पात्रों का उपयोग सामान्यता नही किया जाता है जिससे जंग से बचा जा सके।
- अंडों की बहुत ऊँची ढेरी नही लगानी चाहिए, जिससे टूट–फूट से बचा जा सके।
- अंडों को एकत्र करने के पश्चात् जितनी जल्दी सम्भव हो सके भली–भाँति हल्के अपमार्जक का उपयोग कर, थोड़े गर्म जल से धो लेना चाहिए।
- धुलाई के पश्चात् अंडों को सुखा कर 75 प्रतिशत आपेक्षिक आर्दता वाले कक्ष में जिसका तापमान लगभग 15 डिग्री से० हो में खुले पात्रों में भण्डारित करना चाहिए।
- अंडों को प्याज, सेव, लहसुन अथवा किसी प्रकार की तेज गंध के पास नही रखना चाहिए। क्योकि अंडे भण्डारण काल में गंध को अवशोषित कर लेते हैं।

2. **अण्डों का श्रेणीकरण** : अंडों को सामान्यतः स्थापित मानकों के अनुसार श्रेणीकृत किया जाता हे। अमेरीका में इन्हें यू.एस. डी.ए. मानक के अनुसार श्रेणीकृत किया जाता है, जिन्हें उनका बाहरी एवं अन्दरूनी गुणों के आधार पर विकसित किया गया है। भारत में अंडों को अंडे के श्रेणीकरण एवं विपणन नियम 1968 के अनुसार श्रेणीकृत किया जाता है तथा उन पर **''एगमार्क''** की मुहर लगाई जाती है। हाल ही में भारतीय मानक ब्यरों (बी.आई.एस.) ने भी अंडों की बाहरी एवं भीतरी

गुणवत्ता दोनों को ध्यान में रखते हुए अण्डों के श्रेणीकरण के मानक बनाए हैं।

3. **अंडों की कैन्डलिंग** : कैन्डलिंग कवच युक्त अंडे की बाहरी और भीतरी गुणवत्ता के निर्धारण की व्यवसायिक विधि है। इस विधि में (1) सम्पूर्ण अंण्डे को लगभग कोहनी के स्तर पर उपयुक्त प्रकाश (बल्ब की रोशनी) के नीचे रखा जाता है तथा यह ध्यान रखा जाता है कि उसका चौडा सिरा जिसमें वायु कोशिका होती है ऊपर की ओर रहे। (2) अब अंडें को तेजी से घुमाया जाता है जिससे उसके अन्दर विद्यमान भाग (सफेदी, पीला भाग इत्यादि) घूमने लगे। ऐसा करने से अंडें के कवच की दशा, वायु कोशिका का माप, पीतक की स्थिति, रक्त के धब्बें इत्यादि के बारे में पता लगाया जा सकता है। ताजे अंडें की वायु कोशिका की माप 1/8 ईंच से अधिक गहराई की नही होती, समय के साथ वायु कोशिका की माप बढ जाती है और उसे निचली श्रेणी में रखा जाता है। ताजे अण्डे का पीतक अण्डे के बीच में स्थित होना चाहिए, सफेदी काफी दृढ होनी चाहिए, अंडा, माँस एवं रक्त के धब्बे से मुक्त होना चाहिए एवं इसका कवच साफ, अखण्डित एवं सामान्य सतह एवं आकार का होना चाहिए। उपरोक्त गुणों के आधार पर कैन्डलिंग, द्वारा अण्डों का श्रेणीकरण किया जाता है।

4. **अंडों का परिरक्षण एवं भण्डारण** : अंडों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए निम्नलिखित विधियों का उपयोग किया जाता है :—

1. **अंडों की धुलाई** :

- केवल गन्दे अंडों को धोना चाहिए।
- सेनीटाईजर (स्वच्छ ताकर्मक) का उपयोग निर्माता द्वारा दिये गये निर्देशो के अनुसार करना चाहिए।
- धुलाई के लिये उपयोग किये जाने वाले जल का तापमान 110° फ० होना चाहिए। अंडों को 3 मिनट से अधिक नही धोना चाहिए।

2. **ताप स्थिरीकरण** : अंडों का अधिक समय तक भण्डारीकरण करने हेतु इस विधि का उपयोग किया जाता है। इस विधि में अंडों को गर्म जल में डुबोया जाता है, जिससे अंडें के खोल के ठीक नीचे स्थित सफेदी का स्कंदन हो जाता है तथा अंडे के भीतरी अवयव सुरक्षित हो जाते है। इस विधि से कमरे के तापमान पर अण्डों को 3–4 सप्ताह तक भण्डारित किया जा सकता है। अंडों के तापस्थिरीकरण करने हेतु नीचे दिये गये किसी एक तापमान तथा अवधि का उपयोग किया जा सकता है :

| **जल का तापमान** | **अंडें डुबाने की अवधि** |
|---|---|
| 130° फ० | 15 मिनट |
| 142° फ० | 2 मिनट |
| 212° फ० | 5 सेकन्ड |

चूँकि इस विधि में ताप एवं अवधि नियंत्रण बहुत आवश्यक है जिसके लिए ताप को नियत्रित करने वाले महंगे उपकरण की आवश्यक्ता होती है। अतः यह विधि अधिक प्रचलन में नही है।

3. **शीत भण्डारण** : कम समय के लिए अंडों का भण्डारण 4° से० एवं 60–70 प्रतिशत आद्रता पर 2–3 सप्ताह तक किया जा सकता है। लम्बी अवधि के भण्डारण के लिये 85–90 प्रतिशत अपेक्षिक आर्दता पर -1.1° से० का तापमान पर्याप्त होता है।

4. **चूने का पानी** : चूने के पानी का संतृप्त विलयन बनाने के लिए बुझे चूने को ठंडे पानी में मिलाया जाता हे। अंडों को 14–16 घण्टे के लिए इस विलयन में डुबोया जाता है। चूने के पानी से उपचारित अंडों को 3–4 सप्ताह तक कमरे के तापमान पर भण्डारित किया जा सकता है।

5. **तेल द्वारा उपचार** : इसके लिये 15– 30° फ० तापमान पर हल्के, रंगहीन, गन्धहीन खनिज तेल का अण्डों पर छिड़काव किया जाता है या अण्डों को उसमें डुबोया जाता है। ऐसा करने से अण्डे के कवच के छिद्र बन्द हो जाते हैं तथा अण्डों से

आद्रता एवं कार्बनडाइऑक्साईड को निकलने से रोका जा सकता हे। तेलोपचारित अंडों को 3 सप्ताह तक कमरे के तापमान पर भण्डारित किया जा सकता है।

**विपणन**

अंडे एवं मुर्गीयों का विपणन, फार्म का सबसे अंतिम एवं प्रमुख कार्य है। विपणन का अर्थ केवल अंडे एवं मुर्गीयाँ बेचने ही नहीं बल्कि उत्तम किस्म के अंडे व चिकेन पैदा करना और बिक्री से पहले इनकी गुणवत्ता बनाये रखना है। अंडे एक जल्दी खराब होने वाली चीज है इसलिय इसमें अधिक सावधानी की जरूरत होती है। अतः मुर्गी पालकों को अंडे व चिकेन के गुणवत्ता, बिक्री होने तक उनकी पौष्टिकता तथा इनके रख–रखाव के बारे में पूरा ज्ञान तथा ठीक प्रकार से बिक्री करने की पुरीं जानकारी होना जरूरी है।

**अंडे का विपणन**

**अंडे की गुणवत्ता :** अंडे में वे सारे आवश्यकता तत्व है जो चूजो के बनने के लिए जरूरी है। अंडे प्रकृति द्वारा दिया हुआ एक बहुत ही उत्तम एवं संतुलित आहार है, यह प्रोटीन तथा लगभग सारे विटामिन्स से युक्त है। इसके अलावा इसमें सारे खनीज होते हैं, यह सरलता से पच जाता है।

**खुराक में अंडे का महत्व :** अंडा आसानी से पचने वाला एवं प्रोटीन से भरपूर होता है इसमे काफी मात्रा में आयरण होते है जो दुसरे खाद्यान्नों में कम पाए जाते है दूध में आयरण बहुत कम मात्रा में होता है। आयरण खून बढ़ाने के लिए बहुत जरुरी है। गर्भवती महिलाओं में आयरण की कमी होती है जो अण्डा पूरी कर सकते है। इसलिए छोटे बच्चों की बढ़ोतरी के लिए अंडा में उत्तम किस्म की प्रोटीन होने के कारण यह उनके लिए बहुत अच्छा है। एक अंडा रोज खाने से शरीर के लिए सारे पौष्टिक तत्व मिल जाता है।

**अंडा खाने का तरीका :** कच्चे अंडे कभी नहीं खाना चाहिए, क्योंकि कच्चे अंडे में इसके प्रोटीन सरलता से नहीं पच पाते। इसमे कई जीवाणु भी हो सकते हैं जिनसे शरीर को नुकसान हो सकता है। इसलिये अंडा पूरा या आधा उबाल कर, ऑमलेट या भुंजिया आदि बनाकर ही खाना चाहिए। पूरा उबालने का मतलब है 5 से 6 मिनट तक में उबालने, आधा उबालने का मतलब है 2–3 मिनट तक पानी में उबालना।

**अंडे की बनावट :** अंडा में तीन दिखाई देने वाले प्रमुख हिस्सा होते है – पहला अंडे का बाहर का छिलका 11 प्रतिशत, दूसरा अंडे की सफेद 59 प्रतिशत, तीसरा योक 30 प्रतिशत, पूरे अंडे में खुराक की प्रतिशत मात्रा पानी 65.5 प्रतिशत, वसा 10.8 प्रतिशत, खनिज 10.9 प्रतिशत, प्रोटीन 12.8 प्रतिशत होता है।

जब मुर्गी अंडा देती है तो वह प्रथम श्रेणी का किटाणुरहित आहार होता है पर यदि इसकी ठीक तरह से देखभाल न की जाय तो इसकी पौष्टिकता में कमी आना शुरू हो जाती है। अच्छी गुणवत्ता वाला अंडा तोड़ने पर उसका योक या पीली गोली बीच में होती है तथा उसके चारो ओर सफेद गाढ़ी व ज्यादा दूर तक नही फैलती। ठीक प्रकार से न रखने पर अंडे की पौष्टिकता में कमी आ जाती है तथा सफेदी पतली पानी की तरह हो जाती है। पुराना अंडा तोड़ने पर पीली गोली फैली हुई तथा सफेदी पानी की तरह फैल जाएगी।

अंडों की गुणवत्ता पर जिन चीजो का असर पड़ता है वे है (क) ब्रीडिंग (ख) दाना या आहार (ग) बीमारियाँ (घ) वातावरण आदि। दाना या आहार गुणवत्ता वाले अण्डे पैदा करने में प्रमुख भूमिका निभाता है, कैल्सियम और विटामिन 'डी' से छिलके पर असर पड़ता है। पीले तत्व वाला आहार योक के रंग को प्रभावित करता है स हरा चारा अंडे की सफेदी को सुदृढ़ रखता है। वातावारण भी अंडे की गुणवत्ता को प्रभावित करता है।

**अंडे रखने में सावधानियाँ :** जब मुर्गी अंडा देती है तो वह बहुत गुणवत्ता वाला होता है परन्तु धीरे–धीरे इसके गुणवत्ता में

खास कर गर्मी के मौसम में कमी आनी शुरु हो जाती है इस खराबी को रोकने का लिए निम्न बातो का ध्यान जरुरी है –

1. अंडे को निरंतर उठाते रहें।
2. अंडे को ठंढी जगह पर रखे।
3. उचित सफाई व स्टोरेज का सही प्रबंध।
4. अंडो का सही उपचार, उचित पैकिंग व निरंतर विपणन।

**अंडे का निरंतर उठाना :** अंडे को नेस्ट से दिन में कम से कम चार बार उठाये जैसे 9 बजे, 11 बजे, 2 बजे, तथा 5 बजे से निरंतर अंडे उठाते रहने से उनमे टूट फूट कम होगी, गंदगी कम होगी, और उन्हें जल्दी ठंडा कर सकेंगे।

**अंडे की टूट–फूट कैसे रोकें :**

1. मुर्गियों को अंडे देने के लिए पूरी जगह दें। एक वर्ग फीट जगह 5–6 मुर्गियों को अंडे देने की लिए काफी है। जगह की कमी से कुछ मुर्गियाँ अंडे बिछावन पर ही देगी नेस्ट को ठीक जगह लगाये स इनमे धुप नहीं जानी चाहिए अन्यथा विशेष कर गर्मी के मौसम में अन्दर से बहुत ही गर्म हो जाती और इससे अंडा जल्दी खराब होंगा।
2. इन नेस्ट में 1 से 2 ईंच बिछाबन हो ताकि अण्डे कम टूटे।
3. अंडे निरंतर समय पर सावधानी के साथ उठाये स इन्हें टोकरी में एकत्र करना चाहिए या फिर सीधे फिलारफ्लैट्स में इकट्ठा करें अंहिस्ता–अंहिस्ता टोकरी में रखें, बाल्टी या टोकरी आदि की तली में कोई पेड़ आदि रख लें। अच्छा होगा अंडे उठाने के लिए तारों वाली बाल्टी रखी जाय।

**अंडे का स्टोर करना :** इकट्ठा करने के बाद बेचे जाने तक अण्डो को किसी ठंडे स्टोर में रखना जरूरी है। इन्हें धुप, बरसात आदि से भी बचाना चाहिए। इनके स्टोरेज के लिए तापमान 12.5 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान सबसे उत्तम होता है।

**अंडो को साफ करना :** गंदे अंडे को बेचने से पहले साफ कर दें थोड़े गंदे अंडे को तो बफर ब्रश से साफ किया जा सकता है, पर ज्यादा गंदे अंडे को गर्म पानी से साफ करें (37.7 डिग्री से० से 43.3 डिग्री से०) जिसमे कुछ डिटर्जेंट एवं जर्मिसायिड मिला हो।

**विपणन या बेचना :** अंडों का विपणन गर्मियों में सप्ताह में कम से कम दो बार और सर्दियों में एक बार कर देना चाहिए, इससे ज्यादा रखने पर इसकी गुणवत्ता में कमी आ जाएगी। फार्म पर बिना जीव वाले (अन फर्टिलाइज) अण्डे पैदा करें, मुर्गा को कभी मुर्गियों के साथ नहीं रखना चाहिए। कुछ लोग समझते है की मुर्गा साथ रखने से अंडा की पैदावार बढ़ती है, यह बिल्कुल गलत है अंडा देना मुर्गी का प्राकृतिक नियम है। फार्म पर मुर्गियों के साथ मुर्गे छोड़ने पर पैदा होने वाले अंडे परजीवी (फर्टिलाइज अंडे) कहलाते हैं जिसमे दो से तीन दिन के अन्दर चूजा बनना शुरू हो जाते है और खाने की दृष्टी से खराब हो जाते है। इससे फार्म को नुकसान होता है मुर्गे केवल उस फार्म में ही रखने जरूरी होता है जहा ब्रीडिंग की जाती है।

**संक्षेप में :** अंडो के सही स्टोरेज व विपणन करने के लिये निम्न बातो का ध्यान जरुरी है –

1. रोज कम से कम 4 बार अंडे जमा किया जाये।
2. अंडे देने के लिए पर्याप्त नेस्ट हों जिससे अंडो की टूट–फुट कम हो।
3. अंडो को फिलर फ्लैट्स में रखें और इनका बड़ा हिस्सा ऊपर रखें।
4. अंडो को ठंडी जगह (10–12 डिग्री से०) में रखें और धुप व वर्षा से बचायें।
5. फार्म में बिना जीव के यानि शाकाहारी (अन फर्टिलाइज) अण्डे ही पैदा करें।
6. अंडे गर्मी में 2–3 दिन के अंदर और सर्दीयों में सप्ताह में एक दिन अवश्य बक्री कर दे।

○○○○

# कृषि विज्ञान केन्द्र

केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि चावल अनुसंधान केन्द्र, हजारीबाग
(भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक, उड़ीसा)
जयनगर – 825109, कोडरमा (झारखण्ड)